जिनवर स्तवन

ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्'

प्रथम नवीन संस्करण : 5,000 प्रतियाँ
(श्री वीर निर्वाणोत्सव, कार्तिक कृष्ण अमावस्या
दिनांक 4 नवम्बर 2021 पर प्रकाशित)

सहयोगी :

1. श्रीमती चन्द्रकान्ता जैन, तालवेहट, ललितपुर
2. श्री पदम कुमार जी पहाड़िया, इन्दौर
3. श्री सुनील जैन, दिल्ली
4. श्री महावीर कुमार शाह, अहमदाबाद
5. श्रीमती कामनी जैन, ध.प. श्री आशीष जैन, इन्दौर
6. श्री राकेश जैन सर्राफ, मेहगांव
7. कु. अंकिता, दृशि जैन, जबलपुर
8. ब्र. राहुल भैया जी, रानीपुर
9. श्रीमती अनिता जैन, जसवंतनगर
10. श्री मदनलाल नितिन कुमार जैन, भोपाल
11. श्री नरोत्तम दास, चैतन्य प्रकाश, अभय कुमार जैन, खड़ेरी
12. चि. प्रशम जैन, अमायन की आठवी वर्षगांठ के उपलक्ष्य में

प्रकाशक :

श्री वर्द्धमान न्यास

(पब्लिक चेरिटेबल ट्रस्ट)

अमायन, भिण्ड (म.प्र.)-477227

मो. : 09826225580

न्योछावर : 40/- रुपये

Jinvar Stavan
by Br. Ravindraji "Aatman"
Price : ` 40.00

प्रकाशकीय

'जिनवर स्तवन' के जो भाव होते हैं, वे कषायों की मंदता सहित ही होते हैं इसलिये वे विशुद्ध परिणाम हैं, समस्त कषाय मिटाने के साधन हैं इसलिये शुद्ध परिणाम के कारण हैं। अरहंतादि के आकार का अवलोकन करना या स्वरूप का विचार करना या वचन सुनना या निकटवर्ती होना या उनके अनुसार प्रवर्तन करना- इत्यादि कार्य तत्काल ही निमित्तभूत होकर रागादि को हीन करते हैं, जीव-अजीवादि के विशेष ज्ञान को उत्पन्न करते हैं इसलिये ऐसे भी अरहंतादि द्वारा वीतराग-विशेष ज्ञान रूप प्रयोजन की सिद्धि होती है -ऐसा आचार्यकल्प पण्डित टोडरमल जी ने लिखा है।

स्वरूप का चिंतवन करना भाव भक्ति है, नमस्कार आदि द्रव्य भक्ति है। भक्ति" भक्त से भगवान होने का प्रथम सोपान है।" भेदज्ञान पूर्वक बहुमान होना ही सच्ची भक्ति है। भविजन को निज अनुभूति हेत...। जैसे वैद्य रोग के अभाव में निमित्त होता है वैसे ही वीतरागी, राग के अभाव में निमित्त हैं इन्हें कामनाओं की पूर्ति में निमित्त न बनायें। कामनाओं का अभाव होना ही भक्ति का सच्चा फल है। सच्ची भक्ति ज्ञानी के ही होती है।

भक्ति में पुण्य होता है लेकिन पुण्य के लिये भक्ति नहीं होती। भक्ति गुण चिंतन का बहाना है जिसके माध्यम से भक्त अपनी भावना व्यक्त करता है। दुख दूर करने का सरल उपाय है। जिसके प्रति भक्ति होती है उसके ही वचनों का आदर व विचार होता है।

अरहंत भक्ति व सम्यक् दर्शन में नाम भेद है -ऐसा पण्डित सदासुखदास जी ने कहा है।

झूठी करनी आचरै, झूठे सुख की आस।
झूठी भक्ति हियै धरै, झूठे प्रभु को दास।।

-पण्डित बनारसीदास जी

आदरणीय ब्र. रवीन्द्रजी 'आत्मन्' द्वारा अध्यात्म रस से भरपूर सहज सरल भाव जिनभक्ति के माध्यम से मुखरित हुए। साहित्य की कठिन शब्दावली से परे हम सबके लिए श्री जिन के गुणगान का साधन बन गई।

यहाँ प्रदर्शन के लिए तो स्थान ही नहीं अपितु स्वानुभूति में ये भक्तियाँ निमित्त बनें, इसी भावना से यह संकलन प्रस्तुत है।

सभी सहयोगियों के हम हृदय से आभारी हैं।

अखिल जैन

मंत्री, श्री वर्द्धमान न्यास, अमायन (भिण्ड) म.प्र.

अहो भाग्य!

अहो भाग्य रवि उदित हुआ, जबसे जिनराज स्वरूप लखा।
अन्तर्मुख जिन मुद्रा लखकर, अन्तर में निज निधि को निरखा।।

भारतीय साहित्य गगन में भक्तिकाल का अपना विशिष्ट स्थान है। एक ओर अन्य कवियों ने पालनहारे ईश्वर के अनेक रूपों की कल्पना करके दास्यभाव, सख्यभाव, दाम्पत्य भाव आदि पराश्रित भावों को भक्ति रस में घोलकर इन्द्रिय सुख की कामना युक्त रचनायें की; तो दूसरी ओर जैन कवियों ने 'दीन भयो प्रभु पद जपे मुकति कहाँ तें होय' जैसी सिद्धान्त गर्भित रचनायें देकर अकर्तृत्व भाव गर्भित निष्काम भक्ति गंगा प्रवाहित की है।

आद्य स्तुतिकार आचार्य समन्तभद्र की न्याय गर्भित अध्यात्म रस भरी कालजयी रचनायें आत्मार्थी साधकों के लिए शाश्वत आदर्श हैं। यद्यपि तत्त्वज्ञान के अभाव और प्रचलित मान्यताओं के प्रभाव से जैन भक्ति सहित्य में भी व्यवहार के नाम पर दीनता, वाञ्छा एवं कर्तृत्व का विष घुलने लगा, तथापि समाज का महान सौभाग्य है कि तत्त्वज्ञान के प्रभाव से अनेक विद्वत्-रत्नों ने निश्चय-व्यवहार की सन्धि पूर्वक भाव-प्रधान भक्ति गीतों की रचना करके स्वस्थ भक्ति-परम्परा को पुनर्जीवित करके भारतीय भक्ति सहित्य को अमर अध्यायों से समृद्ध कर दिया है।

माननीय बाल ब्र. रवीन्द्र जी 'आत्मन्' का उक्त महान कार्य में चिर-स्मरणीय योगदान है। न केवल भक्तिपद अपितु पूजन, विधानों को भी आगम-अध्यात्म की सौरभ से सुरभित करने वाली उनकी रचनाएँ और उनका साधक जीवन हम सबके लिए प्रकाश स्तम्भ है।

प्रस्तुत संकलन में समागत भक्तिगीत भी उनके सन्तुलित आध्यात्मिक चिन्तन से जन्मे हैं, जो युगों-युगों तक आगामी पीढ़ी को भी सच्ची भक्ति प्रगट करने की राह दिखाते रहेंगे, इसी मंगल कामना सहित-इत्यलम्।

-पं. अभयकुमार शास्त्री, देवलाली

विषय-सूची

क्र.	नाम	पृ. संख्या	क्र.	नाम	पृ. संख्या
1	मंगल-प्रभात	9	39	जिनराज चरण सुखकारी	34
2	है ज्ञान सूर्य का उदय जहाँ	9	40	वीतराग सर्वज्ञ प्रभु की	35
3	हुआ सबेरा-अब उठ जाओ	10	41	दर्शन करते सुमति जगी	35
4	प्रातःकाल हुआ सुखकारी	10	42	हे स्वयं सिद्ध निर्दोष प्रभो	36
5	भक्ति से जिनवर के दर्शन करेंगे	11	43	भगवान भगवान भगवान हो	36
6	जिनदर्शन मंगलमय	11	44	प्रभु भक्ति आनंदमय	37
7	द्रव्य नमन हो भाव नमन	12	45	दर्शन पाये श्री जिनराज	37
8	सुखमय जीवन के आधार	13	46	आनंद से हृदय भरे	38
9	वन्दों पंच परम परमेष्ठी	13	47	जन्म सफल हो प्रभु दर्शन से	39
10	पंच परमेष्ठी साँचे	14	48	अहो जिनराज मेरे ज्ञान में हैं आये	39
11	जयवंतो अरहंत प्रभो!	15	49	जिन भक्ति अमृतमयी	40
12	पंच परम प्रभु शरण हमारे	16	50	हे वीतराग सर्वज्ञ प्रभो	41
13	जिनराज हैं मंगलमय	16	51	जिनवर की परमार्थ भक्ति	41
14	आया अवसर भव्य समझ लो	17	52	भक्ति से हृदय भरा	42
15	धन्य-धन्य हो प्रभो आप	17	53	नाथ तेरी वीतराग छवि	43
16	जिनवर का पंथ है मंगलमय	18	54	नाम ग्रहण भी श्री जिनवर का	44
17	श्री जिनवर का मंगल शासन	19	55	आओ हम सब प्रभु	44
18	श्री जिनवर की सम्यक् भक्ति	20	56	घड़ी जिनराज दर्शन की	45
19	अहो जिनेश्वर साँचे ईश्वर	21	57	ऐसा ही प्रभु मैं भी हूँ	45
20	अहो विदेहीनाथ का दर्शन	21	58	कैसा अद्‌भुत शांत स्वरूप	46
21	अहो जिनेश्वर दर्शन करते	22	59	कैसी सुन्दर जिनप्रतिमा है	47
22	जिन मुद्रा शाश्वत सुखकारी	22	60	नाथ तुम्हारे दर्शन से	48
23	दर्शन पाकर जिनराज	23	61	अद्‌भुत प्रभुता आज निहारी	48
24	वीतरागी प्रभो देखो	24	62	लखी-लखी प्रभु वीतराग छवि	49
25	वीतरागी सर्वज्ञ जिनेश्वर	25	63	आज अद्‌भुत छवि निज निहारी	50
26	महाभाग्य जिनदर्शन पाया	25	64	श्री जिनवर की सम्यक् भक्ति	50
27	शिखर पर भले विराजे हैं	26	65	शुभ काललब्धि जागी	51
28	दर्शन मंगलकार, जय-जयकार	27	66	धन्य घड़ी मैं दर्शन पाया	52
29	छूटें मिथ्या पापारम्भ	27	67	जय-जय जिनवर जय-जय	53
30	मेरे प्रभुवर वीतराग हैं	28	68	तीन भुवन के स्वामी मेरे	53
31	क्षण-क्षण दर्शन हो जिन	29	69	है यही भावना हे स्वामिन्	54
32	करो हे भव्य जिनदर्शन	30	70	देवों के देव श्री जिनदेव	55
33	दर्शन पाये जिनवर के	30	71	प्रभु वीतरराग मुद्रा तेरी	56
34	हे वीतराग जिनराज	31	72	प्रभुवर! अन्तर्मुख हो जाऊँ	56
35	देखो-देखो प्रभु को देखो	31	73	अद्‌भुत प्रभुता वाले हैं	57
36	अहो जिनेश्वर! दर्शन तेरा	32	74	जिनवर की जय बोल	57
37	महाभाग्य पाये जिनराज	32	75	जिनरूप प्रत्यक्ष दिखाय रहो रे	58
38	भक्ति से जिनराज दर्शन को आये	33	76	अहो! अहो! जिननाथ	58

77 प्रभु की अद्‌भुत छवि निरखो 59
78 मन भायो महावीर 60
79 प्रभु की हो रही जय-जयकार 61
80 आओ प्रभु की शरण में आओ 62
81 ज्ञानानंद बरसाय नाथ 63
82 जिनवर के दर्शन को आयेंगे 63
83 ज्ञानमयी-ज्ञानमयी, ज्ञानमयी 64
84 कर लो प्रभु गुणगान जी 65
85 अवसर है सुखकार 65
86 शांतिमयी शांतिमयी मूरति 66
87 धन्य-धन्य वीतराग देव 67
88 अहो! प्रभु ध्यान की मुद्रा 67
89 लखकर मूरति जिनवर की 68
90 जिनदर्शन सुखकार जय-जयकार 68
91 अहो! जिनेश्वर हमें आपका 69
92 धन्य दिन धन्य घड़ी 70
93 चिदानंद चिद्रूप अहो 70
94 प्रभु दर्शन कर चाह जगी 71
95 मेरी परिणति में आनंद अपार 72
96 अहो! भगवन्त का दर्शन 72
97 मैं उस पथ का अनुगामी हूँ 73
98 प्रभुता प्रभु की मंगलकारी 74
99 आज हम जिनराज तुम्हारी 74
100 मंगल बेला आई रे 75
101 जिन गुण गाओ हर्षाओ 75
102 हे वीतराग भगवान 76
103 नाथ तेरी महिमा 76
104 तेरी साक्षी में अहो जिनराज 77
105 प्रभु आदर्श रहो 78
106 हे परमात्मन्! तुम साक्षी में 78
107 शुद्धभाव मय त्रिभुवन पूज्य 79
108 तेरे दर्शन को साँचो फल 80
109 अविकारी शुद्ध स्वरूप प्रभो 81
110 प्रभुवर दर्शन तेरा रे 81
111 जयति जिनवर जयति जिनवर 82
112 लख जिनरूप सहज सुख पायो 82
113 धनि जिनराज विराजे हैं 83
114 घड़ी जिनराज दर्शन की 84
115 शांत छवि निरखी 84
116 धन्य आपका दर्शन ज्ञान 85
117 प्रभुवर चरणों के प्रसाद से 86
118 धन्य-धन्य जिनराज का दर्शन 86
119 जय-जय वीतराग सर्वज्ञ हिंतकर 87
120 हो श्री जिनवर की पूजा 88
121 प्रभु दर्शन की मंगल बेला 89
122 धन्य-धन्य जिनरूप अहो 89
123 जय परमेश्वर-जय परमेश्वर 90
124 मंगल तीर्थ क्षेत्र में आये 90
125 जयवंत वर्ते, जयवंत वर्ते 91
126 अद्‌भुत छवि जिनराज की 92
127 धन्य घड़ी है, धन्य दिवस है 92
128 होवे प्रभुवर सहज जीवन 93
129 जिनवर सम्यक् पूजा रचाऊँ 94
130 जिनवर दर्शन का फल पाऊँ 94
131 मैंने प्रभुवर रूप निहारा 95
132 आज प्रभु दर्शन से 95
133 जिनराज भजें, जिनराज भजें 96
134 जिनमुद्रा से झरे परम रस 96
135 अन्तरयामी जिनराज 97
136 मैं तो मूरति निहारूँ जिननाथ की 98
137 हे प्रभु! तेरे चरण प्रसाद 98
138 हरष-हरष प्रभुवर गुण गाऊँ 99
139 रोम-रोम में बसा है जिनवर 99
140 मोहि भावे वीतराग प्रभु सार 100
141 जिनवर की भक्ति कर लो 100
142 आओ-आओ प्रभु गुण गायें 101
143 महिमा अद्‌भुत जिनराज लखी 102
144 जिनवर भक्ति करें भव्यजन 102
145 बड़ी भक्ति से पूजा करिये 103
146 भक्ति प्रभु की कर लो 104
147 हुआ सहज विश्वास 105
148 लगन जिन चरणों में लागी 105
149 जिनवर भक्ति रचाओ 106
150 अहो जिनरूप मनहारी 106
151 धन्य हुआ प्रभु दर्शन से 107
152 प्रभु की दिव्यध्वनि का सार 107
153 घड़ी धनि धन्य अहो जिनराज 108
154 हे अनंत चतुष्टयवंत! 109
155 जिनरूप मंगलमय 109
156 जिनवर दर्शन को आओ 110

157 आयेंगे हम आयेंगे 111
158 जिनवर भक्ति मंगलकार 111
159 जिनेश्वर के गुण गाओ रे 112
160 जिनचरणों में अब लगी लगन 113
161 श्रेष्ठतम जिनवर नमन करूँ 113
162 प्रभो! निर्वांछक रहूँ 114
163 आये प्रभुवर शरण तुम्हारी 115
164 जागा है पुण्य महान 115
165 अहो ज्ञान में ज्ञानमयी 116
166 ध्यानमय मूर्ति जिनवर की 116
167 अति अद्‌भुत प्रतिमा 117
168 देखो! ये देवों के देव 118
169 अहो! जिनराज दर्शन से 118
170 धन्य-धन्य वीतराग स्वामी 119
171 जिनवर आज मेरे हृदय में आये 119
172 कहे गये हैं सिद्धों के गुण 120
173 कर लो सिद्धों का गुणगान 120
174 निर्ग्रन्थ मार्ग अपनाया 121
175 वीतराग रूप देखा भवतापहारी 122
176 समवशरण मनहारी 123
177 समवशरण में अहो! 123
178 समवशरण जिनवर का देखो 124
179 शोभे समवशरण सुखकार 125
180 बहु पुण्य उदय मम आयो 125
181 श्री चौबीस तीर्थंकर स्तवन 126
182 आदीश्वर स्वामी तुम ही शरण 132
183 धन्य-धन्य आदीश्वर की समता 132
184 अहो! आदि स्वामी 133
185 आदीश्वर स्वामी वन्दूँ मैं 134
186 प्रभु आदीश्वर गुण गाऊँ 135
187 हे ऋषभ जिनेश्वर! 136
188 हे आदीश्वर भगवान 136
189 जय-जय आदीश्वर भगवान 137
190 आज प्रभु ऋषभदेव तप धारा 137
191 जय-जय अजितनाथ भगवान 138
192 प्रभु अजितनाथ हो मोह जयी 139
193 अजित जिनेश्वर साँचे ईश्वर 139
194 ज्ञानमात्र प्रभु हूँ यह श्रद्धा 140
195 अभिनंदन स्वामी यही भावना 141
196 जिस मति का विषय स्वतत्त्व 141
197 अहो प्रभु पद्म की मूरति 142
198 जय-जय प्रद्मप्रभ भगवान 143
199 पद्मप्रभो का मंगल विहार 143
200 जय-जय पद्मप्रभ जिनराज 144
201 भगवन सुपार्श्व प्रभुता 145
202 अमृत झरे चन्द्र से त्यों ही 145
203 अशरण जग में चन्द्रनाथ 146
204 नमूँ श्री चन्द्रप्रभ भगवान 146
205 नमों नमों आनंद सहित 147
206 हे पुष्पदंत भगवन्त 148
207 मुक्ति की युक्ति निज में ही 148
208 शीतलता का स्रोत आत्मा 149
209 भक्तिभाव से शीतल जिन को 149
210 यह श्रेय आपको ही स्वामी 150
211 हे बाल ब्रह्मचारी 151
212 हे विमलनाथ लख 151
213 महाभाग्य से दर्शन पाया 152
214 हे धर्मनाथ! महिमा महान 153
215 प्रभु शांति छवि तेरी 154
216 हे शांतिनाथ भगवान 155
217 जय-जय शांतिनाथ भगवान मेरे 155
218 जय-जय शांतिनाथ भगवान परम 156
219 शांतिनाथ भगवान! मैं भी 157
220 प्रभु शांतिनाथ के अहो 157
221 आओ-आओ शांतिनाथ मेरे 158
222 परम शांति पाई अहो... 159
223 शांति जिनेश्वर दर्शन मंगलकारी 159
224 मात्र पूरें ही नहीं 160
225 छोड़ विभूति चक्रवर्ती की 161
226 हे शांति- कुंथु-अरनाथ 161
227 हे मल्लि जिनवर हो जितेन्द्रिय 162
228 हे मुनिसुव्रत प्रभु हो सुव्रत 163
229 जय स्याद्वाद के नायक हो 164
230 परम प्रभुता निहारी नेमिप्रभु 164
231 हे नेमिनाथ जिनराज वंदना तेरी 165
232 नेमिनाथ के दर्शन पाय 166
233 ब्रह्ममय परिणति के हो धारक 166
234 अहो नेमि स्वामी त्रिभुवन नामी 167
235 पारस प्रभु की भक्ति कर लो 168
236 पारस प्रभु की छवि सुखकारी 168

237 भविजन पार्श्वप्रभु की मूरति 169
238 पार्श्वप्रभु का यह उपदेश 170
239 सहज सम्यक्त्व दरशाते 171
240 देखो मूरति पारस की 172
241 पारसनाथ, पारसनाथ दर्शन 172
242 पारस नाम है मंगलकारी 173
243 देखे पार्श्वनाथ जिनराज 173
244 पार्श्वप्रभु की भक्ति कर लो 174
245 परमानंदमय पारसनाथ 174
246 पारसप्रभो! हे पारस प्रभो 175
247 जय-जय बोलो सब ही मिलकर 175
248 हे पारस स्वामी तुम ही 176
249 देखो पारसप्रभु की महिमा 177
250 हे पारस स्वामी शरण तिहारी 177
251 पार्श्वप्रभो हैं मंगलकारी 178
252 हे पार्श्व जिनेश्वर 178
253 जय पारस परमात्मा 179
254 जिनमंदिर में आओ रे 180
255 हे पार्श्वनाथ! हे पार्श्वनाथ 181
256 धन्य दिवस है पार्श्वनाथ का 181
257 पार्श्वप्रभु निर्वाण गये 182
258 मन को ही मंदिर बनायेंगे 183
259 पारस प्रभु का मंगल विहार 183
260 पारसनाथ पधारो मेरे अंतर में 184
261 पारस प्रभुवर परम उपकारी 185
262 पार्श्वप्रभो तब दर्शन से 185
263 जय बोलो पारस स्वामी की 186
264 हे पार्श्वनाथ भगवन् चरणों में 187
265 हे पारस स्वामी! 187
266 गूँजे जय जयकार वीर 188
267 चित्स्वरूप महावीर तुम्हीं ने 189
268 हे वीरनाथ! हे वीरनाथ! 190
269 हे वीरनाथ ! तुम दर्शन कर 190
270 वीर जिनेश्वर! अब तो मुझको 191
271 वीरनाथ का मंगल शासन 192
272 अहिंसा धर्म सिखलाने प्रभु.. 193
273 महावीर विराजो हृदय में 194
274 महावीर की जय बोल 195
275 श्री वर्द्धमान जयवंत रहो 195
276 दीपक सम्यक् ज्ञान उजारो 196
277 महावीर का मोक्ष कल्याण 196
278 श्री महावीर श्री महावीर 197
279 श्री वीर का शासन मंगलमय 197
280 ज्ञान दीप अविकारी 198
281 वर्द्धमान जिनराज जी 199
282 धन्य-धन्य वीरनाथ 199
283 हे वीर वंदना करते हैं 200
284 मुक्त हुए हैं वीर जिनेश्वर 201
285 मोक्ष पधारे श्री महावीर 202
286 वीर की दिव्यध्वनि सुखकर 202
287 रहे जयवंत मंगलमय 203
288 जय-जय महावीर दर्श 204
289 वीरनाथ का दर्शन करते 205
290 दर्शन वीरनाथ का पाकर 206
291 नाम ग्रहण भी श्री जिनवर का 207
292 सिद्धालय में वीर विराजे 207
293 प्रभुवर का निर्वाण दिवस 208
294 गौतम गणधर केवलज्ञान 209
295 गौतम स्वामी मैं नमन करूँ 210
296 पुरुषार्थ हो गौतम स्वामी सा 210
297 गौतम स्वामी की जय बोलें 211
298 शुभ दर्शन पाया अहो.. 212
299 सीमंधर स्वामी निज .. 212
300 सीमंधर स्वामी हो आदर्श हमारे 213
301 सीमंधर स्वामी अद्‌भुत छवि.. 213
302 निज सीमा में रहते प्रभु तुम 214
303 हे सीमधंर भगवान शरण.. 214
304 अहो विदेहीनाथ! दर्श कर 216
305 सींमधर स्वामी, आए शरण 216
306 वैदेहीनाथ सीमंधर 217
307 प्रभु बाहुबली ऐसा बल हो 217
308 बाहुबली के दर्शन पाय 218
309 बाहुबली के दर्शन करके 219
310 धन्य-धन्य बाहुबली स्वामी 219
311 बाहुबलि स्वामी, महिमा... 220
312 महापद्मादि भावि तीर्थंकर 221
313 धन्य-धन्य जिनधर्म हमारो 221
314 आज का दिवस है मंगलकारी 222
315 जिनशासनाष्टक 222

(1)

मंगल-प्रभात

मंगल प्रभात मंगल प्रभात, मेरे भी जीवन में हो सुप्रभात ।।टेक।।

मोह अंधेरा दूर भगे प्रभु, ज्ञान भानु का होय प्रकाश।।
देव-धर्म-गुरु सम्यक् जानूँ, तत्त्वों का होवे विश्वास।। 1 ।।

भेदज्ञान अंतर में वर्ते, स्वानुभूति हो मंगलकार।
भाव विशुद्धि बढ़ती जावे, सहजपने हो तत्त्व विचार।। 2 ।।

क्षण-क्षण घटें कषायें हमारी, दूर होंय सब पापाचार।
दृढ़ संयम प्रगटावें स्वामी, कभी नहीं हो शिथिलाचार।। 3 ।।

आत्मध्यान आनंदमय होवे, कर्म नशावें हे जिनराज।
भक्तिभाव से शीश नवावें, सफल होंय मेरे सब काज।। 4 ।।

(2)

है ज्ञान सूर्य का उदय जहाँ, मंगल-प्रभात कहलाता है।
मिथ्यात्व महातम हो विनष्ट, सम्यक्त्व कमल विकसाता है।।1 ।।

वस्तु का रूप यथार्थ दिखे, नहिं इष्ट-अनिष्ट दिखाता है।
है भिन्न चतुष्टयवान द्रव्य, पर लक्ष्य नहीं हो पाता है ।। 2 ।।

अतएव विकारी भाव रहित, निज सुख अनुभूति होती है।
फिर स्वयं तृप्त उस ज्ञानी के, इच्छा पिशाचनी भगती है।। 3 ।।

तत्क्षण संवरमय भावों से नवबंध पद्धति रुकती है।
झड़ते हैं स्वयं कर्म बंधन, शिव रमणी उसको वरती है ।।4 ।।

(3)

हुआ सबेरा अब उठ जाओ, पंच प्रभु का ध्यान लगाओ ।।टेक।।
तत्त्वों का चिंतन भी करना, भेदज्ञान हृदय में धरना।
लक्ष्य सुजीवन का दोहराओ, हुआ सबेरा अब उठ जाओ।।1।।
निज दोषों की निंदा करना, दृढ़ संकल्प पूर्वक तजना।
निर्मल निज परिणाम बनाओ, हुआ सबेरा अब उठ जाओ।।2।।
कर्म बन्ध भावों से होता, अरे! आलसी जीवन खोता।
मोहादिक दुर्भाव नशाओ, हुआ सबेरा अब उठ जाओ।।3।।
अन्य न कोई सुख-दुःख दाता, व्यर्थ मूढ़ भव में भरमाता।
निज में ही उपयोग लगाओ, हुआ सबेरा अब उठ जाओ।।4।।
पर से कुछ भी नहीं सम्बन्ध, शुद्धातम है सदा अबन्ध।
आतम अनुभव अब प्रगटाओ, हुआ सबेरा अब उठ जाओ।।5।।
रखना मन में नहीं कामना, भाना नित वैराग्य भावना।
निज शुद्धातम में रम जाओ, हुआ सबेरा अब उठ जाओ।।6।।
आतम ही परमातम समझो, व्यर्थ विकल्पों में मत उलझो।
खुद ही परमातम बन जाओ, हुआ सबेरा अब उठ जाओ।।7।।

(4)

प्रातःकाल हुआ सुखकारी, भाओ आत्म-भावना प्यारी।।टेक।।
पंचम भाव स्मरण कर लो, मैं ज्ञायक हूँ अनुभव कर लो।
मैं अनादि से ही मंगलमय, मरण-जन्म से रहो सु निर्भय।।
सहज अकर्त्ता नित अविकारी, भाओ आत्म-भावना प्यारी।।1।।
सब संसार असार दुःखमय, समयसार ही नित आनंदमय।

अनेकान्तमय वस्तु स्वरूप, शाश्वत धर्म अहिंसा रूप।।
सम्यक् समता ही हितकारी, भाओ आत्म-भावना प्यारी।।2।।
व्यर्थ मोह से जीव भ्रमावे, भेदज्ञान से शिवपद पावे।
ज्ञानाभ्यास करो रे भाई, और उपाय महा दुखदाई।।
रत्नत्रय ही मंगलकारी, भाओ आत्म-भावना प्यारी।। 3।।
ध्रुव परमेष्ठी जब ही ध्यावें, तब ही सुप्रभात कहलावे।
सब संकल्प-विकल्प विनाशे, सहज स्वाभाविक सुगुण प्रकाशे।।
त्रिजग पूज्य पद हो अविकारी, भाओ आत्म-भावना प्यारी।।4।।

(5)

भक्ति से जिनवर के दर्शन करेंगे, अपना प्रभु अपने में देखेंगे हम।
गुरुवर की उत्तम संगति करेंगे, अपना गुरु अपने में देखेंगे हम।।
जिनवाणी साँची माता हमारी, पढ़ेंगे और सबको पढ़ायेंगे हम।
परम पुरुष जो हुए अलौकिक, आदर्श उनको बनायेंगे हम।।
अन्तर्मुख होकर अनुभव करेंगे, अपने को आत्मा देखेंगे हम।
पर भावों से न्यारा सहज अकर्त्ता, अपने को ज्ञाता देखेंगे हम।।
जन्मते-मरते, मिलते-बिछुड़ते, देहादि को न्यारा देखेंगे हम।
मोहादि दुर्भाव दुःख के कारण, स्वाश्रय से इनको छोड़ेंगे हम।।
परमार्थ रत्नत्रय शिव सुख का कारण, अन्तर में स्वाश्रय से पायेंगे हम।
अवसर न चूकें पुरुषार्थ करके, मुक्तिपुरी को जायेंगे हम।।

(6) नवदेव-भक्ति

जिनदर्शन मंगलमय, जिनभक्ति मंगलमय।
जय हो, जय हो, जय हो, जय हो, जय हो, जय हो।। टेक।।
अरहंत हैं मंगलमय, श्री सिद्ध हैं मंगलमय।

आचार्य हैं मंगलमय, उपाध्याय हैं मंगलमय।। 1।।
जिन साधु मंगलमय, स्मरण है मंगलमय।
गुरु सेवा मंगलमय, गुरु संगति मंगलमय।। 2।।
जिनवाणी मंगलमय, जिनज्ञान है मंगलमय।
जिनबिम्ब हैं मंगलमय, जिनमंदिर मंगलमय।। 3।।
जिनधर्म है मंगलमय, रत्नत्रय मंगलमय।
सम्यक्त्व है मंगलमय, संयम है मंगलमय।। 4।।
जिनतीर्थ है मंगलमय, जिनपर्व है मंगलमय।
आराधना मंगलमय, प्रभावना मंगलमय।। 5।।

(7)

द्रव्य नमन हो भाव नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।
मन-वच-काया से करूँ नमन।। टेक।।
अरहंतों को करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।1।।
तीर्थ प्रणेता श्री तीर्थंकर, वीतराग सर्वज्ञ हितंकर।
सर्व कर्ममल से वर्जित प्रभु, ज्ञानशरीरी अशरीरी विभु।
सिद्ध प्रभु को करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।2।।
पंचाचार परायण ज्ञायक, साधु संघ के सुखमय नायक।
आचार्यों को करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।3।।
शास्त्र पढ़ाने के अधिकारी, तत्त्वज्ञान देते अविकारी।
उपाध्याय को करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।4।।
निज स्वभाव के उत्तम साधक, रत्नत्रय के जो हैं धारक।
निर्ग्रंथों को करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।5।।
समवशरण-सम श्री जिनमंदिर, जिन-सम जिनप्रतिमा है सुन्दर।

भक्ति भाव से करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।6।।
तरण-तारणी श्री जिनवाणी, पढ़ें-पढ़ावें नित ही ज्ञानी।
हर्षित होकर करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।7।।
अनेकांतमय शाश्वत दर्शन, परम अहिंसामयी आचरण।
जैनधर्म को करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।8।।
इनसे सम्बन्धित सुखकारी, धर्म आयतन मंगलकारी।
यथायोग्य मैं करूँ नमन, मन-वच-काया से करूँ नमन।।9।।

(8)

पंच-परमेष्ठी भक्ति

सुखमय जीवन के आधार, पंच परमेष्ठी मंगलकार।। टेक।।
चार घातिया कर्म विनाशे, श्री अरहंत प्रभो सुखकार।
आठों कर्म विनष्ट हुए हैं, त्रिभुवन तिलक सिद्ध अविकार।।1।।
जिन दीक्षा देते आचार्य, प्रायश्चित देते हितकार।।
पढ़े-पढ़ावें उपाध्याय गुरु, हित की शिक्षा दें अविकार।।2।।
शुद्धातम की करें साधना, रत्नत्रय निधि धरें अपार।
अहो-अहो! निर्ग्रंथ साधुजन, करें जगत का परमोपकार।।3।।
जिनकी भक्ति परम सुखदायी, विघ्न विनाशक सुख दातार।
सहज भाव से करें स्मरण, नमन करें नित आनंदकार।।4।।

(9)

(तर्ज: परम दिगम्बर मुनिवर आया)

वन्दों पंच परम परमेष्ठी शिवसुख के आधार हैं, साँचे तारणहार हैं।। टेक।।
गृहस्थपना तज साधु धर्म भज, निज स्वभाव साधन द्वारा।

नाशे घाति कर्म प्रगटायो अनन्त चतुष्टय अविकारा।।
वन्दों भाव सहित अरहंत पद, धर्म तीर्थ करतार हैं।। 1।।
सकल कर्म मल रहित हुए हैं, अशरीरी प्रभु सिद्ध महन्त।
ध्रुव अविचल अनुपम गति पाई, पूर्ण व्यक्त हैं सुगुण अनंत।।
ध्याने योग्य स्वरूप आपना, प्रगट दिखावनहार हैं।। 2।।
अहो अधिकता रत्नत्रय की , सकल संघ के नायक हैं।।
रहें मुख्यतः लीन स्वयं में, दीक्षा विधि विधायक हैं।।
पालें अरू पलवावें चारित्र, आचारज सुखकार हैं।। 3।।
ग्यारह अंग पूर्व चौदह के, ज्ञाता श्री उवझाय हैं।
अधिकारी हो पढ़ें-पढ़ावें, सबको ही सुखदाय हैं।।
धन्य-धन्य गुरु परम निस्पृही, ज्ञान ज्योति दातार हैं।। 4।।
इन पदवी बिन साधें निजपद, रहें परम निर्द्वन्द हैं।
विषयाशा आरंभ रहित जो, हुए सहज निर्ग्रंथ हैं।।
ज्ञान-ध्यान-तप लीन मुनीश्वर, करें भवोदधि पार हैं।। 5।।
ये ही साँचे पंच परमगुरु, अरहंत अरु सिद्ध देव हैं।
आचारज उवझाय साधुवर, मंगलमय गुरुदेव हैं।।
श्रद्धूँ पूजूँ ध्याऊँ निशदिन, शरणभूत शिवकार हैं।। 6।।

(10)

(तर्जः धन्य-धन्य आज घड़ी)

पंच परमेष्ठी साँचे सुख के आधार हैं।
दुखमय भव सागर से ये ही तारणहार हैं।। टेक।।
पाप सब नाशते जिनके स्मरण से,
पुण्य वृद्धिंगत हो जिनके चिन्तवन से।

मुक्ति के मारग के ये ही दातार हैं।। 1।।
विश्व पर तैरता शुद्धात्मा दिखा दिया,
शुद्ध रत्नत्रय सुखमय बता दिया।
निज ध्रुव आत्मा माँहि गुण के भंडार हैं।। 2।।
पर द्रव्य ज्ञेय हैं इष्ट या अनिष्ट ना,
पर भाव ज्ञेय हैं इसमें विकल्प ना।
वीतराग ज्ञान भाव तिहुँ जग में सार है।। 3।।
पाप के उदय में भी व्यर्थ ही भटकते,
पुण्य के उदय में भी व्यर्थ ही अटकते।
सुख का उपाय सुख-दुःख से पार है।। 4।।
तू भी परमेष्ठी ध्रुव अन्तर में देख ले,
तुझमें सर्वस्व तेरा प्रत्यक्ष देख ले।
स्वानुभवमय परमार्थ वन्दना हितकार है।। 5।।

(11)

(तर्ज : श्री अरिहंत सदा मंगलमय)

जयवंतो अरहंत प्रभो! अनंत चतुष्टयवंत अहो।
जयवंतो श्री सिद्ध प्रभो! गुण अनंतमय प्रगट अहो।। 1।।
जयवंतो आचार्य गुरु, संघ नायक आधार अहो।
जयवंतो उपाध्याय गुरु, शिक्षा दें सुखदाय अहो।। 2।।
जयवंतो श्री साधु गुरु, ज्ञान-ध्यान-तप लीन अहो।
विषय-कषायारम्भ रहित जो, रत्नत्रय दातार अहो।। 3।।
ये ही हैं आदर्श अहो! साधें निज शुद्धात्म अहो।
समता भाव सदा ही हो, भाव नमन अंतर में हो।। 4।।

(12)

पंच परम प्रभु शरण हमारे, भव सागर से तारण हारे।। टेक।।
मंगलमय नित मंगल कारण, सब संक्लेश निवारण हारे।
चिर से भ्रमित दुःखित जीवों को, मुक्तिमार्ग दरशावन हारे।। 1।।
भूल स्वयं को स्वयं दुःखी हो, मूल की भूल मिटावन हारे।
दर्पण में जड़रूप दिखे त्यों, प्रभु निज पद प्रगटावन हारे।। 2।।
अनेकांतमय वस्तु सभी हैं, स्याद्वाद से प्रभु विस्तारे।
धर्म अहिंसा परमानन्दमय, गूँजे जग में जय-जय कारे।। 3।।
हुए प्रबुद्ध परम-उपकारी, होवें अगणित नमन हमारे।
सहज मनोरथ सफल हुए हैं, अनुयायी हैं नाथ तुम्हारे।। 4।।

(13)

देव-शास्त्र-गुरु भक्ति

जिनराज हैं मंगलमय, मुनिराज हैं मंगलमय।
जय हो-जय हो-जय हो, जय हो-जय हो-जय हो।। टेक।।
सद्‌दर्शन मंगलमय, सद्‌ज्ञान है मंगलमय।
सद्‌चारित्र मंगलमय, रत्नत्रय मंगलमय।। 1।।
शुद्ध रत्नत्रय के धारक, निर्ग्रंथ साधु कहलाते हैं।
रत्नत्रय जब पूर्ण होय, जिनराज वही बन जाते हैं।। 2।।
आतमश्रद्धा सम्यग्दर्शन, आत्मज्ञान ही सम्यग्ज्ञान।
आत्मलीनता सम्यग्चारित्र, अहो एकता शिवपथ जान।। 3।।
ये तीनों आतम स्वभाव हैं, स्वाभाविक आनंदमय जान।
स्वाश्रय से ही सहज प्रगटते, करो भव्य उनकी पहिचान।। 4।।

यही धर्म है यही श्रेय है, यही प्रगट करने के योग्य।
सच्चे देव-शास्त्र-गुरुवर ही, निमित्तभूत भक्ति के योग्य।।5।।
करें स्मरण भक्ति भाव से, निशदिन शीश नवाते हैं।
जीवन ज्ञान-वैराग्यमयी हो, यही भावना भाते हैं ।।6।।

(14)

आया अवसर भव्य समझ लो, जिन-आगम का सार।
स्वानुभूति ही मंगलमय है, तिहुँ जग मंगलकार।।टेक।।
वीतराग-सर्वज्ञ देव ही, धर्म तीर्थ दातार।
गुरु निर्ग्रंथ परम हितकारी, धर्म अहिंसा सार।। 1।।
स्याद्वादमय श्री जिनवाणी, कहे तत्त्व अविकार।
मोहादिक हैं हेय बताये, वीतरागता सार।। 2।।
ज्ञानमात्र भी अनेकान्तमय, आतम तत्त्व विचार।
श्रद्धो-भाओ-ध्याओ भविजन, यही समय का सार।।3।।
चमत्कार चैतन्य प्रभु का, अद्‌भुत आनन्दकार।
स्वयं जानते सबको जानें, निर्विकल्प अविकार।।4।।

(15)

(तर्ज: वीतराग सर्वज्ञ हितंकर)

धन्य-धन्य हो प्रभो आप, निज में ही समाये रहते हो।
उपयोग नहीं पर में जाता, निज में ही तृप्त सु रहते हो।।टेक।।
पूजा भक्ति से हो प्रसन्न, नहीं कुछ वरदान सु देते हो।
निंदा-उपसर्ग करे कोई, हो रुष्ट श्राप नहीं देते हो।। 1।।
अद्‌भुत समता है प्रभो आपकी, निजानंद में पाग रहे।
कर्मादि विकार नष्ट हुये, परमातम माँहि विराज रहे।। 2।।

देवों ने समवशरण रचकर, अपना बहुमान दिखाया है।
मंगल अतिशय अरु प्रातिहार्य, जय-जय से गगन गुंजाया है।।3।।
प्रभु मानस्तंभ बने ऐसे, मानी के मान गलते हैं।
अद्भुत रचना सब राज रही, भवि देखें तृप्त सु होते हैं।।4।।
प्रभु अन्तरीक्ष में सौम्यदशा, उर में वैराग्य जगाती है।
अविनाशी आत्म विभूति से, जग वैभव तुच्छ दिखाती है।।5।।
वे मंगल तो उपचार मात्र, सच्चे मंगल प्रभु तुम ही हो।
वे अतिशय पुद्गलमय रचना, अतिशय स्वरूप विभु तुम ही हो।।6।।
जो लखे आपको द्रव्यदृष्टि से, निज प्रभुता लख पाता है।
अन्तर्दृष्टि उसकी होती, सम्यक् अतिशय प्रगटाता है।। 7।।
फिर त्वरित निजाश्रय से ही जिनवर वह भी तुम सम हो जाता है।
भव्यों को मुक्तिमार्ग दर्शाकर, सिद्धालय तिष्ठाता है।। 8।।

(16)

जिनवर का पंथ है मंगलमय, जिनवर का पंथ है आनन्दमय।।टेक।।
सम्यक्दर्शन है मंगलमय, सम्यक् ज्ञान परम मंगलमय।
सम्यक् चारित्र नित मंगलमय।। जिनवर.।। 1।।
देव-शास्त्र-गुरु की श्रद्धा धर, तत्त्वों का अभ्यास सदा कर।
साम्यभाव धारो मंगलमय।। जिनवर.।। 2।।
यथा शक्ति पुरुषार्थ जगाओ, धर्म तीर्थ प्रभुवर का पाओ।
तीर्थ वंदना हो आनन्दमय।। जिनवर.।। 3।।
सम्यक् शक्ति हृदय में जगती, भाव विशुद्धि तब ही बढ़ती।
प्रभु सम निजपद सहजानन्दमय।। जिनवर.।। 4।।

जग प्रपंच से दूर रहो तुम, आराधन में चित्त धरो तुम।
पद निर्ग्रंथ धरो हो निर्भय।। जिनवर.।। 5।।
भाओ आतम सदा ज्ञानमय, ध्याओ आतम परमानन्दमय।
पाओ शिवपद नित्यानंदमय।। जिनवर.।। 6।।

(17)

श्री जिनवर का मंगल शासन, सहजपने स्वीकार हमें।
श्री गुरुवर का शुभ अनुशासन,सहजपने स्वीकार हमें।। टेक।।
वस्तु स्वरूप समझना है, भेदज्ञान उर धरना है।
देहादिक से भिन्न शुद्ध, आतम का अनुभव करना है।।
रत्नत्रय ही सुख का साधन, सहजपने स्वीकार हमें।। 1।।
पर द्रव्यों का दोष नहीं है, दुख का कारण मोह सही है।
व्यर्थ भटकना है बाहर में, अपना सुख अपने में ही है।।
ज्ञानानन्दमयी निज आतम, सहजपने स्वीकार हमें।। 2।।
सर्व विकल्प अकिंचित्कर हैं, मूढ़ व्यर्थ बोझा ढोता है।
आर्तध्यान कितना ही कर लो, जो होना है वह होता है।।
वस्तु का स्वाधीन परिणमन, सहजपने स्वीकार हमें।।3।।
हो सम्यक् पुरुषार्थ जीव का, कारण सर्व सहज मिलते।
भायें सम्यक् तत्त्व भावना, सुगुण प्रसून सभी खिलते ।।
उदासीनता ही आनंदमय, सहजपने स्वीकार हमें।। 4।।
वीतरागता श्री जिनवर की, अब आदर्श हमारा है।
अहो-अहो! समभावी गुरुवर, का ही हमें सहारा है।।
मोही जग तो अशरण ही हैं, सहजपने स्वीकार हमें।।5।।

(18)

श्री जिनवर की सम्यक् भक्ति, हृदय हमारे सदा रहे।
जिनशासन की वैयावृत्ति, में तत्परता सदा रहे।। टेक।।
नहीं छिपावें अपनी शक्ति, कोई नहीं बहाना हो,
स्वार्थ और आलस्य नहीं हो, नहीं हृदय अभिमाना हो।
समझें हम सौभाग्य सहज,उल्लास हृदय में सदा रहे।।1।।
हो सूक्ष्म उपयोग हमारा, भाव हृदय का ग्रहण करें,
सर्व समर्पण रहे सदा, निश्चिंत और निर्भार रहें।
ध्वजा सम्हालें जिनशासन की, आत्म भावना सदा रहे।।2।।
अरे कल्पना अपनी झूठी, मिथ्या जग व्यवहारा है,
सम्यक् ज्ञानी गुरुओं ने ही, जिनशासन विस्तारा है।
मोह–क्षोभ से रहित परिणति, समतामय ही सदा रहे।।3।।
प्रामाणीक हो ज्ञान हमारा, हो सम्यक् श्रद्धान सदा,
हो निर्दोष आचरण सुखमय, नहीं शिथिलता कहीं कदा।
हो प्रभावना मंगलकारी, यही भावना सदा रहे।। 4।।
स्याद्वाद वाणी में वर्ते, नहीं विवादों में उलझें,
सत्य–अहिंसामय हो जीवन, सर्व समस्याएँ सुलझें।
अनेकान्तमय वस्तु व्यवस्था, हृदय हमारे सदा रहे।।5।।
सम्यक् सोचें सम्यक् बोलें, सम्यक् क्रिया हमारी हो,
अहंकार–ममकार न होवे, ज्ञानकला विस्तारी हो।
शंका–भय तो लेश नहीं हो, निस्पृहता ही सदा रहे।।6।।

(19)

अहो जिनेश्वर साँचे ईश्वर, भक्ति भाव से नमन करूँ।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, तेरा पथ अनुसरण करूँ।। टेक।।
रागादि से भिन्न ज्ञानमय, शुद्धातम अनुभवन करूँ।
देहादिक को न्यारा समझूँ, व्यर्थ कल्पना नहीं करूँ।। 1।।
जो होता है देखूँ-जानूँ, कर्त्ता बुद्धि नहीं धरूँ।
निजानंद निज में ही वेदूँ, अब दुर्वेदन नहीं करूँ।। 2।।
दोष पराया नहीं निहारूँ, दोष स्वयं का दूर करूँ।
निज रत्नत्रय निज में पाऊँ, निज में ही संतुष्ट रहूँ।। 3।।
अद्भुत दर्शन अहो जिनेश्वर, सहज स्वयं आनंदमय हूँ।
अब निर्वांछक रहूँ सदा ही, आप स्वयं मंगलमय हूँ।। 4।।
हुआ निःशंक निराकुल स्वामी, साधन-साध्य स्वयं ही हूँ।
सहज परम श्रद्धेय ज्ञेय अरु, ध्येय स्वयं ही हूँ।। 5।।

(20)

अहो विदेहीनाथ का दर्शन, अद्भुत शान्ति प्रदाता है।
देहादिक से भिन्न आत्मा, सहजपने दिख जाता है।। टेक।।
अनेकान्तमय ज्ञानमात्र, प्रभुतामय रूप सुहाता है।
जिसके सन्मुख इन्द्रादिक, का वैभव तुच्छ दिखाता है।। 1।।
भेदविज्ञान चले अन्तर, सम्यक् पुरुषार्थ जगाता है।
मोह मंद होता जाता, वैराग्य सहज उमड़ाता है।। 2।।
जग-प्रपंच से होय उदासी, निर्ग्रन्थ पद प्रगटाता है।
चंचलता आकुलता मिटती, ध्यान सहज हो जाता है।। 3।।

अहो परम उपकार निरखते, भक्ति भाव उमगाता है।
निस्पृह वृत्ति होते भी, परिणाम सहज झुक जाता है।।4।।

(21)

अहो जिनेश्वर दर्शन करते, आनंद उर न समाय रे।
अहो जिनेश्वर भक्ति करते, आनंद उर न समाय रे।। टेक।।
आत्मलीन निर्ग्रंथ रूप लख, भाव विशुद्धि बढ़ाये रे।
प्रभु गुण चिन्तत अन्तर माँही, भेद-विज्ञान जगाये रे।।1।।
चंचलता आकुलता नाशे, सम्यक् गुण प्रगटाये रे।
सब संसार असार दिखावे, संयम मन उमगाये रे।। 2।।
प्रभु सम सहज स्वरूप दिखाया, परिणति सम हो जाये रे।
अन्य न कोई रही कामना, चरणों शीश नवाये रे।। 3।।
हे मंगलमय! हे लोकोत्तम! परम शरण प्रभु पाये रे।
तृप्त हुआ संतुष्ट हुआ हूँ, सफल हुई पर्याय रे।। 4।।

(22)

जिन मुद्रा शाश्वत सुखकारी।
जिन प्रतिमा अद्भुत अविकारी।।टेक।।
परिग्रह को छोड़ो सुख पाओ,
बाहर में नहीं चित्त भ्रमाओ।
कर्तृत्त्व भाव महा दुखकारी।। 1।।
नहीं छिपाओ दोष मिटाओ,
परम दिगम्बर हो जाओ।
निर्ग्रंथ मार्ग मंगलकारी ।। 2।।

अपनी ओर निहारो अब,
ज्ञायक भाव सम्हारो अब।
शुद्ध चेतना सुखकारी ।। 3।।
देखो कैसी सोह रही है,
भव्यों का मन मोह रही है।
ध्यानदशा आनंदकारी ।। 4।।
तीन लोक में सार यही है,
अक्षय सुख का मार्ग यही है।
समझो होओ शिवमगचारी।। 5।।
स्वयं शीश झुक जाता है,
भेदज्ञान जग जाता है।
चित्परिणति सबसे न्यारी।। 6।।

(23)

(तर्जः तेरे द्वार खड़ा भगवान भगत)

दर्शन पाकर जिनराज, मैं तो धन्य हुआ।
दीखा शाश्वत जीवराज, मैं तो धन्य हुआ।। टेक।।
वीतरागता देख आपकी, रागादिक अति भिन्न दिखें।
अनंत चतुष्टय निरखा जब ही, निज वैभव प्रत्यक्ष दिखे।।
ज्ञानमयी ध्रुवरूप लखकर धन्य हुआ।। 1।।
अपना सुख अपने में लखकर,अन्तर्मुख उपयोग हुआ।
अक्षय प्रभुतामय ज्ञायक प्रभु, अन्तर में प्रत्यक्ष हुआ।।
प्रभु साध्य दशा अवलोक, मैं तो धन्य हुआ।। 2।।

होय विरागी सब परिग्रह तज, मैं निर्ग्रन्थ दशा पाऊँ।
हो निर्द्वन्द निराकुल जिनवर, कारण परमातम ध्याऊँ।
सहज ज्ञान साम्राज्य पाकर, धन्य हुआ।। 3।।
अहो परम उपकार जिनेश्वर, चरणों शीश नवाता हूँ।
चंचल परिणति थिर हो स्वामी, यही भावना भाता हूँ।।
मुक्त स्वरूप निहार, मैं तो धन्य हुआ।। 4।।

(24)

(तर्जः तुम्हारे दर्श बिन स्वामी)

वीतरागी प्रभो देखो, मुक्ति का मार्ग दिखलाते।
आत्म-सुख आत्मा में ही, अहो! प्रत्यक्ष दर्शाते।। टेक।।
सभी संसार है दुःखमय, सार है एक शुद्धातम,
भिन्न परभावों से आतम, समझ बन जायें परमातम।
अन्य कोई नहीं साधन, व्यर्थ ही मूढ़ भटकाते।।
वीतरागी प्रभो देखो, मुक्ति का मार्ग दिखलाते।। 1।।
आस पर की अरे झूठी, शरण कोई नहीं जग में,
सार्थक हो तभी जीवन, लगें हम मुक्ति के मग में।
धन्य है साधु निज उपयोग, सहज निज में ही रमाते।।
वीतरागी प्रभो देखो, मुक्ति का मार्ग दिखलाते।। 2।।
हुए सन्तुष्ट हे स्वामी, शरण हम आपकी पाकर,
शांत मन हो गया जिनवर, पास में आपके आकर।
सहज श्रद्धा से भक्ति से, शीश चरणों में नवाते।।
वीतरागी प्रभो देखो, मुक्ति का मार्ग दिखलाते।। 3।।

(25)

(तर्जः म्हारा परम दिगम्बर मुनिवर आया)

वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर, मंगल–भक्ति कर लो,
हाँ मंगल भक्ति कर लो।। टेक।।
विमुख रहे चिरकाल से, बने न एकहु काज,
काललब्धि आई सहज, पाये श्री जिनराज।
प्रभु की चरण–शरण में आकर, अब आतम हित कर लो।।
हाँ मंगल भक्ति कर लो।। 1।।
पहिचानो निज आत्मा, देहादिक से भिन्न,
शाश्वत ज्ञानानन्दमय, होओ सहज प्रसन्न।
मिथ्या मोह तजो दुःखकारी,आतम अनुभव कर लो।।
हाँ मंगल भक्ति कर लो।। 2।।
भाओ सम्यक् भावना, जग से होय उदास,
रागादिक भी क्षीण हों, छोड़ो पर की आस।
प्रभु का पथ अपनाओ, अब तो रत्नत्रय निधि धर लो।।
हाँ मंगल भक्ति कर लो।। 3।।
आत्मध्यान में लीन हो, नाशें कर्म कलंक,
आवागमन विमुक्त हो, रहो सदा निकलंक।
प्रभु चरणों में शीश नवाओ, जीवन सार्थक कर लो।।
हाँ मंगल भक्ति कर लो।। 4।।

(26)

(तर्जः धन्य घड़ी मैं दर्शन पाया)

महाभाग्य जिनदर्शन पाया, आज हृदय में आनंद छाया।
सम्यक् मुक्तिमार्ग दर्शाया, प्रभु चरणों में शीश नवाया।। टेक।।

सब संसार–असार दिखाया, सारभूत शुद्धातम भाया।
मिथ्यामति अब दूर भगी है, भेदज्ञान की कला जगी है।।1।।
जग सम्बन्ध भासते झूठे, मिथ्या दुर्विकल्प अब टूटे।
आतम हित की हुई कामना, मन में जिनवर यही भावना।।2।।
ऐसी ही प्रभु श्रद्धा लाऊँ, जग–प्रपंच से चित्त हटाऊँ।
ऐसा ही वैराग्य बढ़ाऊँ, धनि निर्ग्रंथ दशा प्रगटाऊँ।।3।।
ऐसा ही पुरुषार्थ जगाऊँ, ऐसा आतम ध्यान लगाऊँ।
कर्म–कलंक समूल नशाऊँ, दुखमय आवागमन मिटाऊँ।।4।।

(27)

(तर्जः मैया तेरो लाल)

शिखर पर भले विराजे हैं, शिखर पर भले विराजे हैं।
परमानन्दमय प्रभो! जगत सिरताज विराजे हैं।। टेक।।
नग्न दिगम्बर मूरति भाये, परम जितेन्द्रिय रूप सुहाये।
शिवपथ नासादृष्टि दिखाये, दर्शन कर भविजन हर्षायें।।
अहो! महामहिमा मंडित जिनराज विराजे हैं।। जगत. ।।1।।
दिव्यध्वनि से तत्त्व बताये, देहादिक सब भिन्न दिखाये।
प्रभु रागादिक हेय बताये, ज्ञानादिक आदेय सु गाये।।
समवशरण में अन्तरीक्ष जिनराज विराजे हैं।। जगत. ।।2।।
इन्द्रादिक सब शीश नवाते, द्रव्य–भावमय भक्ति रचाते।
हम भी चरण–शरण में आते,ज्ञानमयी प्रभु भावना भाते।।
सिहांसन पर द्रव्य, भाव से हृदय विराजे हैं।। जगत. ।।3।।

(28)

(तर्ज: त्रिशला नंदकुमार, जय जयकार)

दर्शन मंगलकार, जय जयकार, जय जयकार।
भक्ति मंगलकार, जय जयकार, जय जयकार।। टेक।।
सहजानन्दमय परमानन्दमय, ज्ञानानन्दमय नित्यानन्दमय।
आनंद अपरम्पार, जय जयकार, जय जयकार।। 1।।
सहज दूर हों सर्व विपत्ति, मिले सहज अक्षय सम्पत्ति।
प्रभुता अपरम्पार, जय जयकार, जय जयकार।। 2।।
द्वेष बिना सब कर्म नशाये, राग बिना शिवमार्ग दिखावें।
वीतराग अविकार, जय जयकार, जय जयकार।। 3।।
परम शांत मुद्रा मन मोहे, अद्भुत अनंत चतुष्टय सोहे।
तीन भुवन में सार, जय जयकार, जय जयकार।। 4।।
देखे निज शुद्धातम दिखता, सहजपने उपयोग पलटता।
हो स्वानुभूति सुखकार, जय जयकार, जय जयकार।।5।।
हो निर्ग्रंथ दशा परमातम, भाऊँ-ध्याऊँ ध्रुव शुद्धातम।
वंदन अगणित बार जय जयकार, जय जयकार।। 6।।

(29)

छूटें मिथ्या पापारम्भ, मुक्तिमार्ग का हो प्रारम्भ।
अहो वीतरागी जिनदेव, हो निष्काम करूँ मैं सेव।। 1।।
तुम साक्षी में हे भगवान! देखूँ आतम सिद्ध समान।
समझूँ सभी जीव अम्लान, निश्चय नय से आत्म समान।।2।।
सदा रहे मम मैत्री भाव, कभी न आवे कलुषित भाव।
हो सम्यक् दर्शन निर्दोष, ज्ञान माँहि लागे नहीं दोष।। 3।।

सहज आचरण हो अविकार, रहूँ नाथ मैं जाननहार।
हो आराधक भाव सदा, नहीं विराधक भाव कदा।।4।।
भाऊँ नित वैराग्य-भावना, मंगलमय होवे प्रभावना।
निंदा में नहीं होवे खेद , परिणति हो निज माँहिं अभेद।।5।।
नहीं प्रशंसा की हो चाह, रहे विवेक चलूँ शिव राह।
बारम्बार सु करूँ प्रणाम, तुम सम ध्याऊँ आतम राम।।6।।

(30)

मेरे प्रभुवर वीतराग हैं, फिर भी अद्भुत प्रभुता वारे।
लोकालोक ज्ञान में झलके, फिर भी निज में निवसन हारे।।टेक।।
अरे विराधक बहु दुःख पाता, अपने ही दुर्भावों से।
आराधक सहजहिं सुख पाता, अपने सम्यक् भावों से।।
जिनवर केवल जाननहारे।। मेरे.।।1।।
नहीं विश्व के कर्त्ता होते, होते नहीं कभी संचालक।
तृप्त स्वयं से तुष्ट स्वयं से, निर्विकल्प स्वाभाविक ज्ञायक।।
ज्ञायक ही दर्शावन हारे।। मेरे.।।2।।
हो प्रसन्न वरदान न देते, भक्त स्वयं ही ले लेते।
दर्शन कर उपदेश ग्रहण कर, धर्म तीर्थ प्रगटा लेते।।
व्यवहार कहे तारन हारे।। मेरे.।।3।।
सहज योग्यता स्वयं जीव की, शुभ पुरुषार्थ स्वयं का हो।
स्वयं स्वयं के भाव सम्हालें, तब ही भला स्वयं का हो।।
प्रभुवर हैं आदर्श हमारे।। मेरे.।।4।।
भक्ति हृदय में सदा रहे जिन! भेदज्ञान भी सदा रहे।

मोह न आवे क्षोभ न आवे, समता उर में सदा रहे।।
निराधार आधार हमारे।। मेरे.।।5।।

(31)

(तर्ज : रोम-रोम पुलकित हो जाय)

क्षण-क्षण दर्शन हो जिन स्वामी, प्रभुवर रहो नयन पथ गामी।।टेक।।
नहीं विस्मरण निज का होवे,अहंकार नहिं पर में होवे।
ज्ञातारूप अनुभवूँ नामी।। प्रभुवर.।।1।।
अपना सुख वेदूँ अपने में,कभी कल्पना करूँ न पर में।
उदासीनता सहज हो स्वामी।। प्रभुवर.।।2।।
कार्य स्वयं ही होते जानूँ,कर्त्ता भाव कभी नहिं मानूँ।
साक्षीभूत रहूँ हे स्वामी।। प्रभुवर.।।3।।
समझे बिन भव-भव भरमाया,महाभाग्य जिनवर को पाया।
वस्तु स्वरूप लखूँ हे स्वामी।। प्रभुवर.।।4।।
अनेकान्तमय वस्तु स्वरूप, सम्यक् ज्ञान महासुख रूप।
स्याद्वादमय श्री जिनवाणी।। प्रभुवर.।।5।।
दशलक्षणमय धर्म पिछाना, साम्यभाव में गर्भित जाना।
धर्मी शुद्धातम अभिरामी।। प्रभुवर.।।6।।
अविरल आत्मस्वरूप सु भाऊँ,तज प्रपंच अब आतम ध्याऊँ।
मग्न रहूँ अपने में स्वामी।। प्रभुवर.।।7।।
निर्मल दर्पण सम अविकारी,प्रभु चरणों में धोक हमारी।
परिणति प्रभु सम हो सुखदानी।। प्रभुवर.।।8।।

(32)

करो हे भव्य जिनदर्शन, मुक्ति का मार्ग यदि पाना।
सुनो हे भव्य जिनवाणी, मुक्ति का मार्ग यदि पाना।। टेक।।
अरे! अज्ञान भरमाये, भ्रमण में बहुत दुःख पाये।
करो श्रद्धान तत्त्वों का, मुक्ति का मार्ग यदि पाना।। 1।।
नहीं प्रतिकूलता दुःख है, नहीं अनुकूलता सुख है।
तजो तब कल्पना झूठी, मुक्ति का मार्ग यदि पाना।। 2।।
मोह मिथ्या तजो पर का, निहारो रूप आतम का।
ज्ञान–आनन्द–प्रभुतामय, मुक्ति का मार्ग यदि पाना।। 3।।
भावना भाओ भवि सम्यक्, सहज वैराग्य हो सम्यक्।
करो आराधना सम्यक्, मुक्ति का मार्ग यदि पाना।। 4।।
शरण है एक जिनवर की, शरण है एक गुरुवर की।
शरण समझो निजातम की, मुक्ति का मार्ग यदि पाना।। 5।।

(33)

दर्शन पाये जिनवर के, परमानन्द निज में प्रगटे।। टेक।।
भेदज्ञान प्रगटाया है, मिथ्या मोह नशाया है।
निज प्रभुता निज माँहिं दिखे।। परमानंद.।। 1।।
अध्रुव अशरण अरु दुखमय, पग–पग पर संसार में भय।
सारभूत समयसार दिखे।। परमानंद.।। 2।।
सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र रत्न महान।
शिवमारग शिवरूप दिखे।। परमानंद.।। 3।।
भक्ति भाव से करें नमन, निज स्वरूप में रहें मगन।
सहज ही आवागमन मिटे।। परमानंद।। 4।।

(34)

(तर्ज: अशरीरी सिद्ध भगवान)

हे वीतराग जिनराज, आदर्श रहो मेरे।
हे आत्म मग्न जिनराज, आदर्श रहो मेरे।। टेक।।
तुम सम ही अन्तर्दृष्टि हो, तुम सम ही सहज विरक्ति हो।
मैं होऊँ आप समान, आदर्श रहो मेरे।। 1।।
हो सहजपने ही भेदज्ञान, हो सहजपने ही आत्म-ध्यान।
हो कर्मों का अवसान, आदर्श रहो मेरे।। 2।।
प्रभु परभावों का भेदन हो, निज सुख का निज में वेदन हो।
हों गुण अनन्त अम्लान, आदर्श रहो मेरे।। 3।।
परवाह नहीं हो भवदुख की, जिन चाह नहीं हो भव सुख की।
आराधन हो निष्काम, आदर्श रहो मेरे।। 4।।
प्रभु! तुमसे मुक्तिमार्ग मिला, सर्वस्व मिला मम हृदय खिला।
हो अगणित बार प्रणाम, आदर्श रहो मेरे।। 5।।

(35)

देखो-देखो प्रभु को देखो, श्रद्धा भक्ति से प्रभु देखो।
नहीं अंधश्रद्धा हो मन में, नहीं चाह विषयों की मन में।।1।।
इच्छाओं की पूर्ति न चाहें, इच्छाओं का नाश ही भायें।
व्यर्थ भटकना है जगमाँहि, परिग्रह में किंचित् सुख नाहिं।।2।।
तेरा सब कर्तृत्व है झूठा, जिनशासन का तत्त्व अनूठा।
पर की ओर कभी मत देखो, अंतर्मुख हो आतम देखो।।3।।
राग-द्वेष दोषों को त्यागो, ज्ञानी हो आतम में पागो।

क्लेश मिटे भव भ्रमण मिटेगा, निज में अक्षय सुख मिलेगा।।
आत्मीक गुण प्रगटायेंगे, स्वयं प्रभु हम बन जायेंगे।।4।।

(36)

अहो जिनेश्वर! दर्शन तेरा, सर्व जगत को मंगलमय।
अहो जिनेश्वर! भक्ति तेरी, सर्व जगत को मंगलमय।।
मंगलमय है, आनंदमय है, सर्व जगत को मंगलमय।।टेक।।
लोकोत्तम है रूप महेश्वर, मुक्तिमार्ग दर्शाता सुखकर।
प्रभो आपकी वीतरागता, सर्व जगत को मंगलमय।। 1।।
कर्त्ता नहीं विश्व के नाथ, ज्ञाता हो सबके एक साथ ।
अहो परम सर्वज्ञ दर्श भी, सर्व जगत को मंगलमय।। 2।।
दिव्यध्वनि से तत्त्व बताया, प्रभुतामय शुद्धात्म दिखाया।
परमानन्दमय प्रभुता स्वामी, सर्व जगत को मंगलमय।। 3।।
महाभाग्य से प्रभु को पाया, सम्यक् भेद-विज्ञान जगाया।
हो परमार्थ नमन अविकारी, सर्व जगत को मंगलमय।। 4।।
जागी मन में यही भावना, करूँ आप सम आत्म-साधना।
अहो आपका अद्‌भुत शासन, सर्व जगत को मंगलमय।।5।।

(37)

महाभाग्य पाये जिनराज, जय जयकार करें हम आज।
जय जयकार, जय जयकार, जय जयकार।। टेक।।
पाकर उत्तम धर्म तीर्थ, हम भी आतम आराधेंगे।
निज स्वभाव साधन द्वारा ही, परम साध्य को साधेंगे।।
महाभाग्य पाये जिनराज।। 1।।
चरणों में हम शीश नवायें, भायें भावना मंगलकार।

धर्माराधन अरु प्रभावना, में ही यह जीवन सार।।
महाभाग्य पाये जिनराज।। 2।।
मंगल उत्तम शरणभूत हम, जाना निज शुद्धातम सार।
हो निर्ग्रंथ निजातम में ही, रम जावें होवें अविकार।।
महाभाग्य पाये जिनराज।। 3।।

(38)

भक्ति से जिनराज दर्शन को आये।
आनंद मेरे उर न समाये।। टेक।।
तुम से विमुख रह बहु दुख उठाया,
साक्षी में प्रभुवर शिवपथ दिखाया।
स्वाधीन शिवसुख ही हमको सुहाये,
आनंद मेरे उर न समाये।। 1।।
अशरण जगत में शरण न दिखावे,
जिसे अपना मानें वही छोड़ जावे।
ध्रुव आत्मा ही अपना दिखावे,
आनंद मेरे उर न समाये।। 2।।
अज्ञान दुःखमय, दुख का ही कारण,
सहज ज्ञान सुखमय, सुख का ही कारण।
सहज ज्ञानमय भाव अनुभव में आये।।
आनंद मेरे उर न समाये।। 3।।
बस हो विकल्पों से, बस हो विजल्पों से,
स्वाश्रय से हम भी विरत होवें विषयों से।

अहो! साधनामय जीवन सुहावे,
आनंद मेरे उर न समाये।। 4।।
समर्पित है जीवन चरणों में जिनवर,
अहो! आत्मामय हो जायें सत्वर।
निष्काम परिणति निज में रमाये,
आनंद मेरे उर न समाये।। 5।।

(39)

जिनराज चरण सुखकारी,
जिनराज शरण सुखकारी।। टेक।।
सम्यग्दर्शन सदा ही सुखमय,
सम्यग्ज्ञान सदा ही सुखमय।
सम्यक् चारित्र अविकारी।। 1।।
तत्त्वज्ञान कर भेदज्ञान कर,
निज शुद्धातम का अनुभव कर।
पाओ मंगलकारी ।। 2।।
मोह दु:खमय क्रोध दु:खमय,
मान दु:खमय माया दु:खमय ।
लोभ महा दु:खकारी।। 3।।
इनको त्यागो शिवपथ लागो,
आराधन में परिणति पागे।
होवे शिव अधिकारी।। 4।।

(40)

(तर्ज: म्हारा परम दिगमबर)

वीतराग सर्वज्ञ प्रभु की, सब मिल भक्ति कर लो।
हाँ सब मिल भक्ति कर लो।।
महाभाग्य से अवसर आया, सब मिल भक्ति कर लो।।टेक।।
रागादिक दूषण रहित, प्रभु अपने में लीन।
भासित लोकालोक हो, रहें सहज स्वाधीन।।
सब मिल भक्ति कर लो, हाँ सब मिल भक्ति कर लो।।1।।
मुक्तिमार्ग दर्शावते, सहज रूप अविकार।
वीतरागता आप सम, प्रगटे प्रभु सुखकार।।
सब मिल भक्ति कर लो, हाँ सब मिल भक्ति कर लो।।2।।
सब संसार असार लख, सारभूत शुद्धात्म।
शुद्धातम में लीन हो, पाओ पद परमात्म।।
सब मिल भक्ति कर लो, हाँ सब मिल भक्ति कर लो।।3।।
द्रव्य-भाव भक्ति करो, रहो सहज निष्काम।
सर्व विघ्न नाशें स्वयं, हो शिवपद अभिराम।।
सब मिल भक्ति कर लो, हाँ सब मिल भक्ति कर लो।।4।।

(41)

(तर्ज: चाह मुझे है दरशन की)

दर्शन करते सुमति जगी, पराधीन दुर्बुद्धि भगी।। टेक।।
वीतराग प्रभु जग नामी, अनंत चतुष्टय के स्वामी।
जग की रीति असार लगी।। दर्शन.।। 1।।
सुख अंनत निज माँहि अहो,सुख साधन निज माँहि अहो।

परिणति अन्तर माँहि पगी।। दर्शन.।। 2।।
नहीं होवे किंचित् ममता,सहज सदा सबमें समता।
अन्तर में ही तृप्ति मिली।। दर्शन.।। 3।।
दुर्विकल्प प्रभु दूर रहें, ज्ञानमयी परिणाम रहें।
करूँ नमन प्रभु चाह यही।। दर्शन.।। 4।।

(42)

हे स्वयं सिद्ध निर्दोष प्रभो! तुमको मैंने अब पहिचाना।
हो गयी उदासी सब जग से, अपना सुख अपने में जाना।।टेक।।
है परिग्रह हेय सभी न्यारा, जिन मुद्रा हमें बताती है।
है व्यर्थ भटकना बाहर में, शान्ति अंतर से आती है।। 1।।
मिथ्या कर्त्तृत्व अरे पर का, धनि हाथ पै हाथ धरे जिनवर।
नहीं पर की ओर लखो चेतन, अपना उपयोग रहे अंदर।। 2।।
अंतर में सुख भंडार भरा, अंतर में ज्ञान अरु प्रभुता है।
अन्तर्दृष्टि से मिले सहज, बाहर में तो आकुलता है।। 3।।
चेतो-चेतो मंगल अवसर, ये बीता जाता है क्षण-क्षण।
उपयोग अभेद रहे निज में, ऐसा पुरुषार्थ करो क्षण-क्षण।। 4।।
ये ही प्रभु की सम्यक् भक्ति, जो प्रभु सम हमें बनाती है।
त्रिभुवन में अनुपम प्रभु मूरति, जो सबका शीश नवाती है।। 5।।

(43)

भगवान भगवान भगवान हो,वीतराग सर्वज्ञ भगवान हो।।टेक।।
दोष आवरण रहित हो जिनवर,दर्श ज्ञान सुख बलमय प्रभुवर।
अनंत चतुष्टयवान अहो।। भगवान.।। 1।।
नहीं परमाणु मात्र के स्वामी,परम अकर्त्ता ज्ञाता नामी।

अद्भुत प्रभुतावान अहो।। भगवान.।। 2।।

तारण–तरण परम उपकारी,अविकारी चैतन्य विहारी।

गुण अनंत अभिराम अहो।। भगवान.।। 3।।

मेरे उर में वास करो,सम्यक् ज्ञान प्रकाश करो।

समतामय परिणाम अहो।। भगवान.।। 4।।

महाभाग्य से दर्शन पाया,करते नमन हृदय हर्षाया।

होऊँ आप समान अहो।। भगवान.।। 5।।

(44)

प्रभु भक्ति आनंदमय, गुरु भक्ति आनंदमय।

जिनवाणी आनंदमय, जिनशासन आनंदमय।। 1।।

प्रभुवर हैं आनंदमय, गुरुवर हैं आनंदमय।

शुद्धातम आनंदमय, अध्यातम आनंदमय।। 2।।

श्रद्धान है आनंदमय, अनुभव है आनंदमय।

आचरण है आनंदमय,रत्नत्रय आनंदमय।। 3।।

शिवपथ है आनंदमय, शिवरूप है आनंदमय।

साधक है आनंदमय, सिद्ध प्रभु हैं आनंदमय।।4।।

आदीश्वर आनंदमय, महावीर हैं आनंदमय।

स्वरूप आनंदमय, अनुभूति आनंदमय।। 5।।

(45)

दर्शन पाये श्री जिनराज, मेरो जन्म सफल भयो आज।

भक्ति करते श्री जिनराज, मेरो जन्म सफल भयो आज।।टेक।।

निजानंद निज में ही पायो, विघ्न गये सब भाग।

अक्षय प्रभुता निज में देखी, पायो निज साम्राज्य।। 1।।
ज्ञानमयी ध्रुव मूरति अद्भुत, अद्भुत है सब साज।
जिन जिनने यह मरम पिछाना, पूर्ण भये सब काज।। 2।।
शीतल चित्त भयो जिम चंदन, अहो-अहो जिनराज।
कैसे गावें सुजस आपका, चरणों में नत आज।। 3।।
महाभाग्य से दर्शन पाये, हर्षित सर्व समाज।
रोम-रोम पुलकित हो स्वामी, भरम गये सब भाग।। 4।।
तन-मन-धन है सर्व समर्पण, चरणों में जिनराज।
हो प्रभावना मंगलकारी, यही भाव है आज।। 5।।

(46)

(तर्ज: अमृत से गगरी भरो...)

आनंद से हृदय भरे, जिनवर की भक्ति करें।
भक्ति करें, गुण चिंतन करें।। टेक।।
मोहादिक सब दोष नशाये, अनंत चतुष्टय प्रभु प्रगटाये।
इन्द्रादि नमन करें।। 1।।
प्रभु का दर्शन अति उपकारी, दर्शावें शिवपथ अविकारी।
मिथ्या मोह तजें ।। 2।।
प्रभु की वाणी आनंदकारी, वस्तु स्वरूप कहा अविकारी।
भेद विज्ञान करें ।। 3।।
महापुण्य यह अवसर आया, मंगलमय जिनशासन पाया।
आतम अनुभव करें।। 4।।
जिनवर के पथ को अपनायें, उत्तम संयम सब प्रगटायें।
निश्चय ही भव से तिरें।। 5।।

हिल-मिल धर्म प्रभाव बढ़ायें, तत्त्व भावना निशदिन भायें।
चरणों शीश धरें ।।6।।

(47)

(तर्जः चाह मुझे है दर्शन की)

जन्म सफल हो प्रभु दर्शन से, जन्म सफल हो निज दर्शन से।।टेक।।
सम्यग्दर्शन शिव सुख दाता, ज्ञानमयी संक्लेश मिटाता।
पूज्यपना सम्यक् चारित्र से, जन्म सफल हो प्रभु दर्शन से।।1।।
अविरल ज्ञानाभ्यास करेंगे, साम्यभाव हम हृदय धरेंगे।
संवर निर्जरा तपश्चरण से, जन्म सफल हो प्रभु दर्शन से।।2।।
नहीं व्यर्थ हम समय गंवायें, ज्ञान सुख अंतर में पायें।
हर्षित हैं जिनराज शरण से, जन्म सफल हो प्रभु दर्शन से।।3।।
अनेकांतमय वस्तु स्वरूप, धर्म अहिंसा मंगलरूप।
हो प्रभावना सदाचरण से, जन्म सफल हो प्रभु दर्शन से।।4।।

(48)

अहो जिनराज मेरे ज्ञान में हैं आये, परमानन्द मेरे उर न समाये।।टेक।।
मोह क्षोभ आदि सब दोषों से हीन हैं, ज्ञानमय निज आनन्द माँहि लीन हैं।।
वीतराग देव मेरे ज्ञान में हैं आये।।1।।
लोक अरु अलोक ज्ञान माँहि प्रतिभासे, तीनकाल युगपत् प्रत्यक्ष भासे।।
सर्वज्ञदेव मेरे ज्ञान में हैं आये।।2।।
नहिं होवे जिनके ज्ञप्ति परिवर्तन, चेतन-चैतन्य अरु चिद्-विवर्तन।।
चिद्रूप प्रभु मेरे ज्ञान में हैं आये।।3।।
चरणों में इन्द्रादि भक्ति से नत हैं, धन्य-धन्य नाथ सदा निज में विनत् हैं।।
देवाधिदेव मेरे ज्ञान में हैं आये।।4।।

साक्षी में प्रभुवर के शिवपथ है जाना, प्रभु सा ही प्रभु रूप निज में पिछाना।।
ज्ञाता स्वरूप मेरे अनुभव में आये।। 5।।
प्रभु के समान मैं करूँगा आराधना, निर्ग्रंथ साधु हो करूँगा निज साधना।।
शुद्ध भाव मेरे हृदय में हैं जगाये।। 6।।
ज्ञायक के आश्रय से उत्कृष्ट साधक हो, साध्य दशा पाऊँगा कोई नहीं बाधक हो।।
चरणों में भक्ति से सिर हैं नवाये।। 7।।

(49)

(तर्ज: अमृत से गगरी भरो)

जिनभक्ति अमृतमयी, सब दुख दूर करे।
जिनपूजा आनंदमयी, परमानन्द करे।। टेक।।
अरहंत सिद्ध प्रभु मंगलमय हैं, सर्व साधु गुरु मंगलमय हैं।
जिनधर्म मंगलमयी, सब दुख दूर करे।। 1।।
अर्हन्त सिद्ध प्रभु लोकोत्तम हैं, सर्व साधु गुरु लोकोत्तम हैं।
जिनधर्म लोकोत्तमा, सब दुख दूर करे।। 2।।
अर्हन्त सिद्ध प्रभु सदा शरण हैं, सर्व साधु गुरु सदा शरण हैं।
जिनधर्म शरण सुखकार, सब दुख दूर करे।। 3।।
मंगलमय है निज शुद्धातम, लोकोत्तम है ध्रुव परमातम।
अनन्य शरण अविकार, सब दुख दूर करे।। 4।।
महाभाग्य जिनदर्शन पाया, साँचा मुक्तिमार्ग दर्शाया।
नमहुँ त्रियोग सम्हार, सब दुख दूर करे।। 5।।

(50)

हे वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, ध्रुव महिमा अपरम्पार रे।
हो वंदन अविकार प्रभो।। टेक।।
नाथ आपकी साक्षी में, निज चित्स्वरूप दिखलावे।
सहज प्रशमरस झरता स्वामी, रोम-रोम पुलकावे।।
है स्वानुभूति की सहज निमित्त प्रभु, शांति मूर्ति सुखकार रे।।1।।
निरावरण निर्दोष सहज ही अचल रूप अविकारी ।
निज हित इन्द्रादिक भी तेरे, चरणों में बलिहारी।।
भक्ति करते भव दुख हरते, प्रभु नाशे भाव विकार रे।।2।।
धन्य-धन्य शुद्धातम जग में, धन्य-धन्य आराधना।
जासों आवागमन मुक्त हो, अचल मुक्तिपद पावना।।
चाख्यो अनुपम अनुभव रस, जिनवर लागे जगत असार रे।।3।।
सहज पूर्णता निज में ही दीखे, बाहर कछु न सुहाये।
अल्पकाल में परिणति भी प्रभु, निज में ही रम जाये।।
विश्वास हुआ, आनंद हुआ, अब चाह न रही लगार रे।।4।।

(51)

जिनवर की परमार्थ भक्ति करेंगे।
भक्ति करेंगे,आनंद लहेंगे।। टेक।।
प्रभुवर ने हमको ज्ञायक बताया।
रागादि भावों से न्यारा दिखाया।।
स्वानुभव प्रमाण कर श्रद्धा धरेंगे।
श्रद्धा धरेंगे, आनंद लहेंगे।। 1।।

प्रभुवर प्रमाण से बाहर ना आयेंगे।
प्रमाण में भी नहीं अटकायेंगे ।।
शुद्धनय से आत्मा का अनुभव करेंगे।
अनुभव करेंगे, आनंद लहेंगे।। 2।।
पर्याय से अनित्य हो तो भले हो।
द्रव्य से नित्य हो तो भले हो।।
चित्स्वरूप तो चित्स्वरूप अनुभव करेंगे।
अनुभव करेंगे, आनंद लहेंगे।। 3।।
निर्ग्रन्थ निर्द्वन्द भगवान आत्मा।
ज्ञानमात्र ज्ञानमूर्ति सहज परमात्मा।।
निर्ग्रन्थ हो नित ध्यान धरेंगे।
ध्यान धरेंगे, आनंद लहेंगे।। 4।।
विभाव संयोग भी दूर होयेंगे।
स्वाभाविक परिणाम अनंत रहेंगे।।
ज्ञाता रहेंगे, आनंद लहेंगे।
आनंद लहेंगे पर ज्ञाता रहेंगे।। 5।।

(52)

(तर्ज: अमृत से गगरी भरो)

भक्ति से हृदय भरा, स्तवन प्रभु आज करें।
प्रभु सम ही अपना स्वरूप, प्रतीति प्रभु आज करें।। टेक।।
ज्ञानमात्र ध्रुव आनंद सागर, शक्ति अनंतमयी रत्नाकर।
निज स्वरूप निरखें, प्रतीति प्रभु आज करें।। 1।।

है स्वाधीन अखण्ड प्रतापी, महिमा जिसकी तिहुँ जग व्यापी।
प्रभुता अनंत धरें, प्रतीति प्रभु आज करें।। 2।।
बंध-मुक्ति की पर्याय से न्यारो, सब भेद-अभेद निहारो।
द्रव्य-दृष्टि उर में धरें, प्रतीति प्रभु आज करें।। 3।।
पूर्ण स्वयं में स्वयं सदा ही, इच्छा दुःख जहाँ हुए विदा ही।
अनुपम चिद्रूप गहें, प्रतीति प्रभु आज करें ।। 4।।
तीन लोक में यही सार है, मंगल उत्तम समयसार है।
शरणभूत विस्तरे, प्रतीति प्रभु आज करें।। 5।।
सर्व विभाव अरु कर्म नशायें, निज स्वरूप में ही रम जायें।
तब शिव पदवी धरें, प्रतीति प्रभु आज करें।। 6।।

(53)

नाथ तेरी वीतराग छवि भावे।
रागादिक तैं भिन्न ज्ञानमय, जिन महिमा दरशावे।। टेक।।
सिंधुयान पंछी सम स्वामिन्, चहुँगति शरण न पावे।।
ज्ञानभाव की महाशरण ले, अविचल पद प्रगटावे।। 1।।
तुम दर्शन कर मुक्तिमार्ग पा, मेरो मन हर्षावे।
तुम सम निज में थिर होऊँ, यही भाव उमगावे।। 2।।
अखिल विश्व मम ज्ञेय मात्र हो, मोह-क्षोभ नहीं आवे।
निजानंद में तृप्त परिणति, परम साम्य प्रभु पावें।। 3।।
हे आतम उपकारी जिनवर, आत्मन् शीश नवावें।
मुक्त-मुक्त मैं सदा मुक्त हूँ, आनंद उर न समावे।। 4।।

(54)

(तर्जः श्री अरिहंत सदा मंगलमय)

नाम ग्रहण भी श्री जिनवर का मंगलमय है, आनंदमय है।। टेक।।
नग्न दिगम्बर नासादृष्टि, ध्यान दशा निश्चल आसन।
अहो परम पावन जिनमुद्रा, दर्शन भी तो मंगलमय है।। 1।।
आत्म दर्शनमय केवलदर्शन, आत्मज्ञानमय केवलज्ञान।
अनंत सुख बल आदि गुणों का, चिंतन भी तो मंगलमय।। 2।।
प्रभु कल्याण जहाँ हुये हैं, तप विहार अथवा अतिशय।
लोकोत्तम वे तीर्थक्षेत्र सब, अहो वंदना मंगलमय।। 3।।
वस्तु स्वरूप बताती जग को, अक्षय मुक्तिमार्ग दर्शक।
अहो जिनेश्वर की वाणी का, सहज ग्रहण भी मंगलमय।। 4।।
तत्त्वों का निर्णय विचार हो, भेदज्ञान हो निज पर का।
निर्विकल्प आत्मानुभूति अरु, आत्म-भावना मंगलमय।। 5।।
सद्दृष्टि सद्ज्ञान चरणमय, आत्म-साधना अविकारी।
कर्म विघातक शिव सुखकारी, साम्यभाव नित मंगलमय।। 6।।

(55)

आओ हम सब प्रभु गुण गाएँ, प्रभुवर को आदर्श बनायें।
मोह-भगायें ज्ञान-जगायें, मुक्तिमार्ग में कदम बढ़ायें।।
आओ-आओ सब मिल आओ, आओ भक्ति भाव से आओ।। टेक।।
सत्य-अहिंसा को अपनायें, अपना जीवन सफल बनायें।
पावन धर्म ध्वजा फहरायें, आपस में वात्सल्य बढ़ायें।। 1।।
अनेकांतमय वस्तु स्वरूप, समझें और सबको समझायें।
श्री गुरुओं की परम्परा को, आगे हम सब सहज बढ़ायें।। 2।।

दूर भगावें बुरी रीतियाँ, जग में सुखद रीति फैलायें।
नहीं अटकें हम बाह्य ज्ञान में, भेदविज्ञान कला प्रगटायें।। 3।।
भायें नित ही तत्त्वभावना, अंतर में वैराग्य बढ़ायें।
उदासीन हो पर भावों से, निज स्वभाव में ही रम जावें।। 4।।

(56)

(तर्जः धन्य मुनिराज हमारे हैं)

घड़ी जिनराज दर्शन की, हो आनंदमय हो मंगलमय।
घड़ी यह सत्समागम की, हो आनंदमय हो मंगलमय।। टेक।।
अहो प्रभु भक्ति जिनपूजा, और स्वाध्याय तत्त्व-निर्णय।
भेद-विज्ञान स्वानुभूति, हो आनंदमय हो मंगलमय।। 1।।
असंयम भाव का त्यागन, सहज संयम का हो पालन।
अनूपम शान्त जिन-मुद्रा, हो आनंदमय हो मंगलमय।। 2।।
क्षमादिक धर्म स्वाश्रय से, सहज वर्ते सदा वर्ते।
परम निर्ग्रन्थ मुनि जीवन, हो आनंदमय हो मंगलमय।। 3।।
हो अविचल ध्यान आतम का, कर्म बंधन सहज छूटें।
अचल ध्रुव सिद्ध पद प्रगटे, हो आनंदमय हो मंगलमय।। 4।।

(57)

ऐसा ही प्रभु मैं भी हूँ, ये प्रतिबिम्ब सु मेरा है।
भली भाँति मैंने पहिचाना, ऐसा रूप सु मेरा है।। टेक।।
ज्ञान शरीरी अशरीरी प्रभु, सब कर्मों से न्यारा है।
निष्क्रिय परम प्रभु ध्रुव ज्ञायक, अहो प्रत्यक्ष निहारा है।।
जैसे प्रभु सिद्धालय राजें, वही स्वरूप सु मेरा है।।1।।

रागादि दोषों से न्यारा, पूर्ण ज्ञानमय राज रहा।
असम्बद्ध सब परभावों से, चेतन वैभव छाज रहा।।
बिन्मूरति चिन्मूरति अनुपम, ज्ञायक भाव सु मेरा है।।2।।
दर्शन-ज्ञान अनन्त विराजे, वीर्य अनन्त उछलता है।
सुख सागर अन्तर लहरावे, ओर-छोर नहिं दिखता है।।
परम पारिणामिक अविकारी, ध्रुव स्वरूप ही मेरा है।।3।।
ध्रुव-दृष्टि प्रगटी अब मेरे, ध्रुव में ही स्थिरता हो।
ज्ञेयों में उपयोग न जावे, ज्ञायक में ही रमता हो।।
परम स्वच्छ स्थिर आनन्दमय, शुद्धस्वरूप ही मेरा है।।4।।

(58)

(तर्जः रोम रोम पुलकित हो जाये)

कैसा अद्भुत शान्त स्वरूप, अक्षय मंगलमय जिनरूप।।टेक।।
अहो परम मंगल के काज, हमने पहिचाने जिनराज।
जिन समान ही आत्मस्वरूप, अक्षय मंगलमय जिनरूप।।1।।
कर्म कलंक हुए निःशेष, अनन्त चतुष्टय भाव विशेष।
निर्विकल्प चैतन्य स्वरूप, अक्षय मंगलमय जिनरूप।। 2।।
अद्भुत महिमा-मंडित देव, सब संक्लेश नशें स्वयमेव।
तदपि अकर्ता ज्ञाता रूप, अक्षय मंगलमय जिनरूप।। 3।।
सर्व कामना सहज नशायें, निज गुण निज में ही प्रगटायें।
विलसे निज आनन्द स्वरूप, अक्षय मंगलमय जिनरूप।।4।।
शरण में आये हे जिननाथ, दर्शन पाकर हुए सनाथ।
प्रगट दिखाया ज्ञायक रूप, अक्षय मंगलमय जिनरूप।। 5।।

बाह्य सुखों की नहीं कामना, शिव सुख की हो रही भावना।
ध्यावें ध्रुव शुद्धात्म स्वरूप, अक्षय मंगलमय जिनरूप।। 6।।
भक्ति भाव से शीश नवावें, अन्तर्मुख हो प्रभु को पावें।
प्रभु प्रभुता जग माहिं अनूप, अक्षय मंगलमय जिनरूप।। 7।।
धन्य हुए कृत-कृत्य हुए हैं, सर्व मनोरथ सिद्ध हुए हैं।
मानो हुए अभी शिव रूप, अक्षय मंगलमय जिनरूप।। 8।।
कैसा सुख अरु कैसा ज्ञान, वचनातीत अहो भगवान।
सहज मुक्त परमात्म स्वरूप, अक्षय मंगलमय जिनरूप।। 9।।

(59)

कैसी सुन्दर जिनप्रतिमा है, कैसा सुन्दर है जिनरूप।
जिसे देखते सहज दीखता, सबसे सुन्दर आत्मस्वरूप।।टेक।।
नग्न दिगम्बर नहीं आडम्बर, स्वाभाविक है शांत स्वरूप।
नहीं आयुध नहीं वस्त्राभूषण, नहीं संग नारी दुखरूप।।1।।
बिन श्रृंगार सहज ही सोहे, त्रिभुवन माँहि अतिशय रूप।
कायोत्सर्ग दशा अविकारी, नासादृष्टि आनन्द रूप।। 2।।
अर्हत् प्रभु की याद दिलाती, दर्शाती अपना प्रभु रूप।
बिन बोले ही प्रगट कर रही, मुक्तिमार्ग अक्षय सुखरूप।। 3।।
जिसे देखते सहज नशावें, भव-भव के दुष्कर्म विरूप।
भावों में निर्मलता आवे, मानो हुये स्वयं जिनरूप।। 4।।
महाभाग्य से दर्शन पाया, पाया भेद विज्ञान अनूप।
चरणों में हम शीश नवावें, परिणति होवे साम्यस्वरूप।।5।।

(60)

नाथ तुम्हारे दर्शन से, निज दर्शन मैंने पाया।
तुम जैसी प्रभुता निज में लख, चित मेरा हुलसाया।। टेक।।
तुमको बिन जाने निज से च्युत हो, भव-भव में भटका हूँ।
निज का वैभव निज में शाश्वत, अब मैं समझ सका हूँ।।
निज प्रभुता में मगन होऊँ, मैं भोगूँ निज की माया।। 1।।
पर्यय में पामरता तब भी, द्रव्य सुखमयी राजे।
लक्ष्य तजूँ पर्यायों का, निजभाव लखूँ सुख काजे।।
पर्यायों में अटक-भटक कर, मैं बहु दुःख उठाया।। 2।।
पद्मासन थिर मुद्रा, स्थिरता का पाठ पढ़ाती।
निजभाव लखे से सुख होता, नासादृष्टि सिखलाती।।
कर पर कर ने कर्तृत्व रहित, सुखमय शिवपंथ सुझाया।।3।।
यही भावना अब तो भगवन्, निज में ही रम जाऊँ।
आधि-व्याधि-उपाधि रहित, मैं परमसमाधि पाऊँ।।
ज्ञानानन्दमय ध्रुव स्वभाव ही, अब मेरे मन भाया।।4।।

(61)

अद्भुत प्रभुता आज निहारी, आनन्द उर न समाया है।
मानों रंक लही चिन्तामणि, त्यों निज वैभव पाया है।। 1।।
ध्रुव चैतन्यमयी जीवन लख, जन्म अरु मरण नशाया है।
दर्शन-ज्ञान चक्षु दो शाश्वत, लोकालोक दिखाया है।। 2।।
सुख शक्ति देखी क्या मानो, सुख सागर लहराया है।
निज सामर्थ्य अनन्त निहारी, ओर-छोर नहिं पाया है।। 3।।

अब स्वाधीन अखण्ड प्रतापी, शोभायुत प्रभु भाया है।
निज के सब भावों में व्यापक, विभु प्रत्यक्ष दिखाया है।। 4।।
सदा प्रकाशित परम स्वच्छ, मोहान्धकार विनशाया है।
स्वानुभूति से निज अन्तर में, निजानंद रस पाया है।। 5।।
मुक्ति की भी नहिं अभिलाषा, मुक्त स्वरूप दिखाया है।
परम तृप्ति उपजी अब मेरे, निज में सर्वस्व पाया है।। 6।।
हो निस्पृह उपकारी प्रभुवर, निजपद हमें दिखाया है।
भावसहित वन्दन हे जिनवर, ये रहस्य दरशाया है।। 7।।

(62)

(तर्जः निरखी-निरखी मनहर मूरति)

लखी-लखी प्रभु वीतराग छवि, आज मैं जिनेन्द्रा।
भूली-भूली निज निधि पाई, आज मैं जिनेन्द्रा।। टेक।।
तुम्हें देखकर अब तो मैंने, निज को निज से जानके।
निज का शाश्वत वैभव पाया, आपा स्वयं पिछान के।।
पर आश्रय के सब दुख विनशे, आज हो जिनेन्द्रा।। 1।।
आतम सुखमय सुख का कारण, आज स्वयं ही देखा है।
आतम के आश्रय से जिनवर, मिटे करम की रेखा है।।
अपने में स्थिरता पाऊँ, चाहूँ यही जिनेन्द्रा।। 2।।
तुझ सी ही प्रभुता है निज में, नहीं मुझे कुछ करना है।
'है' की मात्र प्रतीति अनुभव, थिरता से शिव होना है।।
सब संकल्प-विकल्परहित हो, निज ध्याऊँ जिनेन्द्रा।।3।।

(63)

(तर्ज: इतनी शक्ति हमें देना दाता)

आज अद्भुत छवि निज निहारी, भाव दूर भगे सब विकारी।।टेक।।
पूर्ण प्रभुता प्रभु सी लखाई, दीनता आज सारी पलाई।
मैं स्वयं ही सहज सुख सागर, चेतनादिक गुणों का हूँ आगर।।
शक्ति शाश्वत अपरिमित सु धारी, आज अद्भुत छवि निज निहारी।।1।।
निज प्रदेशत्व रूपी किला है, जो कभी ना किसी से भिदा है।
कर्म रागादि भी रहते बाहर, पैठ पायें कदापि न अन्दर।।
अन्तरंग में सदा अविकारी, आज अद्भुत छवि निज निहारी।।2।।
भूल से हीन मैंने था माना, आज देखा स्वयं का निधाना।
अहा! वैभव अगुरुलघु ही पाया, द्रव्यपन ज्यों का त्यों ही लखाया।।
अब जरूरत सभी की विसारी, आज अद्भुत छवि निज निहारी।।3।।
जागी सम्यक्ज्ञान कला है, दूर भागी मिथ्यात्व बला है।
मुक्ति मुझको तो मुझमें ही दिखती, दृष्टि बाहर कहीं भी न टिकती।।
होवे थिरता प्रभो सुखकारी, आज अद्भुत छवि निज निहारी।।4।।
धन्य अवसर प्रभो आज पाया, मुझे निज का माहात्म्य दिखाया।
निज ही सर्वोत्कृष्ट सही है, कामना अब नहीं कुछ रही है।।
मैं तो मंगलमय चिन्मूर्तिधारी, आज अद्भुत छवि निज निहारी।।5।।

(64)

श्री जिनवर की सम्यक् भक्ति, हृदय हमारे सदा रहे।
जिनशासन की वैय्यावृत्ति, में तत्परता सदा रहे।। टेक।।
नहीं छिपावें अपनी शक्ति, कोई नहीं बहाना हो।

स्वार्थ और आलस्य नहीं हो, नहीं हृदय अभिमाना हो।।
समझें हम सौभाग्य सहज, उल्लास हृदय में सदा रहे।। 1।।
हो सूक्ष्म उपयोग हमारा, भाव हृदय का ग्रहण करें।
सर्व समर्पण रहे सदा, निश्चिंत और निर्भार रहें।।
ध्वजा सम्हालें जिनशासन की आत्मभावना सदा रहे।। 2।।
अरे कल्पना अपनी झूठी, मिथ्या जग-व्यवहारा है।
सम्यक्ज्ञानी गुरुओं ने ही, जिनशासन विस्तारा है।।
मोक्ष-क्षोभ से रहित परिणति समतामय ही सदा रहे।। 3।।
प्रामाणिक हो ज्ञान हमारा, हो सम्यक् श्रद्धान सदा।
हो निर्दोष आचरण सुखमय, नहीं शिथिलता कहीं कदा।।
हो प्रभावना मंगलकारी यही भावना सदा रहे।। 4।।
स्याद्वाद वाणी में वर्तें, नहीं विवादों में उलझें।
सत्य अहिंसामय हो जीवन, सर्व समस्याएँ सुलझें।।
अनेकान्तमय वस्तु व्यवस्था, हृदय हमारे सदा रहे।। 5।।
सम्यक् सोचें, सम्यक् बोलें, सम्यक् क्रिया हमारी हो।
अहंकार, ममकार न होवे, ज्ञान कला विस्तारी हो।।
शंका, भय तो लेश नहीं हो, निस्पृहता ही सदा रहे।। 6।।

(65)

शुभ काललब्धि जागी भगवन्, मैं पास आपके आया हूँ।
जागा है स्व-पर विवेक अहो, निज महिमा लख हर्षाया हूँ।।1।।
जिनवर गुणगान अहो निजगुण, चिन्तन का एक बहाना है।
तुम साक्षी में प्रभुवर मुझको, निज शुद्धातम को ध्याना है।।2।।

मैं नहीं अन्य कुछ तुम–सम प्रभु, चिन्मूरति श्रद्धा आई है।
स्थिर स्वरूप आनन्दमयी, कृतकृत्य दृष्टि प्रगटाई है।। 3।।
मैं कालातीत अखण्ड अनादि, अविनाशी ज्ञायक प्रभु हूँ।
प्रतिसमय–समय में पूर्ण अहो, ज्ञाता– दृष्टा ज्ञायक ही हूँ।।4।।
आनन्द प्रवाह अजस्र बहे, मैं सहज स्वयं आनन्दमय हूँ।
आनन्दमयी मेरा जीवन, मैं तो सदैव आनन्दमय हूँ।। 5।।
मम ज्ञान में ज्ञान ही भासित हो, फिर लोकालोक भले झलके।
पर्यय निज में ही मग्न रहे, बस कालाबली अनन्त बहे।।6।।

(66)

धन्य घड़ी मैं दर्शन पाया, आज हृदय में आनन्द छाया।
श्री जिनबिम्ब मनोहर लखकर, जिनवर रूप प्रत्यक्ष दिखाया।।1।।
मुद्रा सौम्य अखण्डित दर्पण, में निजभाव अखण्ड लखाया।
निज महिमा सर्वोत्तम लखकर, फूला उर में नहीं समाया।।2।।
राग प्रतीक जगत में नारी, शस्त्र द्वेष का चिह्न बताया।
वस्त्र वासना के लक्षण हैं, इन बिन निर्विकार है काया।।3।।
जग से निस्पृह अन्तर्दृष्टि, लोकालोक तदपि झलकाया।
अद्भुत स्वच्छ ज्ञानदर्पण में, मुझको ज्ञानहि ज्ञान सुहाया।।4।।
कर पर कर देखे मैं जब से, नहिं कर्तृत्व भाव उपजाया।
आसन की स्थिरता ने प्रभु, दौड़–धूप का भाव भगाया।।5।।
निष्कलंक अरु पूर्ण विरागी, एकहि रूप मुझे प्रभु भाया।
निश्चय यही स्वरूप सु मेरा, अन्तर में प्रत्यक्ष मिलाया।।6।।
जिनमुद्रा दृष्टि में बस गई, भव स्वाँगों से चित्त हटाया।
'आत्मन्' यही दशा सुखकारी, होवे भाव हृदय उमगाया।।7।।

(67)

जय–जय जिनवर जय–जय जिनवर, है दर्श आपका मंगलकर।
स्मरण आपका मंगलकर, जय–जय जिनवर जय–जय।। टेक।।
पूजक से नहिं राग जिनेश्वर, निंदक से नहिं द्वेष है।
वीतराग सर्वज्ञ ज्ञान में, झलके विश्व अशेष है।।
धर्मतीर्थ के परम–प्रणेता, दिव्यध्वनि है जग हितकर।। 1।।
षट् द्रव्यों का सहज परिणमन, होय सदा स्वाधीन है।
ज्यों–ज्यों उलझे पर–द्रव्यों में, भोगे दुःख असीम हैं।।
भेदज्ञान का मंत्र सिखाया, सब ही को आनन्दकर।। 2।।
परमानन्दमय चित्स्वरूप ही, लोकोत्तम अभिराम है।
ध्येय यही है आराधन से, हो परिणति निष्काम है।।
नाथ आपसे ही यह सीखा, स्वानुभूति ही है सुखकर।। 3।।
होकर प्रभु निर्ग्रन्थ मौन हो, ध्याऊँ आतमराम मैं।
निज प्रभुता में तृप्त रहूँ, विभु सहज लहूँ शिवधाम मैं।।
यही वंदना, यही अर्चना, संवेदन वर्ते सुखकर।। 4।।

(68)

तीन भुवन के स्वामी मेरे, आया सुखद सबेरा।
आनन्द उर न समाये, प्रभुवर दर्शन पाया तेरा।। टेक।।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, हम सुनी नहीं जिनवाणी।
कर्ता–धर्ता तुमको माना, कर बैठा नादानी।।
तुम तो साक्षीभूत जगत के, दूर हुआ भ्रम मेरा।। 1।।
कण–कण है स्वाधीन जगत का, तुमने प्रभु बतलाया।

निज-पर के कर्त्तापन का भ्रम, जिनवर दूर भगाया।।
सर्व विकल्प शून्य आनन्दमय, जिनवर दर्शन तेरा।।2।।
तन-मन कर्म रंग-रागादिक, देते भिन्न दिखाई।
सम्यग्ज्ञान कला उर जागी, निज प्रभुता मैं पाई।।
मुक्त स्वरूप अहो प्रगटा अब, सफल हुआ भव मेरा।।3।।
सम्यक् हुई प्रतीति प्रभुवर, तुम सम ही प्रभु मैं हूँ।
हूँ गुणधाम सहज अभिराम, सु आनन्द धाम सदा हूँ।।
निज में ही रम जाऊँ विभुवर, अभिनन्दन है तेरा।।4।।

(69)

है यही भावना हे स्वामिन्, तुम सम ही अन्तर्दृष्टि हो।
है यही कामना हे प्रभुवर, तुम सम ही अन्तर्वृत्ति हो।। टेक।।
तुमको पाकर सन्तुष्ट हुआ, निज शाश्वत पद का भान हुआ।
पर तो पर ही है देह स्वाँग, तुमको लख भेद-विज्ञान हुआ।।
मैं ज्ञानानंद स्वरूप सहज, ज्ञानानन्दमय मम सृष्टि हो।। है यही.।।1।।
तुम निर्मोही रागादि रहित, निष्काम परम निर्दोष प्रभो।
निष्कर्म, निरामय, निष्कलंक, निर्ग्रन्थ सहज अक्षोभ अहो।।
मेरा भी ऐसा ही स्वरूप, अनुभूति धर्ममय वृष्टि हो।। है यही.।।2।।
इन्द्रादिक चरणों में नत हों, पर आप परम निरपेक्ष रहो।
अक्षय वैभव अद्भुत प्रभुता, लखते ही चित आनन्दमय हो।।
हे परम पुरुष आदर्श रहो, उर में निष्काम सु-भक्ति हो।।है यही.।।3।।
संसार प्रपंच महा-दुखमय, मेरा मन अति ही घबड़ाया।
होकर निराश सबसे प्रभुवर, मैं चरण-शरण में हूँ आया।।

मम परिणति में भी स्वाश्रय से, रागादिक की निवृत्ति हो।। है यही. ।।4।।
जग ख्याति-लाभ की चाह नहीं, हो प्रगट आत्मख्याति जिनवर।
उपसर्गों की परवाह नहीं, आराधन हो सुखमय प्रभुवर।।
सब कर्म कलंक सहज विनशें, विभु निजानन्द में तृप्ति हो।। है यही. ।।5।।

(70)

सनाथाष्टक

देवों के देव श्री जिनदेव, नाथों के नाथ श्री जिननाथ।। टेक।।
महापुण्य से दर्शन पाया, भक्तिभाव उर में उमगाया।
स्वयमेव चरणों में झुकता है माथ, नाथों के नाथ श्री जिननाथ।।1।।
तुम ही हो जग में शरण सहारे, निरपेक्ष बांधव हो तुम ही हमारे।
अहो अहो तुम ही हो साँचे तात, नाथों के नाथ श्री जिननाथ।। 2।।
तुम से विमुख रह बहु दुख उठाये, आज विघन सब सहज नशाये।
दर्शन से स्वामी हुये हम सनाथ। नाथों के नाथ श्री जिननाथ।। 3।।
तत्त्वों का स्पष्ट ज्ञान हुआ है, निजपर का भेद-विज्ञान हुआ है।
अनुभव में आया है चैतन्य नाथ, नाथों के नाथ श्री जिननाथ।। 4।।
जग से उदासी हुयी सुखकारी, दूर हुये दुर्भाव विकारी।
मन में बसी है छवि मुनिनाथ, नाथों के नाथ श्री जिननाथ।। 5।।
वीतराग-निर्दोष सर्वज्ञ तुम्हीं हो, तीर्थ प्रणेता हितैषी तुम्हीं हो।
समवशरण में न हो दिन-रात, नाथों के नाथ श्री जिननाथ।। 6।।
चतुर्निकाय के इंद्र नमत हैं, चक्री नरेन्द्र मृगेन्द्र नमत हैं।
मुनीन्द्र गणीन्द्र नवावत हैं माथ, नाथों के नाथ श्री जिननाथ।। 7।।
रत्नत्रयमार्ग प्रभु ने दिखाया, मोक्षार्थी भव्यों को अन्तर में भाया।
हो ऐसा बल ध्यावें हम निज नाथ, नाथों के नाथ श्री जिननाथ।। 8।।

(71)

प्रभु वीतराग मुद्रा तेरी, कह रही मुझे निधि मेरी है।
हे परमपिता त्रैलोक्यनाथ, मैं करूँ भक्ति क्या तेरी है।।1।।
ना शब्दों में शक्ति इतनी, जो वरण सके तुम वैभव को।
बस मुद्रा देख हरष होता, आतम निधि जहाँ उकेरी है।।2।।
इससे दृढ़ निश्चय होता है, सुख ज्ञान नहीं है बाहर में।
सब छोड़ स्वयं में रम जाऊँ, अंतर में सुख की ढेरी है।।3।।
नहिं दाता हर्ता कोई है, सब वस्तु पूर्ण हैं निज में ही।
पूर्णत्व भाव की हो श्रद्धा, फिर नहीं मुक्ति में देरी है।।4।।

(72)

(तर्ज:प्रभु पै यह वरदान)

प्रभुवर! अन्तर्मुख हो जाऊँ।। टेक।।
देहादिक से भिन्न ज्ञानमय, ज्ञायक सहज लखाऊँ।
मिथ्या बहिर्दृष्टि प्रभु छूटे, अन्तर्दृष्टि पाऊँ।। 1।।
स्याद्वादमय जिन–आगम का, नित अभ्यास बढ़ाऊँ।
अनेकान्तमय तत्त्व भावना, अन्तरंग से भाऊँ।। 2।।
मिटे वासना इन्द्रियसुख की, सुक्ख अतीन्द्रिय पाऊँ।
मिथ्या प्रभुता का मद छूटे निज प्रभुता प्रगटाऊँ।। 3।।
होय विरागी सब परिग्रह तज, निर्ग्रन्थ पद अपनाऊँ।
परमानन्दमय परमातम पद, परमहर्ष से ध्याऊँ।। 4।।
कर्म कलंक समूल नशाऊँ, आवागमन मिटाऊँ।
नित्य निरंजन स्वाभाविक ध्रुव, अचल सिद्ध पद पाऊँ।।5।।

(73)

(तर्जः ऊँचे-ऊँचे शिखरों वाला है ये)

अद्भुत प्रभुता वाले हैं, ये प्रभुवर हमारे।
प्रभुवर हमारे, ये प्रभुवर हमारे।। टेक।।
ज्ञान में झलके लोकालोक, चित्स्वरूप अपना अवलोक।
निर्विकल्पता धारे हैं, ये प्रभुवर हमारे।। 1।।
अनुपम वैभव समवशरण के, शीश झुके जहँ शत इन्द्रों के।
वीतरागता धारे हैं, ये प्रभुवर हमारे।। 2।।
घाति कर्म बिन श्री अरहन्त, रहें सदा जग में जयवन्त।
केवल जाननहारे हैं, ये प्रभुवर हमारे।। 3।।
अहो परम उपकार तुम्हारा, जाना अपना जाननहारा।
परमानन्द विस्तारे हैं, ये प्रभुवर हमारे।। 4।।
प्रभु! चरणों में शीश नवावें, सम्यक् बोधि समाधि पावें।
मार्ग दिखावन हारे हैं, ये प्रभुवर हमारे।। 5।।

(74)

(तर्जः महावीर की जय बोल)

जिनवर की जय बोल,मुक्ति मार्ग मिले।
घट के पट तू खोल, भावविशुद्धि बढ़े।। टेक।।
मंगल अवसर आया,जिनवर शासन पाया।
तत्त्वारथ को तौल, भेदविज्ञान खिले ।। 1।।
देखो प्रभु की मूरत, ऐसी अपनी सूरत।
अन्तर माँहि टटोल, सम्यक् सूर्य खिले।।2।।
तत्त्वभावना भाओ, निज वैराग्य बढ़ाओ।

जग प्रपंच को छोड़, गुरु की गोद मिले।। 3।।
निर्ग्रन्थ पथ अपनाओ, ध्रुव शुद्धातम ध्याओ।
परिणति होय अडोल, कर्म कलंक टले।। 4।।
आतम निधि प्रगटावे, परमातम कहलावे।
शिवसुख होय अमोल, अक्षय ज्योति जगे।। 5।।

(75)

(तर्जः रंगमा रंगमा रंगमा रे)

जिनरूप प्रत्यक्ष दिखाय रहो रे।
आनन्द उर न समाय रहो रे।। टेक।।
समवशरण सम है जिन मंदिर।
जिन सम जिन प्रतिमा अति सुंदर।।
शान्त स्वरूप दिखाय रहो रे।। 1।।
आयुध अम्बर नारि नहीं हैं।
नग्न दिगम्बर रूप सही है।।
बिन श्रृंगार सुहाय रहो रे।। 2।।
अचलासन शुभ नासादृष्टि।
धर्मामृत की करती वृष्टि।।
भव्य समूह नहाय रहो रे।। 3।।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर।
ब्रह्मा विष्णु तुम्हीं शिव शंकर ।।
जय जयकार गुँजाय रहो रे।। 4।।
धन्य हुए हैं तृप्त हुए हैं।
भाव हमारे शुद्ध हुए हैं।।

रत्नत्रय प्रगटाय रहो रे।। 5।।
भक्ति भाव से शीस नवावें।
प्रभुवर तत्त्व भावना भावें।।
ज्ञान में ज्ञान जनाय रहो रे।। 6।।

(76)

(तर्जः आज हम जिनराज तुम्हारे)

अहो! अहो! जिननाथ, आपकी शरण में आये।
शरण में आये, शरण में आये।। टेक।।
प्रभो आपके दर्शन पाकर,सहजानन्द विलसाये।
भेदज्ञान की कला प्रकाशे,संकट सर्व नशाये।। 1।।
प्रभु समान ही अक्षय प्रभुता,अन्तर माँहि दिखाये।
ऐसा हो पुरुषार्थ सु परिणति,निज में ही रम जाये।।2।।
सहज अकर्त्ता ज्ञाता जिनवर,महिमा कही न जाये।
दर्शन करके वचन श्रवण कर, भवि शिवपद प्रगटाये।।3।।
भोगों की अब चाह न किंचित्,वीतराग पद भाये।
रहूँ परम निर्द्वन्द जिनेश्वर,आकुलता मिट जाये।।4।।
साँचे तारणहार मिले हैं,भक्ति हृदय उमगाये।
हो अन्तर्मुख तृप्त स्वयं में, शाश्वत प्रभु हम पायें।।5।।

(77)

(तर्जः गगन मंडल में उड़ जाऊँ)

प्रभु की अदभुत छवि निरखो[2]।
साँचे नेता मोक्षमार्ग के, वीतराग परखो।। टेक।।

धन्य प्रभु की नासा दृष्टि, सिखलावे हमको।
सुख शान्ति तो अन्तर में ही, पर में नहीं भटको।।1।।
हाथ पै हाथ धरै ऐसे प्रभु, उपदेशें सबको।
छोड़ो मिथ्या अहंकार पर, माहिं कर्त्तृत्व को।।2।।
यथाजात आनन्द रूप, अचलासन मुद्रा को।
देख निहारो अन्तर माहिं, निज ज्ञायक प्रभु को।।3।।
करो सर्वथा बन्द अरे! पर्यायार्थिक चक्षु को।
खुली हुई द्रव्यार्थिक चक्षु से, अदभुत छवि निरखो।।4।।
स्वयं स्वयं में तृप्त रहो, ध्यावो निज आतम को।
छोड़ो ममता धारो समता, पाओगे प्रभु को।। 5।।

(78)

(तर्जः रंगलाग्यो महावीर थारो रंगलाग्यो)

मन भायो महावीर जिनरूप भायो।
जिनरूप भायो निजरूप भायो।।टेक।।
जिन रूप जग में अलौकिक है पाया।
जिनरूप आनन्दमय है दिखाया।।
होवे प्रगट मेरे भाव आयो।।1।।
जिसमें कषायों का क्लेश नहीं है।
जिसमें परिग्रह का लेश नहीं है।।
सहज आनन्दमय रूप भायो।। 2।।
कर्म-कलंक रहित अविकारी।
दर्श ज्ञान सुख बल अनंत धारी।।

त्रिभुवनपूज्य स्वरूप भायो।। 3।।
निंदक से द्वेष कर श्राप नहिं देते।
पूजक को राग से वरदान नहिं देते।।
वीतराग अदभुत स्वरूप भायो।। 4।।
प्रभु सम ही शाश्वत आतम स्वभाव।
परभाव शून्य है ज्ञायक स्वभाव।।
नित्य निरंजन स्वदेव भायो।। 5।।
वाँछा नहीं कुछ निजप्रभु ही ध्याऊँ।
निर्ग्रन्थ होऊँ शिवपद को पाऊँ।।
भक्ति से चरणों में शीश नायो।। 6।।

(79)

प्रभु की हो रही जय जयकार, भासे ज्ञायक पद ही सार।
ज्ञायक आराधन से ही हो, सहज मुक्ति अविकार।।टेक।।
पाप उदय में सब दुख मानें, पुण्य भी है दुःखकार।
अब न गवाऊँ एक समय भी,इस संसार मंझार।। 1।।
आत्म स्वभाव सहज आनन्दमय,महिमा अपरम्पार।
प्रगटा सहज अतीन्द्रिय आनन्द, लगे विभाव असार।।2।।
प्रीति-अप्रीति रहित शाश्वत निज, समयसार निर्धार।
निशदिन सहज रहूँ केवल मैं, देखन जाननहार।।3।।
ज्ञान-ज्ञेय-ज्ञाता मैं भी नहीं, दीखे भेद लगार।
करते निर्विकल्प अनूभूति, रहूँ सहज निर्भार।।4।।

(80)

(तर्ज : आओ जिनमंदिर में आओ)

आओ प्रभु की शरण में आओ, निजानंद निज में ही पाओ।।टेक।।
पूर्णानंदमय अहो जिनेश्वर, परमानंदमयी परमेश्वर।
निरख-निरख आनंद विलसाओ।। निजानन्द.।। 1।।
पूर्ण ज्ञानमय श्री जिन स्वामी, अनंतज्ञानमय अन्तर्यामी।
लखकर आत्मज्ञान प्रगटाओ।। निजानन्द.।। 2।।
रागादिक दोषों से न्यारे, परम शुद्ध जिनदेव विराजे।
लखकर भाव विशुद्धि बढ़ाओ।। निजानन्द.।। 3।।
कुछ न रहा करने को काजा, बल अनंतमय श्री जिनराजा।
निज सम्यक् पुरुषार्थ बढ़ाओ।। निजानन्द.।। 4।।
अद्भुत प्रभुतामय परमातम, शाश्वत प्रभुतामय शुद्धातम।
अब अक्षय प्रभुता दरशाओ।। निजानन्द.।। 5।।
अहो अलौकिक वैभव प्रभु का, प्रभु जैसा ही निरखो निज का।
निज में ही संतुष्ट रहाओ।। निजानन्द.।। 6।।
गुण अनंतमय श्री भगवाना, अनुपम रूप अहो पहिचाना।
नहीं अन्यत्र व्यर्थ भरमाओ।। निजानन्द.।। 7।।
निमित्तभूत प्रभुवर को निरखो, उपादान अंतर में परखो।
प्रभु को नम निज में नम जाओ।। निजानन्द.।। 8।।
महाभाग्य से पाया अवसर, आतमहित कर लो भवि सत्वर।
सहज तत्त्व पा सहज रहाओ।। निजानन्द.।। 9।।

(81)

(तर्ज : चित्स्वरूप महावीर)

ज्ञानानंद बरसाय, नाथ तेरी भक्ति में।
आनंद उर न समाय, नाथ तेरी भक्ति में।। टेक।।
मूरति है प्रभु ध्यानमयी, भाव जगावे ज्ञानमयी।
परमानंद उलसाय, नाथ तेरी भक्ति में।।1।।
अनंत चतुष्टय अविकारी, गुण अनंत मंगलकारी।
आतम महिमा आय, नाथ तेरी भक्ति में।।2।।
हाथ पै हाथ धरे स्वामी, अन्तर्दृष्टि सुखदानी।
भेदविज्ञान जगाय, नाथ तेरी भक्ति में।।3।।
अहो! आप सा आत्म स्वरूप, नित्य निरामय शुद्ध चिद्रूप।
प्रत्यक्ष रहो दिखाय, नाथ तेरी भक्ति में।।4।।
दर्शन करते आनन्द हो, गुण चिंतत परमानन्द हो।
स्वयं शीस नमि जाय, नाथ तेरी भक्ति में।।5।।

(82)

(तर्ज : छोटा सा मन्दिर)

जिनवर के दर्शन को आयेंगे, भक्ति की गंगा बहायेंगे।
ज्ञानमयी जिन दर्शन करके, आतम दर्शन पायेंगे।। टेक।।
निश्चल मुद्रा प्रभुवर की लखकर, चंचलता दूर भगायेंगे।।1।।
हाथ पै हाथ प्रभु जी के लखकर, कर्त्तृत्व बुद्धि नशायेंगे।।2।।
अन्तर्दृष्टि प्रभुजी की लखकर, अन्तर्मुख हो जायेंगे।। 3।।
वीतरागता प्रभुवर की लखकर, रागादि भिन्न जनायेंगे।।4।।

सर्वज्ञता प्रभुवर की लखकर, ज्ञानमयी हो जायेंगे।। 5।।
जाननहार प्रभु ज्यों तुम हो, जाननहार रहायेंगे।। 6।।
विषय-कषाय परिग्रह तजकर, निर्ग्रन्थ दशा प्रगटायेंगे।।7।।
निश्चल हो निज ध्यान धरेंगे, प्रभु समान हो जायेगें।। 8।।

(83)

(तर्ज : केशरिया-केशरिया)

ज्ञानमयी ज्ञानमयी, ज्ञानमयी आनन्दमयी।।टेक।।
द्रव्य हमारा ज्ञानमयी, क्षेत्र हमारा ज्ञानमयी।
काल हमारा ज्ञानमयी, भाव हमारा ज्ञानमयी।।
लक्षण हमारा ज्ञानमयी, लक्ष्य हमारा ज्ञानमयी।
निश्चय हमारा ज्ञानमयी, व्यवहार हमारा ज्ञानमयी।।
सर्वस्व हमारा ज्ञानमयी, ज्ञानमयी आनन्दमयी।।1।।
देव हमारे ज्ञानमयी, गुरु हमारे ज्ञानमयी।
धर्म हमारा ज्ञानमयी, तीर्थ हमारा ज्ञानमयी।।
जिनवाणी है ज्ञानमयी, आराधन है ज्ञानमयी।
भक्ति हमारी ज्ञानमयी, श्रद्धा भी है ज्ञानमयी।।
चर्या हमारी ज्ञानमयी, ज्ञानमयी आनन्दमयी।।2।।
द्रव्य हमारा ज्ञानमयी, गुण-पर्याय भी ज्ञानमयी।
वैभव हमारा ज्ञानमयी, प्रभुता हमारी ज्ञानमयी।।
मुक्ति का मारग ज्ञानमयी, मुक्ति हमारी ज्ञानमयी।
जीव मात्र है ज्ञानमयी, होवे प्रभावना ज्ञानमयी।।
सर्वांग हमारा ज्ञानमयी, ज्ञानमयी आनन्दमयी।।3।।

(84)

करलो प्रभु गुणगान जी, कर लो भेदविज्ञान जी।
शुद्धातम ही सार है, शेष सर्व निस्सार है।। टेक।।
अन्तर्मुख हो निज को ध्यावे, सोई सहज ज्ञान सुख पावे।
प्रभुवर का सन्देश यही, समयसार का सार यही।। करलो. ।।1।।
विनाशीक यौवन तन-मन-धन, आत्म ज्ञान बिन सूना जीवन।
समझो समझो जिनवाणी, विषय कषाय तजो प्राणी।। करलो. ।।2।।
कहती हमसे जिनमुद्रा, धारो-धारो जिन मुद्रा।
परिग्रह तो दुःखरूप ही है, आनंदमय जिनरूप ही है।। करलो. ।।3।।
जहाँ न कोई आधि-उपाधि, उपसर्गों में सहज समाधि।
नया कर्म आश्रव रुक जाय, पूरब कर्म बंध विनशाय।। करलो. ।।4।।
सहज अकर्त्ता ज्ञाता होओ, सर्व कर्म मल क्षण में धोओ।
शिवपद पाओ अविनाशी, अक्षय अनुपम सुख राशि।। करलो. ।।5।।

(85)

(तर्ज : महावीर की जय बोल)

अवसर है सुखकार, जिनभक्ति करलो।
निज पर भेद विचार, निज अनुभव करलो।। टेक।।
प्रभु की छवि सु निहारो, वस्तु स्वरूप विचारो।
शुद्धातम ही सार, अब दृष्टि करलो।। 1।।
पुण्योदय की माया, सपने सम लख भाया।
तजकर विषय-कषाय, संयम चित धरलो।। 2।।
अपना प्रभु आराधो, परम साध्य को साधो।
ज्ञायक प्रभु अविकार, परिणति में वरलो।।3।।

पक्ष विकल्प न लाओ, अन्तर्द्वन्द मिटाओ।
सहज तत्त्व अवधार, भवसागर तिरलो।।4।।
मोक्षमार्ग के नेता, सब कर्मों के भेत्ता।
केवल जाननहार, प्रभु गुण चित्त धरलो।।5।।
चरण शरण में आओ, भक्ति सहित शिर नाओ।
सुगुण रतन भंडार, प्रभु दर्शन करलो।।6।।

(86)

(तर्ज : केशरिया-केशरिया)

शान्तिमयी शान्तिमयी, मूरति देखो शान्तिमयी।। टेक।।
पद्मासन है शान्तिमयी, नासादृष्टि शान्तिमयी।
हाथ पै हाथ है शान्तिमयी।। 1।।
राग नहीं है द्वेष नहीं है, अरे विकारी वेश नहीं है।
सहज दिगम्बर शान्तिमयी।। 2।।
जिनवर दर्शन सुखकारी, ध्यानमयी प्रभु अविकारी।
ध्येय दिखावें शान्तिमयी।। 3।।
अरे भव्य नहीं भटकाओ, शरण में जिनवर की आओ।
पाओ निजपद शान्तिमयी।। 4।।
शिवपथ का आदर्श अहा, सहज दिगम्बर रूप कहा।
पूजो ध्याओ शान्तिमयी।। 5।।
बिन बोले भी बोल रही, परमतत्त्व दर्शाय रही।
मुद्रा प्रभु की शान्तिमयी।। 6।।
शीश नवाओ भक्ति से, शिवपद साधो भक्ति से।
हो निर्वांछक शान्तिमयी।। 7।।

(87)

(तर्ज : धन्य-धन्य आज घड़ी)

धन्य-धन्य वीतराग देव अविकार हैं।
दर्श सुखकार है, दर्श सुखकार है।। टेक।।
अद्भुत अलौकिक सु मूरति है सोहती।
सहज ही भव्यों के मन को सु मोहती।।
भव-भव का मोह नशे, सर्व मंगलकार है।। 1।।
दर्शन से भेदज्ञान, निज पर का जागता।
दुःखमय असार सब, संसार भासता।।
लगे लगन अन्तर की, भावे समयसार है।। 2।।
स्वाभाविक सुख शान्ति, प्रभु समीप मिलती।
दुविधा सु-मन की, सब ही विनशती।।
रत्नत्रय सम्यक्, प्रगटे अपार है।। 3।।
ज्ञान-वैराग्यमय, जीवन सुहाता।
निर्ग्रन्थ मार्ग ही, मन को है भाता।।
ऐसी दशा पाऊँ प्रभो, नमन बारम्बार है।। 4।।

(88)

(तर्ज : तुम्हारे दर्श बिन)

अहो! प्रभु ध्यान की मुद्रा, परम आनन्ददाता है।
ध्येय ध्रुव रूप शुद्धातम, सहज अनुभव में आता है।। टेक।।
नशे अविवेक दुखकारी, भगे दुर्मोह तम तत्क्षण।
सर्व दुर्वासना मिटती, ज्ञान सूरज उगाता है।। 1।।
ज्यों दृष्टा ज्ञाता हैं जिनवर, त्यों मैं भी दृष्टा ज्ञाता हूँ।

सर्व दोषों से नित न्यारा, शुद्ध चिद्रूप दिखाता है।। 2।।
मिली सुख शान्ति निज में ही, अपरिमित प्रभुता निज में है।
तृप्त निज में हुआ स्वामिन्, न बाहर कुछ सुहाता है।।3।।
नहीं अब भय रहा कुछ भी, प्रलोभन भी न कुछ प्रभु है।
स्वयंसिद्ध पूर्ण परमातम, पूर्ण शाश्वत रहाता है।। 4।।
सहज भाऊँ, सहज ध्याऊँ, सहज रम जाऊँ निज में ही।
सहज कट जावें भव बन्धन, सहज ही मोक्ष पाता है।।5।।

(89)

(तर्ज : सुनकर वाणी)

लखकर मूरति जिनवर की, म्हारे आनन्द उर न समाय जी।टेक।।
भव-भव का दुर्मोह नशाया, निज निधि मिली अथाह जी।।1।।
निज-पर भेदविज्ञान जग्यो अब, पाई शिवपद राह जी।।2।।
इष्ट-अनिष्ट कल्पना विनशी, साम्य भयो सुखदाय जी।।3।।
ऐसा आतम ध्यान धरूँ मैं, सर्व विभाव नशाय जी।। 4।।
तत्त्व भावना वर्ते स्वामिन् , सहज भक्ति उमगाय जी।। 5।।
द्रव्य नमन हो, भाव नमन हो, गुण गाऊँ हरषाय जी।।6।।

(90)

(तर्ज : लिया प्रभु अवतार)

जिनदर्शन सुखकार, जय-जयकार, जय-जयकार, जय-जयकार।
प्रभु दर्शन सुखकार, जय जयकार, जय जयकार, जय जयकार।।टेक।।
जग में है जिनरूप अलौकिक, मिलती जिससे शान्ति अलौकिक।
भव दुख भंजनहार, जय जयकार... ।। 1।।
देखो प्रभु का कैसा ध्यान, गुण चिन्तत हो भेदविज्ञान।

आनन्द अपरम्पार जय जयकार...... ।। 2 ।।
वीतराग परिणति अविकारी, परम अनन्त चतुष्टय धारी।
साँचे तारणहार, जय जयकार...... ।। 3 ।।
दिव्य तत्त्व प्रभु ध्वनित हुए हैं, भव्य सहज प्रतिबुद्ध हुए हैं।
तिहुँ जग मंगलकार, जय जयकार...... ।। 4 ।।
हम भी यही भावना भावें, प्रभु जैसे निज गुण प्रगटावें।
वन्दन शत-शत बार, जय जयकार..... ।। 5 ।।

(91)

(तर्ज : वर्तमान को वर्द्धमान की आवश्यकता है)

अहो ! जिनेश्वर हमें आपका दर्शन भाता है ।
अहो! जिनेश्वर हमें आपका रूप सुहाता है।। टेक।।
दर्शन रूप, ज्ञान स्वरूप, सुख स्वरूप, वीर्य स्वरूप।
अनन्त चतुष्टय से मंडित, प्रभु रूप सुहाता है।। 1।।
नित निर्दोष, नित निर्द्वन्द, नित चेतनमय ज्योति अमन्द।
मोह महातम चित्स्वभाव में नहीं दिखाता है।। 2।।
निज में तृप्त, निज में लीन, हुए कर्म बन्धन प्रक्षीण।
भवि जीवों को आराधन का, मार्ग दिखाता है।। 3।।
अनुपम रूप, मंगल रूप, लोकोत्तम नित शरण स्वरूप।
विभो! आपके चरणों में, दुख स्वयं नशाता है।। 4।।
महिमामय, गरिमामय, नित्य निरंजन परम अभय।
हे तेजपुंज! तुम गुण गाते, अति आनन्द आता है ।।5।।

(92)

(तर्ज : धन्य-धन्य आज घड़ी)

धन्य-दिन धन्य-घड़ी, महासुखकार है।
प्रभुजी का दर्श हुआ आनन्द अपार है।। टेक।।
इन्द्रादि चरणों में शीश नवाये हैं।
धन्य-धन्य जिनराज निज में समाये हैं।।
दृष्टि नासाग्र कहे आत्मा ही सार है।। 1।।
देखने जानने योग्य निज आत्मा।
आत्मरसी अनुभवी ही होय अन्तरात्मा।।
निर्ग्रन्थ साधु होय, ध्यावे समयसार है।। 2।।
जितेन्द्रिय पूज्य गुरु, आत्मा में लीन हैं।
आत्म कल्याण माँहि, परम प्रवीण हैं।।
आत्म-ध्यान द्वारा ही, होय भव पार है।। 3।।
आपके प्रसाद से ही, पाया भगवान है।
अपने ही अन्तर में, आनन्द निधान है।।
तृप्ति मिली, शान्ति मिली, तेरा ही उपकार है।।4।।
रहूँ निर्द्वन्द प्रभु, भाऊँ मैं चिद्रूप ।
अनुभव ही चिन्तामणि, अनुभव है रसकूप।।
निज में ही मग्न रहूँ, वन्दना अविकार है।। 5।।

(93)

(तर्ज : मनहर तेरी मूरतिया)

चिदानन्द चिद्रूप अहो, प्रत्यक्ष नाथ दिखाया।
अनुभव में आया-आया, दृष्टि में आया।। टेक।।

भूल स्वयं को बहु दुख पाया, अब सब क्लेश नशाया।
जब से देखा अन्तर में ही, परमानन्द विलसाया।। चिदानन्द.।। 1।।
नित्य निरंजन प्रभु परमेश्वर, शुद्धातम ही भाया।
सहज स्वयं में तृप्त हुआ, प्रभु जाननहार जनाया।। चिदानन्द.।। 2।।
दुर्विकल्प सब दूर हुए, नय-पक्ष भी नहीं दिखाया।
हुआ सहज मध्यस्थ जिनेश्वर, ज्ञायक रूप सुहाया।। चिदानन्द.।। 3।।
करना कुछ भी नहीं रहा प्रभु, स्वयं सिद्ध पद पाया।
मग्न रहूँ अपने में ही जिन, यही भाव उमगाया।। चिदानन्द.।। 4।।
है उपकार अनन्त जिनेश्वर, आवागमन मिटाया।
हो अद्वैत नमन परमातम,पाने योग्य सु-पाया।। चिदानन्द.।। 5।।

(94)

(तर्जः चाह जगी है दर्शन की)

प्रभु दर्शन कर चाह जगी, निज प्रभुता प्रगटावन की।।टेक।।
प्रभु जैसा निज रूप दिखा, अन्तर में प्रत्यक्ष लखा।
रुचि जागी निज आतम की,निज प्रभुता प्रगटावन की।।1।।
प्रभु जैसी ही शक्ति अनन्त,शुद्धातम में भी झलकन्त।
पामरता की बुद्धि भगी, निज प्रभुता प्रगटावन की।। 2।।
बाहर में कुछ दिखे न सार, भासे मिथ्या जग व्यवहार।
सत्य शरण परमातम की, निज प्रभुता प्रगटावन की।।3।।
प्रभुवर जैसे जाननहार, वैसा मैं भी जाननहार।
कर्त्तापन की भ्रांति मिटी, निज प्रभुता प्रगटावन की।।4।।
स्वाश्रय से होऊँ निर्ग्रन्थ, स्वाश्रय से विचरूँ शिवपंथ।
चाह मिटी भव भोगन की, निज प्रभुता प्रगटावन की।।5।।

निज में ही संतुष्ट रहूँ, स्वयं-स्वयं में तृप्त रहूँ।
टूटे सन्तति करमन की, निज प्रभुता प्रगटावन की ।।6।।

(95)

मेरी परिणति में आनन्द अपार, नाथ तेरे दर्शन से।
दर्शन से,नाथ तेरे दर्शन से।। टेक।।
मूरति प्रभु कल्याण रूप है,स्वानुभूति की निमित्तभूत है।
भेदविज्ञान हो सुखकार, नाथ तेरी वाणी से ।। 1।।
अनादिकाल का मोह नशाया, निज स्वभाव प्रत्यक्ष लखाया।
प्रभु मोह नशे दु:खकार,शुद्धातम दर्शन से ।। 2।।
रागादिक अब दु:खमय जाने, ज्ञानभाव सुखमय पहिचाने।
मैं तो आज लखो भव पार, नाथ तेरे दर्शन से।। 3।।
तिहुँलोक तिहुँकाल मँझारा, निज शुद्धातम एक निहारा।
शिवस्वरूप शिवकार, नाथ तेरे दर्शन से।। 4।।
तोड़ सकल जग द्वंद-फंद प्रभु, मैं भी निज में रम जाऊँ विभु।
भाव यही अविकार, नाथ तेरे दर्शन से।। 5।।

(96)

(तर्जः तुम्हारे दर्श बिन स्वामी मुझे)

अहो! भगवन्त का दर्शन, परम आनन्द दाता है।
द्रव्यदृष्टि से जो देखे, शांति निज में ही पाता है।। टेक।।
देखकर स्वयं की प्रभुता, अहो चैतन्यमय वैभव।
सहज ही तृप्ति होती है,मोह मिथ्या पलाता है।। 1।।
परम ध्रुव तत्त्व के सन्मुख, परिणति स्वाँग सम दीखे।

सर्व परभावों से न्यारा, एक ज्ञायक दिखाता है।।2।।
सहज आत्मानुभव होवे,मुक्ति मारग प्रगट होता।
विशुद्धि बढ़ती ही जाती,ज्यों ज्यों निज भाव भाता है।।3।।
दशा निर्ग्रन्थ होती है, चौकड़ी तीन जहँ नाशें।
स्वाभाविक ज्ञान आनन्दमय,साधु जीवन सुहाता है।।4।।
महाआनन्दमय चैतन्य, में रमते चढ़े श्रेणी।
वैभाविक कर्म सब विनशे,स्वयं ही प्रभु कहाता है।।5।।

(97)

(तर्ज:जब तीर्थंकर का जन्म हुआ)

मैं उस पथ का अनुगामी हूँ, जिस पर चलकर प्रभु सिद्ध हुए।
प्रभु सिद्ध हुए प्रभु मुक्त हुए, जिस पर चलकर प्रभु सिद्ध हुए।टेक।।
है मूल अहो सम्यग्दर्शन, पथ सम्यग्ज्ञान विरागमयी।
पर से निरपेक्ष सहज स्वाश्रित, निर्ग्रन्थ मार्ग आनन्दमयी।।1।।
अविरल आतम अनुभव वर्ते, स्वयं-स्वयं में तृप्ति हो।
सब ज्ञेय ज्ञान में रहें भले,पर किञ्चित् नहीं आसक्ति हो।।2।।
नहीं असत् विभावों की चिन्ता, नहीं वाँछा हो परभावों की।
निर्वेद रहूँ निष्काम रहूँ, नहीं चंचलता हो भावों की।।3।।
आराधन में ही मग्न रहूँ,ध्येय-ध्याता ध्यान विकल्प नहीं।
निश्चलता हो अविकलता हो, जब कोई अन्तर जल्प नहीं।।4।।
बस सहज ध्यान धारा वर्ते, भव बन्धन टूटें शिव पाऊँ।
ज्ञायक हूँ-ज्ञायक रहूँ सदा, अपनी प्रभुता मैं विलसाऊँ।।5।।

(98)

(तर्ज: सोनागिर में पंचकल्याणक)

प्रभुता प्रभु की मंगलकारी,मंगलकारी आनंदकारी।
जयवन्तो जिनराज रे, आनन्द अपरम्पार रे।। टेक।।
महाभाग्य से दर्शन पाये, मोहादिक दुर्भाव नशाये।
मूरति प्रभु की सब दुःखहारी, प्रभुता प्रभु की मंगलकारी।। 1।।
चित्स्वरूप अपना पहिचाना, कर्म प्रपंच भिन्न सब जाना।
वाणी प्रभु की आनन्दकारी, प्रभुता प्रभु की मंगलकारी।। 2।।
असत् विभावों की नहिं चिन्ता, स्वाश्रय से हो सहज ही अन्ता।
अद्भुत महिमा नाथ निहारी, प्रभुता प्रभु की मंगलकारी।। 3।।
प्रभु चरणों में शीश नवाऊँ, निर्ग्रन्थ पद की भावना भाऊँ।
पाऊँ ज्ञायक पद अविकारी, प्रभुता प्रभु की मंगलकारी।। 4।।

(99)

(तर्ज: आज हम जिनराज तुम्हारे)

आज हम जिनराज तुम्हारी भक्ति रचायें।। टेक।।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभो हो, नासादृष्टि लगाये।
अदभुत शान्तिमयी छवि तेरी, सबके मन को भाये।। 1।।
सभी द्रव्य स्वयमेव पूर्ण हैं, कोई कुछ नहिं चाहे।
स्वयं परिणमन होता सबका, आज समझ में आये।। 2।।
द्रव्यदृष्टि से तुम सम ही हूँ,जान हर्ष मन छाये।
पर्याय शुद्धि हेतु प्रभु जी, परम पुरुषार्थ जगाये।। 3।।
पुण्योदय भी मीठा विष है, इसमें नहिं अटकायें।
वीतराग-विज्ञान भावमय, मम परिणति हो जाये।। 4।।

यही भावना है अब मेरी, सम्यग्दर्शन पायें।
ज्ञान–चरित उन्नत कर अपना, जीवन सफल बनायें।।5।।

(100)

(तर्जः ज्ञान की उड़े रे गुलाल)

मंगल बेला आई रे, जिनदर्शन करो–जिनपूजन करो।
तत्त्वज्ञान करो, आत्मध्यान करो, पाओ पद निर्वाण रे।।टेक।।
जिनदर्शन से पाप कटत हैं, जिन दर्शन से मोह नशत है।।1।।
महाभाग्य जिन दर्शन पावे, निज पर भेदविज्ञान जगावे।।2।।
साक्षी में जिनवर की ज्ञानी,करें स्वानुभव मुक्ति निशानी।।3।।
जाने सब संसार असारा,धारे निर्ग्रन्थ पद अविकारा।।4।।
आत्म ध्यान धरि कर्म नशावें, प्रभु सम निज प्रभुता प्रगटावें।।5।।

(101)

जिन गुण गाओ हर्षाओ, जय जय से नभ गुँजाओ।
धर्म महोत्सव सुखकारी, अविकारी मंगलकारी।।टेक।।
सुख शांति तो आत्म ज्ञान से ही मिलती।
ज्ञान कला भी निज अन्तर में ही खिलती।।
अवसर आया सहजहिं पाया, जिनवर धर्म सु हितकारी।।1।।
तत्त्व प्रयोजनभूत आत्मन् पहिचानो।
भेदज्ञान कर स्वानुभूति उद्यम ठानो।।
छोड़ राग रुष हो अन्तर्मुख, पाओ निधि आनंदकारी।।2।।
धर्मी तो निज शुद्धातम भगवान है।
ज्ञानमूर्ति निर्दोष परमसुख धाम है।।

निज की श्रद्धा अनुभव थिरता, धर्म सर्व संकटहारी।।3।।
अटक न जाना शुष्क ज्ञान आलापों में।
भटक न जाना फँसकर क्रियाकलापों में।।
शरण एक ही ध्येय एक ही, निज ज्ञायक प्रभु अविकारी।।4।।

(102)

(तर्ज: श्री सिद्धचक्र का पाठ करो)

हे वीतराग भगवान, सहज गुणखान।
परम उपकारी, कैसे थुति करें तुम्हारी।। टेक।।
हे दर्शन-ज्ञान अनंत विभो, सुख वीरज का नहीं पार अहो।
हे सुगुण अनन्तानंत दिव्य अविकारी। कैसे.।।1।।
रागादि विभाव न लेश रहें, सब कर्म बन्ध निःशेष भये।
अक्षय अनंत प्रभुता प्रगटी सुखकारी।। कैसे.।।2।।
भक्ति पूजा से हर्ष न हो, निंदा से किंचित् रोष न हो।
समवृत्ति सातिशय परमांनद दातारी।। कैसे.।।3।।
अन्तर की प्रभुता दर्शायी, अनुभव की विधि भी सिखलायी।
निर्ग्रन्थ मार्ग दर्शाया जग हितकारी।। कैसे.।।4।।

(103)

(तर्ज : शोभे समवशरण सुखकार)

नाथ तेरी महिमा अगम अपार[2]।। टेक।।
पूर्ण वीतरागी होकर भी, करो परम उपकार।
झलकें ज्ञेय ज्ञान में तद्यपि, आत्मलीन अविकार।। 1।।
वीर्य अनन्त प्रगट भयो स्वामी, सौम्य रूप सुखकार।
निःकषाय रह कर्म विनाशे, जीते सर्व विकार।। 2।।

शोभा तीन लोक में अनुपम, यद्यपि नहीं श्रृंगार।
बाह्य विभूति लेश न राखी, तो भी अपरम्पार।। 3।।
समवशरण की शोभा न्यारी, कह नहिं सकूँ लगार।
द्वादश सभा मुग्ध हो सुनती, दिव्यध्वनि सुखकार।। 4।।
आत्मबोध पाकर भवि प्राणी, होते भव से पार।
धन्य भयो प्रभु दर्शन पायो, शाश्वत मंगलकार।। 5।।
द्रव्य नमन हो, भाव नमन हो, सहज नमन अविकार।
प्रभु तुम सम निज में रम जाऊँ, रहूँ सु-जाननहार।। 6।।

(104)

(तर्ज : मैनें तेरे ही भरोसे)

तेरी साक्षी में अहो जिनराज, सहज पद पायो है।। टेक।।
पर्यायों से हो अनित्य, द्रव्यदृष्टि से नित्य।
चित्स्वरूप तो चित्स्वरूप ही, ध्याऊँ परम पवित्र।। 1।।
सहज प्राप्य प्रभु है निज में ही, सदाकाल शिवरूप।
नित्य-निरंजन अकृत्रिम, भगवान सहज चिद्रूप।। 2।।
शक्ति अनन्ता है अविनाशी, वैभव से भरपूर।
अव्याबाध परम मंगलमय, सब क्लेशों से दूर।। 3।।
स्वतः सिद्ध ज्ञायक परमेश्वर, सहज रूप है ज्ञेय।
क्षण-क्षण भाऊँ क्षण-क्षण ध्याऊँ, ज्ञानानंदमय ध्येय।। 4।।
ज्ञानानंदमय आत्मा, वर्ते सहजहि ध्यान।
सहज नमन आनंदमय, शीघ्र लहूँ निर्वाण।। 5।।

(105)

प्रभु आदर्श रहो, प्रभु आदर्श रहो [2]।
तुम सम ही आतम आराधूँ, निज पद पाऊँ अहो।। टेक।।
परम दिगम्बर मुद्रा तेरी, दर्शन से मिटती भव फेरी।
मंगल रूप विभो ।। 1।।
भेदज्ञान की ज्योति जगाती, दुर्विकल्प क्षण माँहि नशाती।
मूरत शांत प्रभो।। 2।।
जग वैभव निस्सार दिखावे, निज वैभव ही मुझे सुहावे।
हृदय हर्षित हो।। 3।।
ज्ञानमात्र निजभाव पिछाना, उपादेय आतम ही जाना।
अविरल ध्याऊँ प्रभो।। 4।।
ध्येयरूप ध्रुव भाव निहारा, ध्याता-ध्यान अभेद चितारा।
सहजहि आनंद हो।। 5।।
निर्ग्रन्थ हूँ निर्ग्रन्थ रहूँ प्रभु , निज में ही संतुष्ट रहूँ अब।
भाव नमन नित हो।। 6।।
नहीं भ्रमाऊँ नहीं दुःख पाऊँ, निज में ही आनंद मनाऊँ।
शिवपद पाऊँ प्रभो।। 7।।

(106)

(तर्ज : संभल के रहना)

हे परमात्मन्! तुम साक्षी में, शुद्ध स्वरूप दिखाया है।
विभ्रम चादर दूर हुई है, सुख-सागर लहराया है।। टेक।।
स्वयं सिद्ध निज प्रभुता दीखे, बाहर कुछ न सुहाता है।

चक्री इन्द्रादिक का वैभव, भी नहिं चित्त लुभाता है।।
तृप्त स्वयं ही हुआ नाथ अब, जाननहार जनाया है।। विभ्रम.।। 1।।
कमी नहीं कोई ऐसी जो, कोई अन्य पूरी कर दे।
स्वयं स्वयं में पूर्ण सदा ही, सहजपने शुद्धातम रे।।
सहज तत्त्व अनुभव में आया, कर्त्तृत्व सर्व नशाया है।। विभ्रम.।। 2।।
भेद नहीं कुछ मुझे दिखावे, द्रव्यदृष्टि प्रगटाई है।
शाश्वत आप समान विभूति, स्वयं-स्वयं में पाई है।।
होवे सहज स्वरूप मग्नता, यही भाव उमगाया है।। विभ्रम.।। 3।।
आकांक्षा कुछ शेष नहीं प्रभु, आराधूँ निज आतमराम।
बुद्धि व्यवस्थित हुई सहज ही, निज में ही पाऊँ विश्राम।।
जिसे ढूँढता फिरा जगत में, स्वयं स्वयं में पाया है।। विभ्रम.।। 4।।
स्वाश्रय से ही आकुलता का, हुआ प्रभूजी सहज शमन।
नहीं विकल्प वंद्य-वंद्यक का, ज्ञानमयी अद्वैत नमन।।
प्रगट हुआ परमार्थ जिनेश्वर, निजानंद विलसाया है।। विभ्रम.।। 5।।

(107)

वंदनाष्टक

शुद्धभावमय त्रिभुवन पूज्य है, पूर्ण बोधमय राज रे।
इन्द्रादिक चरणों में नत पर, आत्म विनत जिनराज रे।। 1।।
अंग विकार अरु आयुध अम्बर, रहित दिगम्बर जिन मूरत।
अचल शान्तिमय ध्यानमग्न है, सौम्य अलौकिक जिन मूरत।।2।।
खुला शास्त्र है मौन उपदेश है, सहज रूप अविकार है।
नासा दृष्टि ध्रुव परमेष्ठी, दर्शावे सुखकार है।। 3।।

अहो अतिन्द्रिय ज्ञानानंदमय, ब्रह्मचर्यमय मुक्त दशा।
पावन रत्नत्रयमय जीवन, की देती पावन शिक्षा।।4।।
दर्शन करते ही हे जिनवर, अपनी प्रभुता सहज दिखे।
भव-भव के दुःखकारी बंधन, चरणों में स्वयमेव कटे।।5।।
करने-धरने की आकुलता, सहजपने मिट जाती है।
परलक्षी वैभाविक वृत्ति, स्वयं शांत हो जाती है।।6।।
जाननहार रहूँ प्रभु सम ही, स्वयं- स्वयं में तृप्त रहूँ।
सहज निरापद सुखमय जीवन, स्वाश्रित काल अनंत जिऊँ।।7।।
सहज नमन हो, भाव नमन हो, हो अद्वैत नमन स्वामी।
नहीं अपेक्षा नाथ जगत से, अभिरामी अन्तरयामी।। 8।।

(108)

(तर्ज : मैंने तेरे ही भरोसे)

तेरे दर्शन को साँचो फल जिनराज, अहो मैंने पायो है।
तेरे जैसो ही अपनो भगवान, स्वयं में पायो है।।टेक।।
आकुलता सब दूर भई है, परमानन्द उलसायो।
मोह अंधेरो दूर भयो है, स्व-पर विवेक जगायो।।1।।
कैसो है भगवान हमारो, वचनों में नहीं आवे।
अन्तर्मुख उपयोग होय तब, अनुभव में दिखलावे।।2।।
प्रभु स्वाधीन अखण्ड प्रतापी, ज्ञानमात्र शुद्धातम।
परभावों से भिन्न उपासित, कहलाये परमातम।।3।।
सदाकाल ज्ञाता स्वरूप, ज्ञाता ही सदा रहाऊँ।
परमाह्लादित निर्विकल्प हो, निज में ही रम जाऊँ।।4।।

पर की नहिं किंचित् अभिलाषा, निज में तृप्त रहाऊँ।
प्रगट स्वाभाविक प्रभुता दीखे, निश्चय शिवपद पाऊँ।।5।।

(109)

(तर्ज : दरबार तुम्हारा मनहर है)

अविकारी शुद्ध स्वरूप प्रभो, दर्शन कर परमानंद हुआ।
हे अनंत चतुष्टय रूप प्रभो ! दर्शन कर परमानंद हुआ। टेक।।
अद्भुत नासा दृष्टि तुम्हारी, सौम्य दशा भविजन मनहारी।
देखत जगत असार लगे प्रभु, जाग्रत भेद-विज्ञान हुआ।।1।।
तुम दिव्यध्वनि में दिव्य तत्त्व, दर्शाया मंगलरूप सत्त्व।
सुनकर तिर्यञ्चों को भी प्रभु, सम्यक् शुद्धातम बोध हुआ।।2।।
इन्द्रादि नमें तुम चरणों में प्रभु, आप मगन हैं अपने में।
मैं भी निज में ही रम जाऊँ, प्रभु सहज ही जाननहार हुआ।।3।।
चरणों में शीश नवाता हूँ, प्रभु तत्त्व भावना भाता हूँ।
निर्मोह हुआ, निष्काम हुआ, निर्द्वन्द हुआ निर्मान हुआ।।4।।

(110)

(तर्ज : प्रभु हम सबका एक तू ही है)

प्रभुवर दर्शन तेरा रे, जगत में आनंददाता है।
आनंददाता है, प्रभुवर मुक्ति प्रदाता है।। टेक।।
ध्रुव मंगलमय स्वरूप आपका, चिदानन्दमय जान।
जाग्रत होता सहजपने ही, सम्यक् भेद-विज्ञान।। 1।।
राग भिन्न है ज्ञान मात्र ही, शुद्धातम अविकार।
शक्ति अनंत उछलती शाश्वत, स्वयं-स्वयं में सार।।2।।
अहो ! जिनेश्वर अद्भुत महिमा, को कहि सके बखान।

स्वानुभूति में प्रत्यक्ष भासे, आनंदमय भगवान।। 3।।
स्वयं सिद्ध प्रभु परम ब्रह्म ध्रुव, नित्य शरण सुखकार।
सहज नमन हो, भाव नमन हो, पाऊँ निजपद सार।। 4।।

(111)

(तर्ज -हे प्रभु आनन्ददाता)

जयति जिनवर जयति जिनवर, जयति जय जयकार है।
शीश चरणों में नवाऊँ, दर्श मंगलकार है।।टेक।।
ध्यान मुद्रा अचल आसन, दृष्टि नाशा सोहती।
भेदज्ञान जगावती, जिनमूर्ति भवि मन मोहती।।
भिन्न रागादिक करम सब, भिन्न जाननहार है।। 1।।
निस्सार जग वैभव तजा, निज आत्म-वैभव पा लिया।
निर्ग्रन्थ हो स्वामिन् जगत को, मुक्तिपथ दर्शा दिया।।
जिनवर चरण की शरण ले, ध्याऊँ समय का सार है।।2।।
अनुपम अहो जिनरूप है, अनुपम अहो शुद्धात्मा।
ध्यावें सहज शुद्धात्मा, हो जाएँ वे सिद्धात्मा।।
मंगलमयी ध्रुव आत्मा, निश्चय सु-तारणहार है।। 3।।
उपकार जिनवर आपका, पाया सहज शिवपंथ मैं।
पुरुषार्थ हो ऐसा प्रभो, होऊँ सहज निर्ग्रन्थ मैं।।
निर्द्वन्द हो निजपद लहूँ, मैं भावना अविकार है।। 4।।

(112)

(तर्ज : अब मेरे समकित सावन आयो)

लख जिनरूप सहज सुख पायो, सुख पायो, अद्भुत सुख पायो।।
आत्मध्यानमय मुद्रा देखे, ध्येय रूप दरशायो।।टेक।।

प्रभुवर दोष अठारह नाशे, अनंत चतुष्टय पायो।
समवशरण की रचना करके, सुर बहुमान जतायो।। 1।।
दिव्यध्वनि सुनकर जिनवर की, भविजन शिवपथ पायो।
श्री जिनशासन पाकर स्वामिन्, आनंद उर न समायो।। 2।।
धन्य जिनेश्वर अशरण जग में, आतम शरण बतायो।
हुआ सहज निश्चिंत शांत चित्त, साधक भाव जगायो।।3।।
ध्याऊँ सतत स्वरूप आपनो, और न कछु सुहायो।
पाने योग्य स्वयं में पायो, सविनय शीश नवायो।।4।।

(113)

(तर्ज :धन्य मुनिराज हमारे हैं)

धनि जिनराज विराजे हैं, धनि जिनराज विराजे हैं।।टेक।।
शांत दिगम्बर मुद्रा शोभे, आसन अचल सु धारे हैं।
इन्द्रादिक चरणन शिर नावें, अनुपम प्रभुता धारे हैं।। 1।।
अन्तर्मुख मुद्रा अविकारी, हाथ पै हाथ विराजे हैं।
समवशरण की अद्भुत शोभा, अन्तरीक्ष प्रभु राजे हैं।।2।।
भामण्डल शोभे सुखकारी, चौंसठ चमर सु-ढारे हैं।
रागादिक से शून्य ज्ञानमय, परमानन्द विस्तारे हैं।।3।।
भवसागर से आप तिरे प्रभु, भक्तजनों को तारे हैं।
अहो आपकी शरणा आये, आत्मस्वरूप निहारे हैं।।4।।
शीश नवावें, भावना भावें, रहें सु जाननहारे हैं।
कर्म कलंक समूल नशावें, पद पावें अविकारे हैं।।5।।

(114)

(तर्ज : घड़ी जिनराज दर्शन की)

घड़ी जिनराज दर्शन की, हो आनंदमय हो मंगलमय।
घड़ी चिद्रूप दर्शन की, हो आनंदमय हो मंगलमय।।टेक।।
दिगम्बर शून्य आडम्बर, परम आदर्श हो जग में।
ध्यान मुद्रा अचल आसन, हो आनंदमय...।। 1।।
निराभूषण जगत भूषण, विगत दूषण सहज प्रभुता।
ज्ञान–दृग–वीर्य–सुख प्रभु का, हो आनंदमय...।। 2।।
वीतरागी भी उपकारी, परम कल्याण के हेतु।
अकर्त्ता सहज ज्ञातारूप, हो आनंदमय...।। 3।।
शरण में जो कोई आवे, शरण का भाव मिट जावे।
परमपद आपका पावे, हो आंनदमय...।। 4।।
ज्ञान ज्योति प्रभो जागे, सहज मिथ्यामती भागे।
अहिंसा धर्म विस्तारे, हो आंनदमय...।। 5।।
विभो चरणों में शिर नावें, मुक्ति मारग में बढ़ जावें
ध्येयमय ध्यान की परिणति, हो आनंदयमय...।। 6।।
विभावी कर्म विनशावें, अचल ध्रुव सिद्ध पद पावें।
पास प्रभु आपके तिष्ठें, हो आंनदमय...।। 7।।

(115)

शान्त छवि निरखी, जिनवर की शांत छवि निरखी।
धन्य हुआ कृतकृत्य हुआ, प्रभु शांत छवि निरखी।।टेक।।
निर्विकल्प आनंदमय, प्रभु स्वरूप पहिचान।

जगो हृदय में सहज ही, निज पर भेद- विज्ञान।।1।।
द्रव्य- भाव- नो कर्म से, न्यारा आतमराम।
स्वानुभूति के गम्य नित, स्वयं सिद्ध अभिराम।।2।।
धर्मसुधा बरसावती, जन्म अरु मरण मिटाय।
वीतराग मुद्रा प्रभु, सबही को सुखदाय।।3।।
मंगलमय मंगलकरण, प्रभु स्वरूप अविकार।
अंतरमाँहि निहार कर, नमन करूँ सुखकार।।4।।

(116)

धन्य आपका दर्शन ज्ञान, धन्य-धन्य सुख वीर्य अहो।
धन्य आपकी प्रभुता अद्भुत, धन्य-धन्य जिनरूप अहो।।1।।
धन्य आपकी दिव्यध्वनि प्रभु, धन्य-धन्य है जिनशासन।
धन्य-धन्य है रत्नत्रय, धन्य-धन्य है शुद्धातम।। 2।।
धन्य-धन्य है मूर्ति आपकी, धन्य-धन्य है समवशरण।
मोह नशावे सुख उपजावे, अखिल विश्व को परम शरण।।3।।
महाभाग्य से दर्शन पाया, धन्य हुआ कृतकृत्य हुआ।
मानो रंक लही चिन्तामणि, प्रभुवर परमानंद हुआ।।4।।
अन्तर्मुख उपयोग हुआ, अपना प्रभु प्रत्यक्ष हुआ।
अहो! अहो! दुर्मोह नशाया, ज्ञान-भानु का उदय हुआ।।5।।
मैं भी साधूँ निज शुद्धातम, भव दुःख से भयभीत हुआ।
यही भाव उर में उमगाया, प्रभु चरणों में विनत हुआ।।6।।

(117)

(तर्ज : हमको भी बुलवालो स्वामी)

प्रभुवर चरणों के प्रसाद से, आऊँ मैं सिद्धालय में।
अपनी प्रभुता से ही स्वामी, तिष्ठूँ निज ज्ञानालय में।।1।।
महाभाग्य जिनशासन पाया, निज-पर भेदविज्ञान हुआ।
परभावों से न्यारा आतम, नित्य निरंजन ज्ञान हुआ।।2।।
परमानन्दमयी शुद्धातम, नित्यानन्दमयी शिवभूप।
सहजानन्दमयी परमातम, जय -जय चिदानंद चिद्रूप।।3।।
एक शुद्ध निर्मम स्वभाव से, जड़ कर्मों से न्यारा है।
परम शांत अक्षय प्रभुतामय, समयसार अविकारा है।।4।।
ध्याऊँ परम रूप हे स्वामी, निर्विकल्प आनन्द से।
लीन रहूँ निज में ही निश्चय, छूटूँ कर्म के फन्द से।।5।।

(118)

धन्य-धन्य जिनराज का दर्शन, धन्य-धन्य भक्ति का भाव।
धन्य-धन्य जिन चरण स्पर्शन,धन्य-धन्य आतम हित चाव।टेक।।
धन्य-धन्य जिनवाणी सुनना, तत्त्व निर्णय अरु भेदविज्ञान।
धन्य-धन्य शुद्धातम अनुभव, धन्य-धन्य सम्यक् श्रद्धान।।1।।
धन्य-धन्य वैराग्य भावना, संयम ग्रहण जगत का त्याग।
धन्य-धन्य निर्ग्रन्थ रूप है, दर्शन भी पावें बड़ भाग।।2।।
धन्य-धन्य आतम आराधन, धन्य-धन्य है निर्मल ध्यान।
जिससे हो श्रेणी आरोहण, घाति कर्म का हो अवसान।।3।।
धन्य-धन्य है अनन्त चतुष्टय, होंय स्वयं ही श्री जिनराज।

धन्य-धन्य है तीर्थ प्रवर्तन, होय सफल जग के सब काज।।4।।
सहज विनष्टे सर्व अघाति, भव सन्तति की होवे हान।
क्षण भर में लोकाग्र विराजें, प्रगटे अक्षय पद निर्वाण।।5।।
धन्य दिवस है, धन्य घड़ी है, पाया मंगल जिनशासन।
एक मात्र आत्मार्थ साधना, लक्ष्य सु-जीवन का पावन।।6।।
हैं जिनवर आदर्श हमारे, नित्य बोधनी जिनवाणी।
मस्तक पर गुरु वरद हस्त हो, परिणति वर्ते कल्याणी।।7।।
हृदय विराजें श्री जिनराज, संगति पावें श्री मुनिराज।
भक्ति भाव से शीश नवावें, चिन्तें गुण निज मंगलकाज।।8।।
भेदज्ञान की धारा वर्ते, समतामय परिणति प्रवर्ते।
यही भावना, यही कामना, जग में श्री जिन धर्मप्रवर्ते।।9।।
हम सब भी अक्षय सुख पावें, दुःखमय आवागमन मिटावें।
हो सम्यक् पुरूषार्थ अलौकिक, निज प्रभुता निज में प्रगटावें।।10।।

(119)

(तर्ज : मैया त्रिशला तेरो लाल)

जय-जय वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, आप्त हमारा है।
जय जय वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, नाथ हमारा है।। टेक।।
रागादिक दोषों से न्यारा, कर्मबन्ध जिसने निरवारा।
अनंत चतुष्टय रूप सर्व का, मंगलकारा है।।1।।
ज्ञान अपेक्षा सब में व्यापक, किन्तु न होता पर में व्यापक।
परम शुद्ध विष्णु सब जग का, जाननहारा है।।2।।
मोक्षमार्ग का परम विधाता, चतुरानन ब्रह्मा विख्याता।

दिव्यध्वनि से जिसने, सम्यक् तत्त्व उचारा है।। 3।।
परमशांत मुद्रा अविकारी, दर्शन सबको आनन्दकारी।
परम शान्ति का निमित्तभूत, शंकर अति प्यारा है।। 4।।
इन्द्रादिक चरणों में नमते, सहस्र नाम से स्तुति करते।
गुण अनन्तमय प्रभु का यश,तिहुँ जग विस्तारा है।। 5।।
पक्षपात को छोड़ विचारा, हम निज अंतर माँहि निहारा।
प्रभु समान ही शाश्वत ज्ञाता, रूप हमारा है।। 6।।
प्रभु चरणों में शीश नवावें, आराधन में भाव लगावें।
निश्चय ही पावें हम भी, भव सिन्धु किनारा है।। 7।।

(120)

(तर्ज : दर्शन नहिं ज्ञान न चारित)

हो श्री जिनवर की पूजा, हम सबको मंगलकारी।
सब धर्म अहिंसा धारें, पावें शिवपद अविकारी।। टेक।।
देखो जिनवर को देखो, प्रभुता कैसे प्रगटाई ?
है अन्य न कोई साधन, निश्चय निज में से आई।।
निज अन्तस्तत्त्व निहारो, नाशें पर भाव विकारी।। 1।।
झूठी बाहर की प्रभुता, मत पर में चित्त भ्रमाओ।
मंगलमय अवसर आया, प्रभुवर की भक्ति रचाओ।।
संकट सब ही टल जावें, हो उत्सव आनन्दकारी।। 2।।
जिनवर के गुणगाने में, गणधर इन्द्रादिक हारे।
केवल बहुमान जतावें, हैं हम तो मंद विचारे।।
परिणाम विशुद्धि सु होवे, गुण चिन्तत नित सुखकारी।। 3।।

जिननाथ शरण में आया, चरणों में शीश नवाऊँ।
बाहर प्रभु कुछ न सुहावे, निर्ग्रन्थ भावना भाऊँ।।
पाऊँ मैं बोधि समाधि, भव भ्रमण नशावन हारी।।4।।

(121)

प्रभु दर्शन की मंगल बेला, महाभाग्य से पायी है।
देखो-देखो प्रभु की मूरति, अद्भुत तृप्तिदायी है।।टेक।।
प्रभु का दर्शन प्रभु की पूजन, आराधन प्रभु की भक्ति।
करो परम उल्लास से, अब प्रगटाओ अपनी शक्ति।।
देखो प्रभु ने अपनी प्रभुता, अपने में प्रगटायी है।। 1।।
श्री जिनवर की वाणी सुनकर, वस्तु स्वरूप लखो सुन्दर।
भेदज्ञान की ज्योति जगाओ, अपनी निधि अपने अन्दर।।
अन्तर में सुख शांति विलसती, यह श्रद्धा सुखदाई है।।2।।
विषयों में अब नहीं भरमाओ, ध्येय रूप शुद्धातम ध्याओ।
तोरि सकल जग द्वन्द फन्द अब, सहजपने निज में रम जाओ।।
हो निर्ग्रन्थ परमपद पाओ, सदगुरु सीख सुनाई है।। 3।।

(122)

(तर्ज : चाह जगी प्रभु दर्शन की)

धन्य-धन्य जिनरूप अहो, धन्य-धन्य चिद्रूप प्रभो।
मोहजयी इन्द्रियविजयी, कर्मजयी निर्मुक्तप्रभो।।टेक।।
युगपद् लोकालोक अनन्त, तीनकाल जिनवर झलकंत।
निर्मल गुण अनंत शोभन्त, आत्मीक सुख वीर्य अनंत।।
दर्शन-ज्ञान अनंत विभो, हो वन्दन निष्काम प्रभो।।1।।

नहीं फरस रस गन्ध अरु वर्ण, स्वाभाविक छवि हो न विवर्ण।
भविजन कर्म कलंक नशाय, आप समान सहजपद ध्याय।।
धर्ममूर्ति अविकार प्रभो, होवें आप समान प्रभो।।2।।

(123)

(तर्ज : जय पारस-जय पारस)

जय परमेश्वर जय परमेश्वर, जय परमेश्वर अविकारी।
जय परमेश्वर जय परमेश्वर, जय परमेश्वर सुखकारी।टेक।।
स्वयं स्वयं में सहज सदा ही, पूर्ण अहो ज्ञानादिक से।
आप आप में लीन सहज ही, शून्य सर्व रागादिक से।।
मंगलमय है द्रव्य आपका, परिणति भी मंगलकारी।।1।।
अशरण जग में शरण तुम्हीं हो, भव्यजनों को हे निष्पाप।
अहो प्रणेता धर्म तीर्थ के, मेटो भव-भव के सन्ताप।।
दिव्य तत्त्व दर्शाती प्रभुवर, दिव्य ध्वनि आनन्दकारी।।2।।
इन्द्रिय सुख तो मूल दुःखों का, परम्परा अति क्लेशमयी।
आकुलता बिन परम अतीन्द्रिय, सुख परम आह्लादमयी।।
पाऊँ निज में निज से ही, संतुष्ट रहूँ हे भवतारी।।3।।
अनुपम अविचल ध्रुव चैतन्यपद, जिनवर! भासा निजपद है।
साँची प्रभुता आज निहारी, जो स्वाधीन निरापद है।।
हुआ सहज निष्काम, निराकुल, निर्विकल्प शिवमगचारी।।4।।

(124)

(तर्ज : हम सब जिनमन्दिर में आय)

मंगल तीर्थ क्षेत्र में आये, मंगलमय प्रभु दर्शन पाये।
धन्य घड़ी सुखकार रे, आनन्द अपरम्पार रे।। टेक।।

मंगलमय जिनशासन पाया, भेदज्ञान का सूर्य उगाया।
मिला समय का सार रे.... ।। आनन्द. ।। 1 ।।
अद्भुत शान्ति यहाँ है पायी, चंचलता सहजहिं विनशायी।
छूटे व्यसन विकार रे.... ।। आनन्द. ।। 2 ।।
परम भाव में परिणति रमती, भाव विशुद्धि सहजहिं बढ़ती।
झड़े बन्ध दुःखकार रे.... ।। आनन्द. ।। 3 ।।
मंगलमय है तीर्थ हमारा, परम धर्म साधन सुखकारा।
चित्स्वरूप अविकार रे.... ।। आनन्द. ।। 4 ।।
हो निर्वृत्त निजातम ध्याऊँ, आधि-व्याधि उपाधि नशाऊँ।
हो समाधि सुखकार रे.... ।। आनन्द. ।। 5 ।।
उपसर्गों की नहीं परवाह, भोगों की भी रही न चाह।
भासा जगत असार रे.... ।। आनन्द. ।। 6 ।।
शिवपथ में बढ़ता ही जाऊँ, निश्चय परमपूर्णता पाऊँ।
वंदन हो अविकार रे.... ।। आनन्द. ।। 7 ।।

(125)

जयवन्त वर्ते, जयवन्त वर्ते, चैतन्यनाथ सु-जयवन्त वर्ते।
जयवन्त वर्ते, जयवन्त वर्ते, आत्मानुभूति सु-जयवन्त वर्ते। ।टेक।।
मोह क्षोभ से रहित साम्यमय, आनन्दमय धर्म जयवन्त वर्ते।
भव दुख हर्ता शिव सुख कर्त्ता, श्री जिनधर्म सु-जयवन्त वर्ते।।1 ।।
देवाधिदेव वीतराग सर्वज्ञ, परमोपकारी सु-जयवन्त वर्ते।
जिनवर समवशरण श्री जिनवाणी, जयवन्त वर्ते, जयवन्त वर्ते।।2 ।।
तिहुँलोक भूषण, रत्नत्रय भूषित, निर्ग्रन्थ साधु सु-जयवन्त वर्ते।

मंगलमय लोकोत्तम अशरण शरण जो, निर्ग्रन्थ मारग सु–जयवन्त वर्ते।।3।।
जिन मन्दिर, जिनबिम्ब जिनतीर्थ जग में, जयवंत वर्ते, जयवंत वर्ते।
सब जीव समझें वस्तु स्वरूप, परम अहिंसा सु–जयवंत वर्ते।। 4।।

(126)

अद्‌भुत छवि जिनराज की।
महाभाग्य से आज निहारी, जिनप्रतिमा जिन सारखी।।टेक।।
अंग–अंग से सहज झलकती, वीतरागता सुखकारी।
ध्यान मग्न मुद्रा दर्शावे, ध्येय रूप मंगलकारी।। 1।।
अन्तर्मुख नासादृष्टि प्रभु, देती है मंगल संदेश।
व्यर्थ नहीं पर में भरमाओ, अंतर में आनंद विशेष।। 2।।
आसन अचल कहे जिनवर का, दुःखमय चंचलता भागे।
थिरता में सुख शान्ति मिलेगी, निज में ही परिणति पागे।।3।।
जिनवर के कर देख छूटती, कर्त्ता बुद्धि सु दुःखदायी।
पर सन्मुख कर मत फैलाओ, याचक वृत्ति न सुखदायी।।4।।
देखो अपने ही अंतर में, सुख का सागर लहरावे।
निजानंद में तृप्त रहो, पद परम सहज ही प्रगटावे।।5।।

(127)

(तर्ज : धन्य–धन्य है घड़ी आज की)

धन्य घड़ी है, धन्य दिवस है, दर्शन पाये जिनवर के।
हुआ सहज कृतकृत्य तृप्त मैं, दर्शन पाये जिनवर के।।टेक।।
ज्यों दर्पण के सन्मुख आते, चेहरा बाहर का दिखता।
प्रभु के सन्मुख आते ही त्यों, आतम रूप सहज दिखता।।

उछले परमानंद प्रभो, दुख मिट जाते हैं भव-भव के।।1।।
चित्स्वरूप की परम प्रतीति, अन्तर में प्रगटाती है।
सम्यग्ज्ञान कला भी निज में, सहज उदित हो जाती है।।
सहज भावना वृद्धिंगत हो, व्रत धारण को मुनिवर के।।2।।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, मंगलमय लोकोत्तम जो।
इन्द्रादिक भी जिनको पूजें, उनकी महिमा गाने को।।
सहज शरण है परम शरण है, चरण-कमल श्री प्रभुवर के।।3।।
हुआ निःशंक और निर्वांछिक, तुम समीप आकर स्वामी।
आप रहो आदर्श सहज, साधूँ मैं निज पद अभिरामी।।
शीश नवाऊँ भक्तिभाव से, गुण गाऊँ नित विभुवर के।।4।।

(128)

(तर्ज : जिया कब तक घूमेगा संसार में)

होवे प्रभुवर सहज जीवन, होवे जिनवर सफल जीवन।
ज्ञान वैराग्यमय जीवन, धन्य आनन्दमय जीवन।।टेक।।
जागते-सोते चलते-फिरते, खाते-पीते उठते-बैठते।
बोलते-चालते सुनते-पढ़ते, होवे आत्मा का ही दर्शन।।1।।
झलकें ज्ञेय भले ही सारे, कभी न इष्ट-अनिष्ट विचारें।
राग-द्वेष नहीं किंचित् धारें, होवे ज्ञानमयी अनुभवन।।2।।
निर्ग्रन्थ निर्द्वन्द निर्बन्ध वर्तूं, निर्लेप निरपेक्ष स्वतंत्र वर्तूं।
निकलंक स्थिर हो एकाकी वर्तूं, होवे समतामयी आचरण।।3।।
आत्मवैभव में तुष्ट रहूँ, निज से निज में ही तृप्त रहूँ।
सहज निज में ही मग्न रहूँ, हो परम पद परम पावन।।4।।

(129)

(तर्ज : नाथ तेरी पूजा को फल पायो)

जिनवर सम्यक् पूजा रचाऊँ।
सहज पूज्य पद ध्याऊँ स्वामिन्, स्वयं पूज्य कहलाऊँ।। टेक।।
अहो नाथ हो अन्तर्यामी, तुमसों कहा छिपाऊँ?
दोष अनन्त भये भव-भव में, तिनकों सहज नशाऊँ।। 1।।
देव! स्वभाव अरु परभावों को, भिन्न-भिन्न सु-लखाऊँ।
उदासीन हो परभावों से, चित्स्वरूप निज भाऊँ।। 2।।
सारभूत आतम ही दीखे, निर्ग्रन्थ रूप रहाऊँ।
परमानन्द स्वयं में प्रगट्यो, निज में ही रम जाऊँ।। 3।।

(130)

(तर्ज : वंदन हम करते मंगलमय)

जिनवर दर्शन का फल पाऊँ, निर्वांछक निर्द्वन्द रहाऊँ।। टेक।।
सहजहिं आत्म-भावना भाऊँ, प्रभु सम अक्षय प्रभुता पाऊँ।
पर में नहिं उपयोग भ्रमाऊँ, अपने में ही तृप्त रहाऊँ।। 1।।
निज स्वरूप में रहूँ निःशंकित, निर्भय अरु निश्चिंत रहाऊँ।
पापोदय में ग्लानि न होवे, पुण्योदय के भोग न चाहूँ।। 2।।
दृढ़ता होवे सुगुरु वचन की, जग की बातों में नहीं आऊँ।
रहे विवेक प्रमुख हे स्वामी, हो निर्मूढ़ परम पद ध्याऊँ।। 3।।
दोषों के प्रति रहे उपेक्षा, जिनशासन की शान बढ़ाऊँ।
मुक्तिमार्ग से च्युत होने पर, सम्यक् स्थितिकरण कराऊँ।।4।।
परम प्रीति हो जिन धर्मी प्रति, वत्सलता सबके प्रति लाऊँ।
आत्म-प्रभावना हो अन्तर में, श्री जिनधर्म प्रभाव बढ़ाऊँ।।5।।

अन्तर्मुख हो निर्मद वर्तूं, परम समरसी भाव जगाऊँ।
ममता छूटे तृष्णा टूटे, एकाकी हो वन को जाऊँ।। 6।।
उपसर्गों औ परिषहों में, निश्चल आतम ध्यान लगाऊँ।
कर्म खिपाऊँ शिवपद पाऊँ, दुःखमय आवागमन मिटाऊँ।।7।।

(131)

(तर्ज : मैंने प्रभुजी के चरण पखारे)

मैंने प्रभुवर रूप निहारा, आनंद उपज्यो अपरम्पारा।। टेक।।
अहो अमूर्तिक परम अतीन्द्रिय, रागादिक भावों से न्यारा।
निर्विकल्प निर्भेद सहज प्रभु, ज्ञानानन्दमय नित अविकारा।। 1।।
देह-देवालय माँहि विराजे, अहो विदेहीनाथ हमारा।
परमब्रह्म शाश्वत परमातम, स्वयं सिद्ध ध्रुव जाननहारा।। 2।।
देखो त्रिभुवन गुरु होते भी, सहज विश्व पर तैरनहारा।
निरवलम्ब अवलम्बन साँचा, भव-सागर से तारण हारा।।3।।
अहो स्वरूप प्रत्यक्ष शुद्धातम, अनुभव में प्रत्यक्ष निहारा।
सहज ही भाऊँ, सहज ही ध्याऊँ, सहज पूज्य परमातम प्यारा।।4।।

(132)

(तर्ज : धन्य-धन्य आज घड़ी)

आज प्रभु दर्शन से, पायो विश्राम है।।
पायो विश्राम मानो, मिल्यो शिवधाम है।। टेक।।
धन्य जिनेन्द्र की मूर्ति मनोहर।
प्रत्यक्ष दिखावे जहाँ आतमराम है।। 1।।
परभावों से शून्य, स्वभाव से पूर्ण।
नित्य निरंजन निर्लेप निष्काम है।। 2।।

एक ओर राम, दूजी ओर सारा ग्राम है।
शोभे त्रिलोक तिलक शुद्ध आतमराम है।।3।।
ज्ञान ज्योति जगमगे, भविजन के मन खिले।
स्वयं नशे मोह क्रोध-मान-माया-काम है।।4।।
वस्तु स्वरूप दर्शाय, प्रभु मुक्त हुए।
सहज नमन, भाव नमन, ध्यावें आतमराम है।।5।।

(133)

(तर्ज : प्रभु बाहुबली ऐसा)

जिनराज भजें, जिनराज भजें।
अब मोह तजें, निज भाव सजें।। टेक।।
प्रभु के सम ही, हम शुद्धातम, ध्रुव ज्ञानानन्दमय परमातम।
है शक्तियों का कुछ पार नहीं, अन्तर्मुख हो स्वयमेव लखें।।1।।
प्रभु वीतराग आदर्श रहें, हम अन्तर भेदविज्ञान करें।
पुरुषार्थ स्वयं का सम्यक् हो, निज में ही परमानंद लहें।।2।।
हम जिनवर का गुणगान करें, जिनवचनामृत का पान करें।
चिर मोह विषय-विष दूर भगे, निज में निज प्रभुता प्रगट करें।।3।।
दुर्भाव असंयम परित्यागें, सुखमय संयम पथ में लागें।
चैतन्य चिन्तामणि अन्तर में, निर्वांछक हो शिव राज्य लहें।।4।।

(134)

(तर्ज : सुनकर वाणी जिनवर की)

जिनमुद्रा से झरे परम रस, आनन्द उर न समाय रे।
भेदविज्ञान जगे दर्शन से, मोह सहज विनशाय रे।। टेक।।
सारभूत अपनो शुद्धातम, सहज प्रत्यक्ष जनाय रे।

निज में तृप्ति, निज में तुष्टि, और न कछु सुहाय रे।।1।।
पर में इष्ट-अनिष्ट कल्पना, नहीं कदापि उपजाय रे।
सब ही ज्ञेयपने प्रतिभासे, वीतरागता भाय रे।। 2।।
अहो! अलौकिक मुद्रा प्रभु की, सहज शीश नम जाय रे।
अपनी प्रभुता आपहि दीखे, मुक्ति द्वार खुल जाय रे।।3।।
जगे नाथ पुरुषार्थ परम, निर्ग्रन्थ दशा विलसाय रे।
और न वाँछा यही भावना, तुम सम पद प्रगटाय रे।।4।।

(135)

(तर्ज : करना हो तुमको)

अन्तरयामी जिनराज, जय-जय तारण-तरण जिहाज।
मंगलमूर्ति प्रभु अविकार, देखी आनंद अपरम्पार हुआ।।टेक।।
जागा अन्तर भेदविज्ञान, भासे रागादिक दुखखान।
ज्ञानानन्दमय आतमज्ञान, सम्यग्दर्शन सहज स्वयमेव हुआ।।1।।
पायो निज अनुभव रस स्वाद, तत्क्षण नाशे सर्व विषाद।
झूठा कोलाहल न सुहाय, सम्यक् वैराग्य प्रभु सुखरूप हुआ।।2।।
भासे भोग रोग की खान, परिग्रह दुखस्वरूप पहिचान।
परमानंदमय शुद्ध चिद्रूप, साधु निर्ग्रन्थ होना सहज हुआ।।3।।
वर्ते सहजहि आतम ध्यान, होवे सब कर्मों की हानि।
प्रगटे निर्मल क्षायिक भाव, अब तो शिवपद भी पाना सहज हुआ।।4।।
प्रभुवर प्रभुता का नहीं पार, अपना परमातम सुखकार।
वर्तूं सहज अकर्त्ता ज्ञाता, नाथ सहज नमन स्वयमेव हुआ।।5।।

(136)

(तर्ज : चालो-चालो जिनवर दरबार में)

मैं तो मूरति निहारूँ जिननाथ की, दीखे मूरत सहज निजनाथ की।।टेक।।

बिन श्रृंगार सहज ही शोभित, स्वाभाविक आनन्द से पूरित।
निर्विकार शिवनाथ की ।। 1 ।।

अशरीरी चैतन्यमयी है, अद्भुत प्रभुता विलस रही है।
धन्य महिमा है चैतन्यनाथ की।। 2 ।।

यह विभूति और यह निस्पृहता, निर्विकल्प स्वाभाविक समता।
दीखे उपमा नहीं कोई नाथ की।। 3 ।।

जाननहार रहूँ निष्काम, निज में ही शाश्वत विश्राम।
भासे नहीं जरूरत साथ की।। 4 ।।

(137)

(तर्जः रोम रोम पुलकित हो जाय)

हे प्रभु! तेरे चरण प्रसाद, निज पद की भूलूँ नहीं याद।
निज पद शाश्वत मंगलरूप, चिदानन्द चिद्रूप अनूप।। 1 ।।
परभावों से भिन्न अविकार, सहज मुक्त है निज-आधार।
आपद शून्य सदा निष्काम, नित्य निरंजन आतमराम।। 2 ।।
वर्ते निज में ही असहाय, सहजपने सब मंगलदाय।
अक्षय चैतन्य शुद्धि सम्पन्न, शिवपद मिले सहज आसन्न।। 3 ।।
निरखत उपज्यो परमानन्द, सहज ध्यान हो दुःख निकन्द।
नशें विभाव सर्व दुःखकार, रहूँ परम निर्ग्रन्थ अविकार।। 4 ।।
निर्भय निर्वांछक विलसाय, काल अनंत सु-तृप्त रहाय।
होय प्रगट प्रभुता उत्कृष्ट, सहज सिद्ध हो अपना इष्ट।। 5 ।।

(138)

हरष–हरष प्रभुवर गुण गाऊँ, हरष–हरष जिन रूप लखाऊँ। टेक।।
हरष–हरष निज भावना भाऊँ, हरष–हरष वैराग्य बढ़ाऊँ।। 1।।
हरष–हरष कर वन को जाऊँ, हरष–हरष निज ध्यान लगाऊँ।। 2।।
हरष–हरष कर कर्म भगाऊँ, हरष–हरष निज गुण प्रगटाऊँ।। 3।।
हरष–हरष अर्हत् पद पाऊँ, हरष–हरष तीरथ प्रगटाऊँ।। 4।।
हरष–हरष शिवपद विलसाऊँ, हरष–हरष नहीं भव भरमाऊँ।। 5।।

(139)

(तर्ज : रोम–रोम से निकले प्रभुवर)

रोम रोम में बसा जिनवर है, रूप तुम्हारा।
रोम रोम से निकले जिनवर, नाम तुम्हारा।। टेक।।
अन्तर्दृष्टि से हे जिनवर, तत्त्व निहारा।
देखी प्रभुता अक्षय प्रभुवर, सुख अपारा।। 1।।
अन्तर में ही देखा अद्भुत, ज्ञान भंडारा।
गुण अनन्त का सागर देखा, पाया नहीं पारा।। 2।।
द्वन्द न दीखे बन्ध न दीखे, नित्य अविकारा।
समयसार पक्षातिक्रान्त, चिद्रूप निहारा।। 3।।
पाया अहो सहज ही मैं, भव सिन्धु किनारा।
परम शांत कृतकृत्य हुआ, परिणाम निर्भारा।। 4।।
होवे परम दशा प्रभु जैसी, भाव हमारा।
भाव नमन हो, द्रव्य नमन हो, नित अविकारा।। 5।।

(140)

मोहि भावे वीतराग प्रभु सार,
लख पाऊँ, लख पाऊँ, लख पाऊँ रे।
जय जय सर्वज्ञ प्रभु अविकार,
गुण गाऊँ, गुण गाऊँ, गुण गाऊँ रे।। 1।।
भाख्यो मुक्तिमार्ग सुखकार,
अपनाऊँ, अपनाऊँ, अपनाऊँ रे।
अपनो चैतन्य पद निर्भार,
कब पाऊँ, कब पाऊँ, कब पाऊँ रे।। 2।।
दीखे प्रभुता अपरम्पार,
रम जाऊँ, रम जाऊँ, रम जाऊँ रे।
लखि अनंत उपकार,
शिर नाऊँ, शिर नाऊँ, शिर नाऊँ रे।। 3।।

(141)

(तर्ज : मन भज ले श्री जिनराज, उमरिया रह गई थोरी)

जिनवर की भक्ति कर लो, प्रभु भक्ति मंगलकारी।
जिन भक्ति मंगलकारी, जिनवाणी मंगलकारी।। टेक।।
काया से न्यारा देखो, कर्मों से न्यारा देखो।
रागादिक भावों से भी, न्यारा शुद्धातम देखो।।
आतम अनुभूति करलो, अनुभूति मंगलकारी।। 1।।
इन्द्रिय अवलम्बन छोड़ो, मन का अवलम्बन छोड़ो।
ज्ञेयावलम्बन छोड़ो, उपयोग सु निज में जोड़ो।।
आतम रस वेदन करलो, ध्रुव आतम मंगलकारी।। 2।।

निज में संतुष्ट रहाओ, रागादि विकल्प मिटाओ।
वैराग्य प्रचुर प्रगटाओ, दीक्षा लो वन में जाओ।।
मुक्ति का साधन कर लो,मुक्तिपथ मंगलकारी।। 3।।
निज में ही थिरता आये, सब कर्म समूह नशाये।
भव-भ्रमण सहज मिट जाये, प्रभु सम शिवपद प्रगटाये।।
आतम-आराधन कर लो, आराधन मंगलकारी ।। 4।।

(142)

(तर्ज : झँडा ऊँचा रहे हमारा)

आओ-आओ प्रभु गुण गायें, प्रभुभक्ति कर शिवपथ पायें।
समता का अभ्यास बढ़ायें, अपना जीवन सफल बनायें।।टेक।।
प्रभुवर का उपकार अलौकिक, दर्शाये हैं तत्त्व अलौकिक।
तत्त्वों को समझें समझायें, परम तत्त्व की श्रद्धा लायें।। 1।।
प्रभुवर की मूरति अविकारी, नासादृष्टि महा सुखकारी।
हम भी अन्तर्मुख हो जायें, परम प्रभु का दर्शन पायें।। 2।।
नष्ट हुए अष्टादश दोष, प्रभुवर हुए परम निर्दोष।
दोष दृष्टि को सहज नशायें, हम भी वीतराग हो जायें।। 3।।
प्रभुवर का है ज्ञान अनन्त, दर्श अनन्त वीर्य अनन्त।
प्रभु सम आतम ध्यान लगायें, अनन्त चतुष्टय हम प्रगटायें।।4।।
प्रभुवर का है मार्ग निराला, रत्नत्रयमय आनन्द वाला।
प्रभु चरणों में शीश नवायें, अनुगामी हो शिवपद पायें।। 5।।

(143)

(तर्ज : महिमा है अगम जिनागम की)

महिमा अद्भुत जिनराज लखी।
जिनके दर्शन से अक्षय निधि, अपनी अपने माँहि दिखी।टेक।।
ऐसो परमानन्द भयो है, चाह दाह क्षण में विनसी।।1।।
जिनमारग अति सुखमय भासो, धारन की उर चटाचटी।।2।।
तत्त्वभावना सहज प्रवर्ते, भयी बन्ध की छटा छटी।।3।।
भक्तिभाव हृदय में उमगे, प्रभु गुण की रहे रटारटी।।4।।
जिन चरणों में शीश नवावें, सम्यग्ज्ञान कला प्रगटी।।5।।

(144)

(तर्ज : तीरथ करने चली)

जिनवर भक्ति करें भव्यजन, भाव विशुद्धि बढ़ाने को।
आओ आओ प्रभु गुण गायें, भेदविज्ञान जगाने को।।टेक।।
जिन सो जीव, जीव सो जिनवर, अन्तर में श्रद्धान करें।
नित्य निरंजन शाश्वत प्रभु का, अन्तर्मुख हो ध्यान धरें।।
शुद्धातम ही शरणभूत है, सुखमय शिवपद पाने को।।1।।
आधि व्याधि उपाधि न जिसमें, अन्तस्तत्व समाधि स्वरूप।
दुख का कारण लेश न जिसमें, स्वयं सिद्ध आनन्द स्वरूप।।
निर्विकल्प हो ध्यायें प्रभु सम, कर्मबन्ध विनशाने को।।2।।
इन्द्रिय-सुख तो सुखाभास है, सर्व दुःखों का मूल है।
जिन्हें चाह कर बोता मूरख, शिवपद में विष शूल है।।
वीतराग की भक्ति केवल, वीतरागता पाने को।। 3।।

कृषि में तृण सम इन्द्रिय सुख तो, सहज बीच में आते हैं।
किन्तु उन्हें ही पाकर ज्ञानी, साध्य नहीं विसराते हैं।।
हो विरक्त आराधन करते, अक्षय गुण प्रगटाने को।। 4।।
इच्छाओं का हो अभाव ही, प्रभु का दर्शन करने से।
परमाह्लाद सहज ही बढ़ता, प्रभु मारग में चलने से।।
प्रभु चरणों में शीश नवायें, निज पुरुषार्थ बढ़ाने को।। 5।।

(145)

(तर्ज : श्वांस श्वांस में)

बड़ी भक्ति से पूजा करिये, करिये प्रभु गुणगान रे।
महाभाग्य से जिनवर पाये, पाया तत्त्व महान रे।। टेक।।
जिसको पहिचाने बिन अबतक, भव-भव में भरमाया रे।
ज्ञानानन्दमय परम तत्त्व प्रभु, दिव्य ध्वनि में आया रे।।
समझो-समझो ज्ञायक प्रभु को, दुःख का हो अवसान रे।। 1।।
वीतराग प्रभुवर की पूजा, वीतरागता से करिये।
प्रभुवर के गुण हृदय धरिये, मिथ्या राग रंग तजिये।।
स्व-पर विवेक जगाओ भाई, करो सत्य बहुमान रे।। 2।।
देखो! इन्द्रादिक भी प्रभु के, चरणों में मस्तक धरते।
तत्त्व भावना भाते-भाते, हर्ष सहित भक्ति करते।।
हो प्रभावना मंगलकारी, परिणति हो अम्लान रे।। 3।।
स्वानुभूतिमय परमानन्दमय, है जिनशासन अविकारी।
दर्शाती मारग प्रभु मूरति, निज में पाओ सुखकारी।।
मोह लोभ क्रोधादिक त्यागो, त्यागो छल अभिमान रे।।4।।

(146)

भक्ति प्रभु की कर लो, यह अवसर आया है।
शक्ति अपनी लख लो, यह अवसर आया है।। टेक।।
प्रभु को पहिचाने बिन, भव-भव में भरमाया।
चिर से भ्रमते-भ्रमते, तुमने दुख ही पाया।।
अति दुर्लभता से रे! जिनशासन पाया है।। 1।।
निरखो-निरखो प्रभु को, अनुपम है तिहुँ जग में।
अन्यत्र न भरमाओ, आदर्श हैं शिवमग में।।
हर्षित हो गुण गाओ, जिन दर्शन पाया है।। 2।।
शिवपद साधो-साधो, अन्तर्दृष्टि लाओ।
प्रभु सम अपनी प्रभुता, अन्तर में ही पाओ।।
निज में ही रम जाओ, शुभ योग सु-पाया है।। 3।।
ज्ञायक के आश्रय से, निर्द्वन्द निराकुल हो।
हो होने योग्य सहज, तुम व्यर्थ न व्याकुल हो।।
मुक्ति निज माँहि लहो, जिनवर ने गाया है।। 4।।
अवसर यदि चूक गये, दुर्गति ही पाओगे।
पछताने से भी तो, सुख लेश न पाओगे।।
चेतो! चेतो!! चेतन, श्री गुरू समझाया है।। 5।।
बरसाती शान्ति सुधा, प्रभु शान्त छवि सोहे।
इन्द्रादिक का भी तो, निरखत ही मन मोहे।।
सुन्दर स्तोत्रों से, बहुमान जताया है।। 6।।

(147)

(तर्ज : नाथ मोहि कैसे)

हुआ सहज विश्वास, नाथ मैं जिनपद पाऊँगा।
जिनपद पाऊँगा, नाथ मैं शिवपद पाऊँगा।। टेक।।
चिर से भव में भ्रमते-भ्रमते, अब जिन दर्शन पाया।
निज परमातम निज में देखा, आनंद उर न समाया।। 1।।
मुझे सुहाई प्रभो आपकी, शान्त दशा अविकारी।
नहीं सुहाय अन्य रस फीके, चरणों में बलिहारी।। 2।।
हो ऐसा पुरुषार्थ जिनेश्वर, निर्ग्रन्थ रूप सु धारूँ।
आधि-व्याधि-उपाधि रहित हो, ज्ञायक भाव सम्हारूँ।। 3।।
स्वामिन् निश्चल आत्म-ध्यान हो, नये कर्म नहीं आवें।
पूरब बन्ध समूल नशावें, आत्म-सुगुण प्रगटावें।। 4।।
शिवानंद का महा स्वाद प्रभु, तुम प्रसाद से पाया।
भाव विभोर हुआ अन्तर में, चरणों शीश नवाया।। 5।।

(148)

(तर्ज : केसरिया चावल)

लगन जिन चरणों में लागी।
श्री जिनवर का दर्शन करके, ज्ञान कला जागी। टेक।।
निजानन्द में लीन परिणति, निज में ही पागी।
नहीं सुहावे अक्ष विषय चित, सहज हुआ त्यागी।। 1।।
जग अनित्य अशरण दिखलाया, मोह नींद भागी।
हुआ सहज वैराग्य भावना, मुनिपद की जागी।। 2।।
हो निर्ग्रन्थ आत्मपद ध्याऊँ, प्रभु पद लौ लागी।
शीश नवाऊँ भक्ति भाव से, हो गुण अनुरागी।। 3।।

(149)

(तर्ज : शिखर पे कलश चढ़ाओ)

जिनवर भक्ति रचाओ सब मिलकर।
जिनवर के गुण गाओ सब मिलकर।। टेक।।
मंगल अवसर आया है, जिनवर दर्शन पाया है।
धर्म प्रभाव बढ़ाओ सब मिलकर।। 1।।
धर्म ही मंगल, धर्म ही उत्तम, धर्म ही शरण कहा लोकोत्तम।
जिन मारग में आओ सब मिलकर।। 2।।
सम्यक् दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक् चारित्र धर्म महान।
रत्नत्रय प्रगटाओ सब मिलकर।। 3।।
प्रभुवर रत्नत्रय प्रगटाया, आनन्दमय मुक्ति पद पाया।
चरणों शीश नवाओ सब मिलकर।। 4।।
निज में देखो निज परमेश्वर, निज में ध्याओ निज परमेश्वर।
तत्त्व भावना भाओ सब मिलकर।। 5।।

(150)

(तर्ज : तुम्हारे दर्श बिन स्वामी)

अहो जिनरूप मनहारी, अहो चिद्रूप अविकारी।। टेक।।
भाग्य से दर्श मैं पाया, परम आनन्द उर छाया।
देशना पाई हितकारी।। अहो चिद्रूप..।। 1।।
स्व-पर का भेद दरशाया, स्वानुभव ज्ञान प्रगटाया।
मिटा दुर्मोह दु:खकारी।। अहो चिद्रूप..।। 2।।
अकेला आत्मा सुन्दर, सहज परमात्मा सुन्दर।
परम निर्दोष गुणधारी।। अहो चिद्रूप..।। 3।।

हुआ कृतकृत्य निज में ही, हुआ सन्तुष्ट निज में ही।
दशा अनुपम हुई म्हारी।। अहो चिद्रूप..।। 4।।
चाह कुछ और नहीं स्वामी, तृप्त निज में रहूँ स्वामी।
मुक्तिपद पाऊँ जगतारी।। अहो चिद्रूप..।। 5।।

(151)

(तर्ज : चाह जगी जिन दर्शन की)

धन्य हुआ प्रभु दर्शन से, चित्स्वरूप स्पर्शन से।।टेक।।
अनुपम ज्ञानमात्र चिद्रूप, गुण अनन्तमय आनन्दरूप।
शक्ति अनन्त सहज उलसे।। धन्य...।। 1।।
परभावों से शून्य प्रभो, निज वैभव आपूर्ण अहो।
निर्विकल्प आनन्द विलसे।। धन्य...।। 2।।
चित्प्रकाश से आलोकित, निज अनुभूति से शोभित।
दर्शन से सब क्लेश नशे।। धन्य...।। 3।।
एक शुद्ध ध्रुव मुक्त सदा, सहज शान्त निर्द्वन्द अहा।
शाश्वत प्रभु निज माँहि बसे।। धन्य...।। 4।।
जानूँ जाननहार प्रभु, ध्याऊँ अविरल सहज प्रभु।
सहजहिं साध्य दशा विलसे।। धन्य...।। 5।।

(152)

प्रभु की दिव्यध्वनि का सार, आत्मा भगवान है।
सदा सर्व कर्मों से न्यारा, निश्चय सिद्ध समान है।।टेक।।
नित्य शुद्ध सम्पदा अलौकिक, गुण अनन्त की खान है।
नहीं अपेक्षा कभी किसी की, शाश्वत प्रभुतावान है।।1।।

अरे! स्वयं को पर द्रव्यों से, बड़ा मानना मान है।
परभावों से भिन्न स्वयं को, स्वयं जानना ज्ञान है।।2।।
ज्ञान स्वयं ही आनन्दमय है, साधन साध्य सु-ज्ञान है।
ज्ञानमात्र ध्रुव ध्येय आत्मा, ज्ञानमयी ही ध्यान है।।3।।
धन्य हुए कृतकृत्य हुए, जिन पायो आतमज्ञान है।
ज्ञान भाव में मग्न सु-रहते, समतामय परिणाम है।।4।।
सहज पूज्य निर्ग्रन्थ दशा हो, होवे शुक्ल ध्यान है।
प्रगटे अनन्त चतुष्टय निरुपम, कहलावे भगवान है।।5।।
मिटे कर्म संयोग सर्व ही, पावे मोक्ष महान है।
भाव नमन हो सिद्ध प्रभु सम, दीखे पद अम्लान है।।6।।

(153)

(तर्ज: मैया त्रिशला तेरो लाल)

घड़ी धनि धन्य अहो जिनराज, सहज चिद्रूप दिखाया है।
चिद्रूप दिखायो है कि सहजानन्द प्रगटाया है।।टेक।।
कर्त्ता नहीं कारयिता नाहीं, अनुमोदन भी नहीं पर माँहि।
अहो! शुद्ध चेतन विलासमय, रूप सु-भाया है।। 1।।
बद्ध रक्त व्यवहार पक्ष है, अबद्ध मुक्त निश्चय का पक्ष है।
पक्षातिक्रान्त चिन्मात्र अहो, अनुभव में आया है।। 2।।
अरे! व्यर्थ भव-भव भटकाया, सुख सागर निज में लहराया।
विभ्रम चादर दूर हुई, तिहुँ जग झलकाया है।। 3।।
आकुलता सब दूर हुई है, निज अक्षय निधि प्रगट हुई है।
काल अनन्त रहूँ निज में, प्रभु शीश नवाया है।। 4।।

(154)

(तर्ज : श्री सिद्धचक्र का पाठ करो)

हे! अनन्त चतुष्टयवन्त, सर्व भगवन्त, परम उपकारी।
हो भाव वन्दना निशदिन आनन्दकारी।। टेक।।
रागादिक दोष मिटाए जब, चहुँ घाति कर्म विनशाये तब।
प्रभु धर्म तीर्थ प्रगटाया मंगलकारी।। 1।।
जीवादिक तत्त्व दिखाये हैं, परभाव हेय दरशाये हैं।
आदेय बताया निज स्वभाव अविकारी।। 2।।
कृतकृत्य हुआ दर्शन करके, निज की प्रभुता निज में लखके।
निष्काम परिणमित हुआ, सहज शिवचारी।।3।।
जागे हैं यही भाव जिनवर, निर्ग्रन्थदशा प्रगटे सत्वर।
हो प्रचुर स्वसंवेदनमय, दशा हमारी।। 4।।
प्रभु सम ही निज में रम जायें,स्वाभाविक निज गुण प्रगटायें।
भव-भव का आवागमन मिटे दुःखकारी।।5।।

(155)

जिनरूप मंगलमय, अहो जिनरूप मंगलमय।
महाभाग्य से पाया मैं, जिनरूप मंगलमय।।
जिसे देखते सहज दिखे, निज रूप मंगलमय।। टेक।।
ऐसा सुन्दर रूप न दूजा, प्रभु समप्रभु सोहें।
बिन श्रृंगार वस्त्र आभूषण, सबका मन मोहे।।
शाश्वत सुख का मार्ग दिखावे,भाव हो भक्तिमय।। 1।।
अखिल विश्व में अहो अलौकिक, निरावरण निर्दोष।
दर्श-ज्ञान-सुख-बल अनन्त लख, उपजे उर सन्तोष।।

अन्तर्मुख हो सहज परिणति, होती ज्ञानमय।। 2।।
आत्मज्ञान का होय उजाला, मिथ्यातम नाशे।
अविनाशी अक्षय प्रभुतामय, शाश्वत प्रभु भासे।।
तृप्त स्वयं में, तुष्ट स्वयं में, हो निःशंक निर्भय।। 3।।
धन्य हुआ कृतकृत्य हुआ प्रभु, अद्‌भुत भाव जगा।
कर्मबन्ध का कारण सब, वैभाविक भाव भगा।।
सहज शीश चरणों में नत है, भाव है आनन्दमय।। 4।।

(156)

(तर्ज :मन भजले श्री महावीर)

जिनवर दर्शन को आओ, यह उत्तम अवसर आया।
जिनवर पूजा को आओ, यह उत्तम अवसर आया।। टेक।।
जिनवर की भक्ति रचाओ, यह उत्तम अवसर आया।
जिनवाणी सुनने आओ, यह उत्तम अवसर आया।।
तत्त्वों का निर्णय लाओ, यह उत्तम अवसर आया।। 1।।
आतम अनुभव प्रगटाओ, यह उत्तम अवसर आया।
वैराग्य-भावना भाओ, यह उत्तम अवसर आया।।
संयम में चित्त लगाओ, यह उत्तम अवसर आया।। 2।।
ज्ञायक स्वरूप को ध्याओ, यह उत्तम अवसर आया।
भव-भव के बन्ध नशाओ, यह उत्तम अवसर आया।।
अक्षय शिवपद प्रगटाओ, यह उत्तम अवसर आया।। 3।।

(157)

(तर्ज : लहरायेंगे लहरायेंगे)

आयेंगे हम आयेंगे, प्रभु दर्शन को आयेंगे।
प्रभु दर्शन से निज दर्शन कर, जीवन सफल बनायेंगे।।टेक।।
प्रभु का रूप हमें है भाया, अपना ज्ञायक रूप सुहाया।
निज सुख निज में पायेंगे।। 1।।
क्रोधादिक भासे दुःखदायी, वीतरागता हमें सुहायी।
निज पुरुषार्थ बढ़ायेंगे।। 2।।
इन्द्रिय सुख तो तुच्छ हेय है, सुःख अतीन्द्रिय उपादेय है।
प्रभु उदासीनता लायेंगे।। 3।।
मिथ्या जग प्रपंच ठुकराकर, अंतर में वैराग्य बढ़ाकर।
निर्ग्रन्थ पद अपनायेंगे।। 4।।
भावें नित वैराग्य भावना, शुद्धातम की करें साधना।
कर्म कलंक नशायेंगे।। 5।।
निश्चय आवागमन मिटावें, निजप्रभुता निज में प्रगटावें।
शाश्वत मुक्त रहायेंगे।। 6।।

(158)

जिनवर भक्ति मंगलकार [2]।
जिनवर की परमार्थ भक्ति तो, करती भव से पार।।टेक।।
देखो जिनवर का आकार, नहीं विकार नहीं श्रृंगार।
नासादृष्टि है सुखकार।। जिनवर..।। 1।।
प्रभु स्वरूप का करो विचार, दोष अठारह दिए विडार।
प्रगटे सुगुण अपार।। जिनवर..।। 2।।

अब तो प्रभु के निकट सु-आओ, निर्मल द्रव्यदृष्टि प्रगटाओ।
मोह कलंक निवार।। जिनवर.. ।। 3 ।।
श्री जिनवचन सुनो हितकारी, जगत प्रपंच तजो दुःखकारी।
जिनमारग अवधार।। जिनवर.. ।। 4 ।।
प्रभु समान निज आतम ध्याओ, निज परमातम पद प्रगटाओ।
आवागमन निवार।। जिनवर.. ।। 5 ।।

(159)

(तर्ज : केशरिया चावल)

जिनेश्वर के गुण गाओ रे, भक्ति हृदय में लाओ रे।
पाया मंगलमय जिनशासन, निज पद ध्याओ रे। टेक।।
साँचे देव गुरू पहिचानो, शास्त्राभ्यास करो।
तत्त्वों का सम्यक् निर्णय कर, भेदविज्ञान करो।।
हेय भाव तज, उपादेय अनुभव में लाओ रे।। 1 ।।
देखो जिन स्वामी की प्रभुता, अति आनन्दित हो।
पहिचानो निज शाश्वत प्रभुता, कभी न खण्डित हो।।
छोड़ बहिर्दृष्टि दुःखकारी, समकित पाओ रे।। 2 ।।
दर्श-ज्ञान-सुख-वीर्य अनन्ता, निज में प्रगटाया।
दिव्यध्वनि से धर्म तीर्थ प्रभु, जग में प्रगटाया।।
वीतराग प्रभु सम ही निज, पुरुषार्थ बढ़ाओ रे।। 3 ।।
मोह नशावे, काम नशावे, भव दुःख नश जावे।
सम्यक्ज्ञान कला विस्तारे, जो प्रभु को ध्यावे।।
सब संकल्प-विकल्प रहित, जिन भावना भाओ रे।। 4 ।।

(160)

जिन चरणों में अब लगी लगन।
प्रभु चरणों में अब लगी लगन।।टेक।।
चिर से भव में भ्रमते-भ्रमते, जब देखा जिन स्वामी को।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, तीर्थंकर जग नामी को।।
मोह महातम हुआ भगन।। प्रभु.।। 1।।
जब ही सुनी मैं श्री जिनवाणी, सम्यक् तत्त्वप्रतीति जगी।
बाह्य जगत निस्सार दिखावे, परिणति अन्तर माँहि पगी।।
निजानन्द में हुआ मगन।। प्रभु.।। 2।।
प्रभु मूरति नयनों में बस गई, हृदय में चिद्रूप बसा।
और न कछू सुहावे किंचित्, पर से प्रीति भाव नसा।।
स्वच्छ ज्ञान जिमि हुआ गगन।। प्रभु.।। 3।।
अहो देव अब यही भावना, निज अनुभव अविच्छिन्न रहे।
अपने में ही तृप्त रहूँ नित, अविरल समरस धार बहे।।
शीश नवाऊँ नाथ चरण।। प्रभु.।। 4।।

(161)

श्रेष्ठतम जिनवर नमन करूँ।। टेक।।
प्रभो आपके वैभव का इक कण भी, विस्मित करता है।
दिव्य धर्म उपदेश आपका, मोह महातम हरता है।।
महाभाग्य से पाया प्रभु , रागादिक वमन करूँ।। 1।।
विभो! आपका दर्शन करते, सकल कामना नशती है।
शान्ति सहज अन्तर में मिलती, शक्ति अनंत विलसती है।।

अपने में ही तृप्त रहूँ प्रभु, प्रभुता प्राप्त करूँ।। 2।।
जब से जिनवर तुमको देखा, आतम ज्योति जगी।
बाह्य जगत में कुछ न सुहावे, एकहि लगन लगी।।
होवे प्रभु निर्ग्रन्थ अवस्था, अक्षय ध्यान धरूँ।। 3।।
परम ज्योतिमय, परम जितेन्द्रिय, परम ब्रह्म अविकारी।
धन्य आपकी स्वरूप लीनता, हे चैतन्य विहारी।।
हुआ सहज कृत–कृत्य जिनेश्वर, वास समीप करूँ।।4।।

(162)

प्रभो! निवार्छंक तृप्त रहूँ।
ज्ञान सहज ही परमानन्दमय, वेदन सहज करूँ।।टेक।।
मोही बनकर व्यर्थ भ्रमाया, इच्छाओं का जाल बिछाया।
उनकी पूर्ति नहीं कर पाया, चहुँगति में बहु क्लेश उठाया।।
अब तो प्रभुवर तुमको पाया, मिथ्या मोह तजूँ।। 1।।
ज्ञायक में अनुबन्ध नहीं है, पर से कुछ सम्बन्ध नहीं है।
ग्रहण–त्याग नहीं होय कदा ही, पूर्ण स्वयं में स्वयं सदा ही।।
निज प्रभुता निज में विलसाये, नित संतुष्ट रहूँ।। 2।।
चित्र–विचित्र शक्ति–समुदाय, अनिराकृत खण्ड–अखण्ड रहाय।
है एकान्त–शान्त ध्रुव अद्‌भुत, तेजपुंज ज्ञायक सुखदाय।।
हो निश्चिंत निराकुल निर्भय, निज में मग्न रहूँ।। 3।।
अरे मोह के वशवर्ती हो, भ्रमता था पर में दुखकार।
मोह मिटा एकाग्र ज्ञान में, दिखा विश्व का सब विस्तार।।
चाह दाह विनशी समतामय, मुक्ति सहज वरूँ।। 4।।

हे निष्काम परम योगीश्वर, निज में लीन त्रिजग के ईश्वर।
राग रहित सबके उपकारी, शुद्ध चिद्रूप सदा अविकारी।।
मुक्तिमार्ग के परम प्रणेता, चरणन शीश धरूँ।। 5।।

(163)

आये प्रभुवर शरण तुम्हारी [2]।
अशरण जग में हे जिन स्वामी, तुम ही हो साँचे उपकारी। टेक।।
स्वारथवश साथी से दीखें, मित्र कुटुम्बादिक परिवारी।
स्वयं मोहवश दुखी विचारे, कैसे होवें सुख दातारी।।1।।
कर स्वाधीन आत्म-आराधन, हुए अनन्त चतुष्टयधारी।
शिवमग दर्शायो भविजन को, करें नमन हे भवजलतारी।। 2।।
यही भावना होवे जिनवर, लेकर आत्म शरण अविकारी।
अपनी निधि अपने में पावें, आवागमन मिटे दुःखकारी।। 3।।

(164)

(तर्ज : कैसे करूँ गुणगान)

जागा है पुण्य महान, प्रभुवर भक्ति करूँ।
गाऊँ गुण भगवान, प्रभुवर भक्ति करूँ।। टेक।।
गुण अनन्त मैं कैसे भाऊँ, अनुभव में भी अनन्त लखाऊँ।
आनन्द होय महान।। 1।।
आत्मलीन धनि-धनि भगवन्त, प्रगटा दर्शन- ज्ञान अनन्त।
झलके सकल जहान।। 2।।
पूर्ण निराकुल सुख है अनन्त, अद्भुत वीरज है भगवन्त।
प्रभुता अनन्त महान।। 3।।
पूर्ण वीतरागी अविकारी, दिव्यध्वनि जग मंगलकारी।

करे विश्व कल्याण।।4।।
तुम निरखत सब दुःख नशावे, आनन्दमय चिद्रूप दिखावे।
होय मोह की हान।।5।।
यही भावना निजपद ध्याऊँ, प्रभु सम गुण निज में प्रगटाऊँ।
पाऊँ शिवपुर थान।।6।।

(165)

अहो ज्ञान में ज्ञानमयी प्रभु रूप निहारा।
आनन्द अपारा, आनन्द अपारा।। टेक।।
करें हम प्रभुवर का गुणगान, करें हम निज–पर भेदविज्ञान।
सम्यक्दर्श सुखकारा।। आनन्द.।।1।।
विषय कषायारम्भ विड़ारें, निजानन्द निज में विस्तारें।
निर्ग्रन्थ रूप सम्हारा।। आनन्द.।।2।।
प्रभु की भक्ति सु–मन में धारें, स्वाश्रय से परिणाम सुधारें।
नाशें सर्व विकारा।। आनन्द.।।3।।
ऐसा ध्यान लगावें जिनवर, कर्म कलंक नशावे सत्वर।
हो ना जनम दुबारा।। आनन्द.।।4।।
महाभाग्य से प्रभु को पाया, बाह्य जगत में कुछ न सुहाया।
मुक्ति पद हो अविकारा।। आनन्द.।।5।।

(166)

(तर्ज–तिहारे ध्यान की मूरत)

ध्यानमय मूर्ति जिनवर की, मुक्ति मारग दिखाती है।
मोहतम दूर करती है, ज्ञान ज्योति जगाती है।। टेक।।
बाह्य श्रृंगार क्षण भंगुर, आत्मा सहज ही सुन्दर।

देखने योग्य चिन्मूरति, स्वयं में ही दिखाती है ।।1 ।।
वासना के ही कारण हैं, वस्त्र अरु बाह्य आभूषण।
निराभूषण विगत दूषण, तुम्हारी छवि सुहाती है ।।2 ।।
हैं आयुध द्वेष के लक्षण, तुम्हें इनकी जरूरत क्या ?
सौम्य निर्दोष प्रभु मूरति, भाव मैत्री सिखाती है ।।3 ।।
ज्ञान का स्रोत अन्तर में, सुःख का सिन्धु अन्तर में।
परम कृतकृत्य जिन मूरति, शीश सबका झुकाती है ।।4 ।।

(167)

(तर्ज : दरबार तुम्हारा मनहर है)

अति अद्‌भुत प्रतिमा देख प्रभो, आनन्द हृदय में छाया है।
अति पावन प्रतिमा देख प्रभो, स्मरण आपका आया है।।टेक।।
नासा दृष्टि सुखकारी है, निष्काम दशा अविकारी है।
बिन वस्त्राभूषण भी सुन्दर, आनन्द हृदय में छाया है ।।1 ।।
मानो समवशरण ही उतरा, प्रभो हमारे आँगन में।
हे वीतराग, हे तेजपुंज, आनन्द हृदय में छाया है ।। 2 ।।
बिन बोले बोल रही स्वामी, निज ज्ञायक भाव दिखाय रही।
शिवरूप सहज चिद्रूप निरख, आनन्द हृदय में छाया है ।।3 ।।
ऐसी अपनी प्रभुता देखी, निष्काम हुआ सन्तुष्ट हुआ।
प्रभु सम ही आत्म-लीनता हो, आनन्द हृदय में छाया है ।।4 ।।
हो भक्ति भाव से नाथ नमन, हो सहज स्वयं का अभिनन्दन।
निर्द्वन्द निराकुल आह्लादित, आनन्द हृदय में छाया है ।।5 ।।

(168)

(तर्ज : जगत में सौ देवन के देव)

देखो ये देवों के देव।
अद्भुत शान्त दशा निरखत ही,शीश झुके स्वयमेव।।टेक।।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, हुए सहज स्वयमेव।
नाम स्वयंभू पायो, यातें इन्द्रादिक करें सेव।।1।।
दिव्यध्वनि से जग में वर्ते, धर्मतीर्थ स्वयमेव।
भव्यजीव निज बोध सु पाकर, त्यागें मिथ्या देव।।2।।
मंगलमय सर्वोदय कारक, तीर्थ अहो जिनदेव।
वस्तु स्वभाव धर्म है अनुपम, परम अहिंसा एव।।3।।
महाभाग्य से पाये जिनवर, तजो विभाव कुटेव।
निजानंदमय नित्य निरंजन, ध्याओ आतम देव।।4।।

(169)

(तर्ज-तुम्हारे दर्श बिन स्वामी)

अहो! जिनराज दर्शन से, मुक्ति का मार्ग मिलता है।
मुमुक्षु जीव का हृदय, कमल की भाँति खिलता है।।1।।
वस्त्र भूषण सर्व दूषण, रहित स्वामी जगत भूषण।
अचल आसन दिव्य भाषण, अहो अमृत सा घुलता है।।2।।
नहीं भय अब रहा कर्मों का, वे तो भिन्न दिखते हैं।
स्वयं ही निर्जरित होते, शुद्ध परिणाम चढ़ता है।।3।।
बाह्य सम्पत्ति सहज मिलती, किन्तु वह हेय सब भासी।
होय उपयोग अन्तर्मुख, आत्म वैभव ही मिलता है।।4।।
अहो जिन! आपकी मूरति, आप सम ही दिखाती है।

परम मंगलमयी जिनरूप से, चिद्रूप दिखता है।। 5।।
हृदय में आप हों प्रभुवर, हृदय हो आप में तन्मय।
आपके सामने आते, शीश चरणों में झुकता है।। 6।।

(170)

(तर्ज : धन्य-धन्य वीतराग वाणी)

धन्य-धन्य वीतराग स्वामी, नमन चरणों में करें हम।
धन्य-धन्य सर्वज्ञ स्वामी, नमन चरणों में करें हम।। टेक।।
महाभाग्य से प्रभु को पाया, आनंद हमारे उर न समाया।
भक्ति सहज उमगाय, नमन चरणों में करें हम।।1।।
दर्शन से जिनवर मोह नशावे, भेदविज्ञान हृदय प्रगटावे।
शुद्धात्म प्रत्यक्ष दिखाय, नमन चरणों में करें हम।। 2।।
अपना सुख अपने में दिखावे, उपयोग बाहर में नहीं भटकावे।
निर्ग्रन्थ मार्ग सुहाय, नमन चरणों में करें हम।।3।।
दूर होंय सब ही बाधायें, प्रभु चरणों में चित्त लगायें।
परम शान्ति विलसाय, नमन चरणों में करें हम।। 4।।
हम सब भी निज आतम ध्यावें, प्रभु सम ही ध्रुव प्रभुता पावें।
आवागमन नशाय, नमन चरणों में करें हम।।5।।

(171)

जिनवर आज मेरे हृदय में आये।। टेक।।
महाभाग्य से दर्शन पाये, लखकर रोम-रोम हर्षाये।
आनन्द अन्तर में न समाये।। जिनवर.।। 1।।
भेदज्ञान की कला जगाएँ, स्वानुभूति को मन ललचाया।
गुण अनंत निज में विलसाएँ।। जिनवर.।। 2।।

सब संसार असार दिखाए, वीतरागता मात्र सुहाए।
प्रभु सी अक्षय प्रभुता भाए।। जिनवर.।। 3।।
यही भाव पुरुषार्थ जगाएँ, सम्यक् साम्य भाव प्रगटाएँ।
प्रभु चरणों में शीस नवाएँ।। जिनवर.।। 4।।

(172)

कहे गये हैं सिद्धों के गुण, सिद्धचक्र के पाठ में।
भाव विशुद्धि सहज बढ़ाओ, शामिल होकर पाठ में।।टेक।।
देह,कर्म, रागादि भिन्न हैं, निश्चय सिद्ध स्वरूप है,
विन्मूरति चिन्मूरति अनुपम, चिदानंद चिद्रूप है।
सम्यक् भेद विज्ञान करो, नहीं उलझो बंदर बाँट में।।1।।
यह संसार महा दुःख कारण, चार गति दुखरूप हैं,
परमानंदमय ज्ञानानंदमय, सारभूत शिवरूप है।
शुद्धातम ही आराधन के योग्य, अरे इस हाट में।।2।।
पूजन कर लो, भक्ति कर लो, मंगल अवसर आया है,
प्रगटाओ रत्नत्रय भविजन, देव गुरु को पाया है।
ऐसा अवसर फिर दुर्लभ है, भ्रमो नहीं इस हाट में।।3।।
जिनवाणी तुमने है पाई, करो सहज अब ज्ञानाभ्यास,
छोड़ो-छोड़ो पर की आस, करो सदा अपना विश्वास।
धर्मामृत पा पार चलो अब, आए हो निज घाट में।।4।।

(173)

(तर्ज : कर लो जिनवर का गुणगान)

कर लो सिद्धों का गुणगान, आयी मंगल घड़ी।
आई मंगल घड़ी, आई मंगल घड़ी।। टेक।।

द्रव्य-भाव-नो कर्म से, रहित शुद्ध चिद्रूप।
कर्म कलंक नशाय कै, भये स्वयं शिवभूप।। 1।।
सारभूत शुद्धात्मा, अहो अतीन्द्रिय ज्ञान।
इन्द्रिय सुख असार तज, सहज बनो भगवान।।2।।
श्री जिनवर की भक्ति से, आपद सब मिट जाय।
सहज मिले सब सम्पदा, विघ्न रोग टल जाए।।3।।
अहो! अहो! प्रभु चरण में, मस्तक सहज नवाय।
होऊँ मैं निष्काम प्रभु, परमानंद विलसाय।। 4।।

(174)

निर्ग्रन्थ मार्ग अपनाया, प्रभु सहजमार्ग अपनाया।
भोगों का अतिविषम मार्ग तज, योगमार्ग अपनाया।।
सत्यपंथ निर्ग्रन्थ दिगम्बर, आनंद उर न समाया।। टेक।।
अरे मोहवश व्यर्थ भटकता, भव-भव में भरमाया।
महाभाग्य से अहो जिनेश्वर, दर्श आपका पाया।।
बोध हुआ निजपद का जिनवर, चिर-मिथ्यात्व नशाया।। 1।।
भोगों के तो नाम मात्र से भी, प्रभु मन घबड़ाया।
बाह्य विभूति लगे धूल सम, निज वैभव दिखलाया।।
आत्मख्याति की हुई लालसा, ओर न कछू सुहाया।। 2।।
हो ऐसा पुरुषार्थ अलौकिक, चरणों शीस नवाया।
होय प्रगट निर्ग्रन्थ अवस्था, यही रूप मोहि भाया।।
हो प्रभावना इसी मार्ग की, दृढ़ संकल्प जगाया।। 3।।

(175)

वीतराग रूप देखा, भवतापहारी।
जिनवर स्वरूप देखा, आनन्दकारी।।टेक।।
निर्मोह रूप देखा, निष्काम रूप देखा।
निष्कर्म रूप देखा, आनन्दकारी।।1।।
निर्दोष रूप देखा, सम्यक् स्वरूप देखा।
चैतन्य रूप देखा, आनन्दकारी।।2।।
दृष्टास्वरूप देखा, ज्ञातास्वरूप देखा।
सर्वज्ञरूप देखा, आनन्दकारी।। 3।।
रागादि शून्य देखा, निजभावपूर्ण देखा।
परमात्मरूप देखा, आनन्दकारी।।4।।
अद्भुत स्वरूप देखा, ध्रुव चित्स्वरूप देखा।
प्रशान्तरूप देखा, आनन्दकारी।। 5।।
जिनरूप जब ही देखा, प्रभुरूप जब ही देखा।
शुद्धात्मरूप देखा, आनन्दकारी।।6।।
पर्यायदृष्टि छूटी, व्यवहारदृष्टि छूटी।
परमार्थदृष्टि प्रगटी, आनन्दकारी।।7।।
भावना यही है मैं भी, निर्ग्रन्थ मार्ग पाऊँ।
मुक्ति का मार्ग भासा, आनन्दकारी।।8।।
प्रभु सम स्वरूप अपना, अपने में आप
अविनाशी प्रभुता पाऊँ, आनन्दकारी।।9।।

(176) श्री समवशरण स्तुति

(तर्ज : वीर की दिव्यध्वनि सुखकार)

समवशरण मनहारी, प्रभु का समवशरण मनहारी।।टेक।।
अद्भुत शान्त छवि जिनवर की, शोभे मंगलकारी।
शाश्वत सुख का मार्ग दिखावे, सहज सदा अविकारी।।1।।
चतुरानन शिवसुख-प्रदाता, अनन्त चतुष्टय धारी।
परम वीतरागी हैं फिर भी, तिहुँ जग के उपकारी।।2।।
अशरण जग में भव्यजनों को, यही शरण सुखकारी।
निश्चय ही भव-भ्रमण मिटावे, दर्शन आनन्दकारी।।3।।
देखो बारह सभा भरी हैं, रचना जग से न्यारी।
दिव्यध्वनि से तीर्थ प्रवर्ते, सब ही को हितकारी।।4।।
पूर्व विदेहीनाथ विराजे, सीमन्धर सुखकारी।
कुन्दकुन्द आचार्य देव का, दर्शन भव दुखहारी।। 5।।
रोम-रोम उल्लसित जिनेश्वर, चरणों धोक हमारी।
धन्य दशा ऐसी कब प्रगटे, उस क्षण की बलिहारी।।6।।

(177)

समवशरण में अहो! विदेहीनाथ विराजे हैं।
जिनवर दर्शन करके जागे भाग्य हमारे हैं।। टेक।।
प्रभु दर्शन मंगलमयी, तिहुँ जग को सुखकार।
निज दर्शन का निमित्त है, मोह विनाशनहार।। 1।।
रात-दिवस का भेद नहीं, फैला दिव्य प्रकाश।
दिव्यध्वनि सुन भव्यजन, करते आत्म विकास।। 2।।

दर्शावें जिननाथजी, शाश्वत चैतन्यनाथ।
आराधन करके स्वयं, बने त्रिलोकीनाथ।। 3।।
इन्द्रादिक भी कर रहे, अद्भुत भक्ति ललाम।
प्रभु चरणों में कर रहे, हम भी सहज प्रणाम।। 4।।
देव! यही है भावना, प्रगटे पद निर्ग्रन्थ।
भासा अन्तर्ज्ञान में, यही सत्य शिवपन्थ।।5।।
हुई व्यवस्थित मति प्रभो! ध्यावें निज पद सार।
सहज भावमय मग्न हो, जावें भव से पार।। 6।।

(178)

(तर्जः स्वर्ग से सुन्दर अनुपम है ये)

समवशरण जिनवर का देखो, है अनुपम अविकार।
भक्तिभाव से करें अर्चना, आनंद अपरम्पार।। टेक।।
इन्द्र चक्रवर्ती चरणों में नत, सबको बोध कराय।
जग वैभव नश्वर, अविनश्वर निज वैभव दर्शाय।।
भेदज्ञान कर हो अन्तर्मुख, रहो सु जाननहार।। 1।।
वीतराग सर्वज्ञ हिंतकर, महिमा कही न जाय।
यद्यपि अकर्त्ता धर्मतीर्थ के, कर्त्ता प्रभु कहलाय।।
ज्ञाता दाता मुक्तिमार्ग के, प्रभुता देव अपार।। 2।।
अरे विराधक दुःख पाते हैं, साधक शिवसुख पाय।
जैसो मुख दर्पण में देखो, वैसो ही दिखलाय।।
बंध मुक्ति परिणामों से ही, निज परिणाम संभारो।।3।।
भाव शून्य क्रिया से क्या हो? कर विचार मनमाँहि।
कर संकल्प नाव में बैठो, स्वयं पार हो जाँहि।।
ज्ञानाभ्यास करो मन माँही, जिनवर तारणहार।। 4।।

(179)

(तर्ज: वीर की दिव्यध्वनि सुखकार)

शोभे समवशरण सुखकार, प्रभु का समवशरण सुखकार।। टेक।।
अन्तरीक्ष जिनराज विराजे, अपने ही आधार।
मानों कहते हैं हम सबसे, पर-आश्रय दुखकार।। 1।।
प्रभु-चरणों में इन्द्रादिक के, मुकुट झुकें अविकार।
मानों दर्शावें हम सबको, जग का विभव असार।। 2।।
ढुरते चौंसठ चमर कहत हैं, जिनपद ही है सार।
जो अपने प्रभुवर को झुकते,वे होते भवपार।। 3।।
अनन्त-चतुष्टय-युत प्रभुवर की, महिमा अपरम्पार।
दर्शावें निज शुद्धातम की, ध्रुव प्रभुता अविकार।। 4।।
शुद्धातम ही श्री जिनवर की, दिव्यध्वनि का सार।
अहो! अनुभवें आनन्दित हों, सहज नमन अविकार।।5।।

(180)

जिनमन्दिर-दर्शन

(तर्ज : अति पुण्य उदय मम आया)

बहु पुण्य उदय मम आयो, सुन्दर जिन-भवन लखायो।
भव्यों को सुख का कारण, करता भवताप निवारण।। 1।।
जो समवशरण सम राजै, जिन सम जिन चैत्य विराजै।
जहाँ गंधकुटी सम वेदी, सिंहासन छत्र सफेदी।। 2।।
शशि द्युति से अधिक उजाले, जहाँ यक्ष चमर बहु ढोरें।
अति उन्नत शिखर बनी है, जिस पर शुभ ध्वजा लगी है।। 3।।
फहरे दे शुभ सन्देशा, यहाँ दुख का नहीं अन्देशा।
हे सुख इच्छुक! यहाँ आओ, दुख कारण पाप भगाओ।। 4।।

यहाँ खुद ही भाव बदलते, सब बहुविधि पुण्य सु-करते।
सुन्दर स्तोत्र उचारें, ध्वनि गगन माँहि गुँजारें।। 5।।
कोई शुभ पूजन करिके, कोई ध्यान प्रभु का धरिके।
जग की सब सुधि-बुधि खोते, निज सुख में मग्न सु होते।।6।।
जहाँ शास्त्र सभा है होती, जिससे मिथ्या मति भगती।
कोई लीन धर्म चर्चा में, देखत उठती शुभ लहरें।। 7।।
मधि मारबाड़ संसार, यह वृक्ष है छायादार।
भव-वन में पथिक भटकते, अकुलाते धैर्य न धरते।। 8।।
उन सबको आश्रय दाता, जिनमन्दिर जग में त्राता।
प्रभु हर्ष प्रसंग महा है, जिनमन्दिर दर्श मिला है।। 9।।
सत् देव-शास्त्र-गुरु पाये, रोमांच काय में आये।
शुभभाव हृदय में जागा, अज्ञान प्रमाद सु भागा।। 10।।
अब मैं चाहूँ जगदीश, निज चैत्य बनाऊँ ईश।
परिणति करूँ मैं मन्दिर, ध्रुव ज्ञान चैत्य उस अन्दर।। 11।।
अरु करूँ प्रतिष्ठा भारी, मेटूँ आरति संसारी।
प्रभु भेदभक्ति को त्यागूँ, अरु निज अभेद में पागूँ।। 12।।

(181)

श्री चौबीस तीर्थंकर स्तवन

1. श्री आदिनाथ भगवान

(गीतिका)

लीन हो निज ध्येय में, सर्वज्ञ पद पाया प्रभो।
आदि तीर्थंकर नमन, अविकार हो सुखकार हो।।

अखिल जग में, एक शुद्धातम ही भासे सार है।
पाया स्वयं में ही अहो, आनंद अपरम्पार है।।

2. श्री अजितनाथ भगवान

मोह ही हुआ पराजित, अजित प्रभु अविजित रहे।
चिद्रूप को आराधकर, शिवभूप जिनवर हो गये।।
ऐसा पराक्रम प्रगट होवे, निर्विकल्प रहूँ सदा।
संतुष्ट प्रभु निर्मुक्त निज में, सहज तृप्त रहूँ सदा।।

3. श्री सम्भवनाथ भगवान

अहो संभवनाथ दर्शन कर, परम आनन्द हुआ।
परभाव विरहित एक ज्ञायक, भाव का दर्शन हुआ।।
भावना जागी सहज, निर्ग्रन्थ पद अविकार हो।
तृप्त निज में ही सदा, पर की न चाह लगार हो।।

4. श्री अभिनन्दननाथ भगवान

अहो अभिनन्दन प्रभो, स्वीकार अभिनंदन करो।
आत्म आराधन करूँ मैं, आप प्रभु साक्षी रहो।।
क्रूरता से शून्य होवे, सिंहवृत्ति ज्ञानमय।
रहूँ निज में मग्न सहजहिं, कर्म नाशें क्लेशमय।।

5. श्री सुमतिनाथ भगवान

कुमति वश धर निमित्त दृष्टि, सहा दुःख अपार है।
चिदानन्दमय आत्मा ही, अमित गुण भंडार है।।
आत्म आश्रय से जिनेश्वर, ध्रुव अचल शिवपद लहा।
धनि सुमति जिन, सुमतिदाता जगत त्राता हो अहा।।

6. श्री पद्मप्रभ भगवान

स्वर्ण विरचित पंकजों की, पंक्ति प्रभु चरणों तले।
शोभती सु विहार काले, और बहु अतिशय धरे।।
पद्मवत् निर्लिप्त मुद्रा, मुक्तिपथ दरशावती।
पद्मप्रभ तुमको निरखते, याद अपनी आवती।।

7. श्री सुपार्श्वनाथ भगवान

हे सुपार्श्व जिनेन्द्र तेरा, स्तवन कैसे करूँ।
गुण अनन्त अहो अलौकिक, आदि अन्त नहीं लहूँ।।
वचन में आवे नहीं, चिन्तन न पावे पार है।
स्वानुभवमय भक्ति वर्ते, वंदना अविकार है।।

8. श्री चन्द्रप्रभ भगवान

सुधा झरती शांत मूरति, चन्द्रप्रभ अति सोहनी।
मोहनाशक दिव्य ध्वनि, स्वामी परम मनमोहिनी।।
चन्द्र किरणों के परस से, सिन्धु ज्यों उछले प्रभो।
उछले परम आनन्द सागर, सहज दर्शन से विभो।।

9. श्री पुष्पदंत भगवान

हे प्रभो! अध्यात्म विद्या, दिव्यध्वनि से तुम कही।
पुष्पदन्त जिनेन्द्र मुक्ति, की सुविधि भविजन लही।।
नाम सार्थक सुविधिनाथ, स्वपद भजूँ अतिचाव से।
निश्िंचत हूँ निर्द्वन्द हूँ, रूचि लगी सहज स्वभाव से।।

10. श्री शीतलनाथ भगवान

आधि-व्याधि-उपाधिमय, भवताप से तपता रहा।
अहो! शीतलनाथ मम उर, दर्श से शीतल भया।।

परम शीतल तत्त्व, निज शुद्धात्मा पाया अहा।
तृप्त निज में ही रहूँ, संताप नहिं उपजे कदा।।

11. श्री श्रेयांसनाथ भगवान

निरपेक्ष होते भी अहो, जग दुख हरो श्रेयांस जिन।
सहज जीते कर्म शत्रु, क्रोध बिन शस्त्रादि बिन।।
शृंगार बिन स्वामी स्वयं ही, जगत के शृंगार हो।
ध्रुव श्रेय पाया नाथ, मेरी वंदना अविकार हो।।

12. श्री वासुपूज्य भगवान

चक्र से या वज्र से भी, मोह जो नशता नहीं।
जिननाथ तव उपदेश से, दुर्मोह नाशे सहज ही।।
इन्द्रादि से भी पूज्य स्वामिन्, वासुपूज्य सु नाम है।
सहज पूज्य स्वभाव पाया, नाथ सहज प्रणाम है।।

13. श्री विमलनाथ भगवान

स्नान बिन निर्मल हुए, प्रभु आप सहज स्वभाव से।
स्वयं छूटे कर्ममल, विभु आत्मध्यान प्रभाव से।।
विमल जिनवर दर्श करते, भेदज्ञान हृदय जगा।
भ्रान्ति विघटी शान्ति प्रगटी, भाव अति निर्मल भया।।

14. श्री अनन्तनाथ भगवान

बसे सादि अनंत शिव में, परम आनन्द रूप हो।
प्रगटे अनन्त सुगुण जिनेश्वर, रहो ज्ञाता रूप हो।।
प्रभुता अनन्त सुज्ञान में भी, अनंत ही प्रतिभासती।
प्रभु अनन्त सुदर्श से, महिमा अनन्त प्रकाशती।।

15. श्री धर्मनाथ भगवान

जिन धर्म पाया भाग्य से, आनंद अपरम्पार है।
दीखे स्वयं में ही अहो, अक्षय विभव भंडार है।।
निन्दा करें या त्रास दें जन, धर्म नहीं छोड़ूँ प्रभो।
हे धर्मनाथ जिनेन्द्र दुःखमय, बन्ध सब तोड़ूँ विभो।।

16. श्री शान्तिनाथ भगवान

जन्म क्षण में ही जगत में, सहज ही साता हुई।
सहस्र नेत्रों देखते, नहीं इन्द्र को तृप्ति हुई।।
विभव चक्री का प्रभो, निस्सार जाना आपने।
हे शान्ति जिन! सुख शान्तिमय, निज पद प्रकाशा आपने।।

17. श्री कुन्थुनाथ भगवान

प्रभु अहिंसा धर्म जग में, आपने विस्तृत किया।
मैत्री-प्रमोद, दया तथा माध्यस्थ भाव सिखा दिया।।
अनुभूत मुक्तिमार्ग का, उपदेश दे प्रभु शिव बसे।
हे कुन्थुनाथ जिनेन्द्र! सहज सु, भक्ति उर में उल्लसे।।

18. श्री अरनाथ भगवान

षट्खण्ड पर पाकर विजय, चक्री कहाए हे प्रभो।
फिर विजय पाकर मोह पर, तीर्थेश कहलाए विभो।।
भव रहित भगवान आत्मा, आप दर्शाया हमें।
अरनाथ जिन! उपकार वश, नित भाव से वन्दन तुम्हें।।

19. श्री मल्लिनाथ भगवान

हे बाल ब्रह्मचारी प्रभो, चिद्ब्रह्म रस में रम रहे।
यौवन समय निर्ग्रन्थ दीक्षा, धार शिवचारी भये।।

त्रैलोक्य जेता काम जीता, होय निर्मोही सहज।
हे मल्लिजिन ! प्रभु रूप लखते, शीश झुक जाता सहज।।

20. श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान

हे नाथ मुनिसुव्रत तुम्हें, पाकर सनाथ हुआ जगत।
दिव्य ध्वनि सुनकर सु जाना, भविजनों ने सत् असत्।।
असत् रूप विभाव तज, सत् भाव की आराधना।
कर तिरें भविजन भवोदधि, हो सहज प्रभु वन्दना।।

21. श्री नमिनाथ भगवान

अणुमात्र का स्वामित्व तज, त्रयलोक के स्वामी हुए।
आत्मा में मग्न हो, सर्वज्ञ जगनामी हुए।।
शुद्धात्मा ही मंगलोत्तम, शरण रूप अनन्य है।
हो नमन नमि जिन ! आपको, नमनीय रूप अनन्य है।।

22. श्री नेमिनाथ भगवान

हे नेमि प्रभु ! आदर्श है, वैराग्य जग में आपका।
चढ़ गये गिरनार स्वामी, तोड़ बन्धन पाप का।।
निर्ग्रन्थ हो, निर्द्वन्द हो, प्रभु मग्न निज में ही हुए।
प्रभुता सहज प्रगटी अलौकिक तृप्त निज में ही हुए।।

23. श्री पार्श्वनाथ भगवान

नाग नागिन दग्ध लखकर, करूण हो संबोधिया।
धरणेन्द्र पद्मावती हुए, वैराग्य प्रभु तुम भी लिया।।
निर्ग्रन्थ हो आत्मार्थ साधा, हो गये परमात्मा।
जग को बताया पार्श्वप्रभु, परमात्मा सब आत्मा।।

24. श्री महावीर भगवान

जीता सुभट दुर्मोह सा प्रभु, मदन को निर्मद किया।
जग से विरत हो आत्मरत, परमात्म पद को पा लिया।।
तत्त्वोपदेश दिया प्रभो! आदेय शुद्धात्मा कहा।
हे वीर जिनवर तुम प्रसाद सु, सहज निजपद हम लहा।।

श्री चौबीस तीर्थंकर स्तुति

(182)

श्री आदिनाथ स्तुति

(तर्ज : सीमंधर स्वामी आये शरण तुम्हारी)

आदीश्वर स्वामी, तुम ही शरण हमारे।
दर्शन से प्रभु मोह नशावे, दुर्विकल्प निरवारे ।। टेक।।
तुम गुण चिन्तत अहो जिनेश्वर, भेदज्ञान उर जागे।
सारभूत शुद्धातम भासे, जगत असार सु लागे।।
परमानन्दमय मुक्तिमार्ग में, हो आदर्श हमारे।। 1।।
दर्शन करते सहजपने ही, भाव विशुद्ध सु होवें।
पाप नशावें क्लेश नशावें, आनंद मंगल होवे।।
अहो! अहो!! निर्ग्रन्थ मार्ग के, तुम ही दिखावन हारे।।2।।
भाव नमन हो द्रव्य नमन हो, प्रभु पुरुषार्थ बढ़ाऊँ।
करूँ साधना रत्नत्रय की, जीवन सफल बनाऊँ ।।
नाव हमारी भव सागर के, अब लग जाए किनारे।।3।।

(183)

धन्य-धन्य आदीश्वर की समता, समता है मंगलकारी।
जय मंगलकारी, समता है मंगलकारी।। टेक।।

जन्मोत्सव का ठाठ रचा था, आप सुरी का निधन लखा था।
जग का विभव अनित्य निहारा, पद निर्ग्रन्थ लिया अविकारा।।
अनशन तप छह माह किया था, अति आनंदकारी ।। 1।।
सात माह नव दिन मुनिराया, नहीं आहार योग था आया।
सुदी तृतीया वैशाख तिथि को, मिला इक्षुरस अहो प्रभो को।।
अक्षय तृतीया पर्व चला, तब ही से सुखकारी।। 2।।
धन्य भाग्य श्रेयांस राज का, प्रथम आहार मुनिराज का।
धन्य हस्तिनापुरी हुई थी, दुन्दुभि और जय ध्वनि हुई थी।।
रत्न पुष्प गंधोदक वर्षा हुई वृष्टि भारी ।। 3।।
आदिनाथ की भक्ति करते,हृदय हमारा अति ही हर्षे ।
देहासक्ति सहज ही छूटे, जग विषयों की आशा छूटे।।
अहो! अहो! हो नाथ हमारी दशा अनाहारी।। 4।।
भक्तिभाव से शीश नवावें, मुक्ति मार्ग प्रभु सा प्रगटावें।
आराधन की धारा वर्ते, निजानंद निज माँहि प्रवर्ते।।
दुखमय कर्म कलंक मिटे, हो शिवपद सुखकारी।। 5।।

(184)

अहो आदि स्वामी! शरण तेरी आया।
आनन्द मेरे उर न समाया।। टेक।।
पिता नाभिराजा, मरूदेवी माता।
करम भूमि की आदि में हे विधाता।।
सहज लोक जीवन भी तुमने सिखाया।। 1।।
निधन देख नीलांजना का हे जिनवर।

अंतर से वैराग्य जागा था सुखकर।।
अहो देव निर्ग्रन्थ पद अपनाया।। 2।।
इच्छा-निरोधमयी तप सु-कीना।
हने कर्म घाति, अर्हंत पद सु-लीना।
धर्मतीर्थ भव्यों को प्रभु जी बताया।। 3।।
यही भावना मैं भी जिनमार्ग पाऊँ।
परम ध्येय ध्रुवरूप ज्ञायक सु ध्याऊँ।।
सहज भक्ति से शीश चरणों में नाया।।। 4।।
इन्द्रिय सुखों की न, प्रभु कामना है।
विनाशीक वैभव की, अब चाह ना है।।
शाश्वत विभव मैंने अन्तर में पाया।। 5।।

(185)

आदीश्वर स्वामी, वन्दूँ मैं बारम्बार।
धन्य-घड़ी प्रभु दर्शन पाये, वन्दूँ बारम्बार।।टेक।।
कर्मभूमि की आदि में, मुक्तिमार्ग-अविकार।
दर्शायो आनन्दमय, कियो परम-उपकार।।1।।
परम-शान्तमुद्रा अहो, भेदज्ञान दर्शाय।
दिव्यध्वनि सुनि आपकी, विभ्रम सर्व पलाय।।2।।
भव्य अनेकों तिर गये, ले निज-पद-आधार।
इस अशरण संसार में, आपहि तारण हार।।3।।
मुक्ति मार्ग प्रभु आपका, हमें आज भी प्राप्त।
भेदज्ञानियों से अहो, निज में ही हे आप्त।।4।।

प्रभुता प्रभुवर आप-सम, दीखे अन्तर माँहि।
होय परम निर्ग्रन्थता, भाव सहज उमगाहि।।5।।
नहीं प्रयोजन जगत से, चाह न रही लगार।
तृप्त स्वयं में ही रहूँ, सहजरूप सुखकार।।6।।

(186)

प्रभु आदीश्वर गुण गाऊँ मंगलकारी।
जिन होकर होऊँ निज चैतन्य विहारी।।टेक।।
दृग- ज्ञान- चरणमय मुक्तिमार्ग दर्शाया,
बस यही मार्ग मुझको भी नाथ सुहाया।
निर्ग्रन्थ दिगम्बर सत्यपंथ अविकारी।।प्रभु.....।।1।।
है ज्ञान सुख प्रभुता शाश्वत अन्तर में,
प्रत्यक्ष दिखावे लगे न मन बाहर में।
हे वीतराग सर्वज्ञ परम उपकारी ।।प्रभु.....।। 2।।
पुण्योदय के दुर्भोग रोग सम छोड़े,
हो अन्तर्मुख मिथ्या जग बन्धन तोड़े।
ऐसा ही हो पुरूषार्थ प्रभो! हितकारी।।प्रभु.....।।3।।
अशरण जग लखकर शरण आपकी आया,
दर्शन करके प्रभु भाव निशंक जगाया।
आत्माराधन ही भासे शिवसुखकारी।।प्रभु.....।।4।।
हो समयसारमय इक-इक समय जिनेश्वर,
संतुष्ट रहूँ निज में ही अहो महेश्वर।
निष्काम वन्दना होवे आनंदकारी।।प्रभु.....।। 5।।

जिनशासन की होवे प्रभावना स्वामी,
सर्वस्व सर्मपण रहे सदा जगनामी।
जिननाथ सफल हो यही भावना म्हारी।। प्रभु..... ।।6।।

(187)

हे ऋषभ जिनेश्वर! अनाहारी पद पाऊँ।। टेक।।
देहादिक अति भिन्न दिखावें, निज में तृप्त रहाऊँ।
निजानंद अमृत रस पीते, दोष क्षुधादि नशाऊँ।। 1।।
अनाहारी आतम स्वभाव ही, क्षण-क्षण अपना भाऊँ।
भेदविज्ञानमयी शक्ति से, नहीं उपयोग भ्रमाऊँ।। 2।।
युक्ताहारी साधक होकर, अनाहारी ध्रुव ध्याऊँ।
हो परमार्थ भक्ति अन्तर में, समता तुम सम पाऊँ।। 3।।
हरष-हरष प्रभुवर गुण गाऊँ, चरणों शीश नवाऊँ।
नहीं कामना कोई अन्य विभु, अक्षय पद विलसाऊँ।। 4।।

(188)

(तर्जः हे परम दिगम्बर यति)

हे आदीश्वर भगवान, करूँ गुणगान हर्ष मन भारी।
जिन भक्ति मंगलकारी, जिनभक्ति आनन्दकारी।। टेक।।
तिहुँ जग में अनुपम रूप अहो,भाया मुझको जिनरूप अहो।
दर्शन से होवे चित्त शान्त अविकारी, जिनभक्ति..।। 1।।
निर्ग्रन्थ रूप नाशादृष्टि,धर्मामृत की करती वृष्टि।
जागृत हो भेदविज्ञान परम हितकारी, जिनभक्ति...।। 2।।
शुद्धात्म स्वरूप झलकता है, जग विभव असार सु दिखता है।

हो उदासीनता सहज सर्व हितकारी, जिनभक्ति... ।। 3 ।।
जब तक नहिं निजगुण प्रगटावें,प्रभु चरण–शरण भव–भव पावें।
हो सफल भावना नाथ सु–मंगलकारी, जिनभक्ति.... ।।4 ।।
होगी वह धन्य घड़ी सुखकर,निर्ग्रन्थ दशा प्रगटे प्रभुवर।
हो निजानन्द में परम तृप्ति अविकारी, जिनभक्ति.... ।।5 ।।

(189)

(तर्ज: मेरे मन मन्दिर में आन)

जय जय आदीश्वर भगवान, दर्शन आनन्दमय अम्लान ।।टेक।।
भव–भव भ्रमते अवसर आया,महाभाग्य से नरभव पाया।
पाया जिनवर धर्म महान,दर्शन आनन्दमय अम्लान।। 1 ।।
जिनवाणी का श्रवण मिला है, तत्त्वों का सद्बोध मिला है।
नाशें दुःखकारण अज्ञान, दर्शन आनन्दमय अम्लान।। 2 ।।
प्रभु मूरत सोहे सुखकारी ,ध्यानदशा अद्भुत अविकारी।
ध्यावें ध्येय रूप भगवान,दर्शन आनन्दमय अम्लान।। 3 ।।
प्रभु निरखत सब दुःख पलावे,ज्ञानानंद सिंधु उछलावे।
करते भक्ति सहित गुणगान, दर्शन ज्ञानानंद अम्लान।। 4 ।।
जिन चरणों में शीश झुकावें,भाव भरी हम भावना भावें।
होवें हम सब आप समान,दर्शन आनन्दमय अम्लान।। 5 ।।

(190)

आज प्रभु ऋषभदेव तप धारा।। टेक।।
नीलांजना निधन को लखकर, प्रभु वैराग्य विचारा।
लौकान्तिक अनुमोदन कीना, गूँजा जय–जयकारा।। 1 ।।
इन्द्रादिक ने किया महोत्सव, स्वर्ग असार विचारा।

भार्यीं थी वैराग्य भावना, ज्ञायक भाव निहारा।। 2।।
दीक्षा लेकर प्रभुवर ने फिर, आतम ध्यान लगाया।
छह महीने उपवास किया था, फिर आहार नहीं पाया।। 3।।
दान तीर्थ का किया प्रवर्तन, नृप श्रेयांस सुखकारी।
इक्षु रस आहार दिया था, विधि करी अविकारी।। 4।।
ऐसा निश्चल ध्यान किया था, केवल लक्ष्मी पायी।
धर्म तीर्थ का हुआ प्रवर्तन, शान्ति सुधा बरसायी।। 5।।
शुक्लध्यान धरि कर्म नशाये, आवागमन मिटाया।
ध्रुव अनुपम शिव पदवी पायी, चित्स्वरूप दर्शाया।। 6।।

(191)

श्री अजितनाथ स्तुति

(तर्ज: प्रभु की हो रही जय जयकार)

जय-जय अजितनाथ भगवान, निरखत हुआ भेदविज्ञान।।टेक।।
न्यारे देह कर्म रागादि, न्यारा आतम जान।
ऐसा हर्ष हुआ मानो प्रभु, पाया एक निधान।। 1।।
रागादिक ही दुःख के कारण, नहिं पर द्रव्य सुजान।
इष्ट-अनिष्ट कल्पना भासी, अपना ही अज्ञान।। 2।।
वीतरागता परमानन्द मय, निज स्वभाव पहिचान।
चित्स्वरूप अनुभव में आयो, निश्चय सिद्ध समान।। 3।।
यही भाव मन में उमगायो, हो पुरुषार्थ महान।
आप समान सहज ज्ञाता हो, बनूँ स्वयं भगवान।। 4।।
भक्ति भाव से करूँ वन्दना, रहूँ परम निष्काम।
बढ़ती जावे भाव विशुद्धि स्वाश्रय ही सुखखान।। 5।।

(192)

(तर्ज: हे सीमंधर भगवान)

प्रभु अजितनाथ हो मोह जयी सुख पाऊँ।
नित सहज भाव से जाननहार रहाऊँ।। टेक।।
पर से सुख-दुख नहीं हो कदापि यह जाना।
पर-पर में निज-निज में सहज पिछाना।।
यह भेदज्ञान का मंत्र सदा दोहराऊँ।। 1।।
अब तक बाहर में देव व्यर्थ भरमाया।
कर आवागमन दुःख ही दुख मैं पाया।।
इन्द्रिय सुख में अब सुख की भ्रांति मिटाऊँ।।2।।
अब महाभाग्य से पास आपके आया।
प्रभु धर्म अहिंसामयी रत्न है पाया।।
तज राग-द्वेष निज में ही तृप्त रहाऊँ ।। 3।।
अब भोग-रोग सम, विभव धूल सम जाने।
निर्ग्रन्थ मार्ग ही सहज शांतिमय माने।।
हो निर्विकल्प आतम से आतम ध्याऊँ।। 4।।
प्रभु वीतरागता धन्य आपकी भासी।
अब टूट गई मिथ्या आशा की पाशी।।
निष्काम भाव से सविनय शीस नवाऊँ।। 5।।

(193)

अजित जिनेश्वर साँचे ईश्वर, नमूँ-नमूँ मैं अविकारी।
मोह-तिमिर हर ज्ञान दिवाकर, शोभे मूरति अति प्यारी।।टेक।।

स्वाश्रय से ही मोह जीतकर, परम जितेन्द्रिय आप हुए।
ध्यान मग्न हो घाति कर्म तज, तीन लोक के नाथ हुए।।
धर्म तीर्थ का किया प्रवर्तन, सब ही को आनन्दकारी।। 1।।
हे स्वामिन्! जो तुमको जाने, द्रव्य और गुण-पर्यय से।
सो जाने अपना शुद्धातम, मोह दूर भगता उससे।।
प्रभु समान ही हो जावे वह, सहज मुक्ति का अधिकारी।।2।।
कल्पवृक्ष अरु चिन्तामणि ये, पुण्य पदारथ इक भव में।
किंचित् कुछ सामग्री देते, नहीं सहायक शिवमग में।।
किन्तु जिनेश्वर भक्ति तेरी, निश्चय शिवसुख दातारी।।3।।
हे परमेश्वर! यही भावना, तुम-सम जाननहार रहूँ।
नहीं प्रयोजन पर से किंचित्, सहज तृप्त अविकार रहूँ।।
परम अहिंसा धर्म जगत में, जयवन्तो मंगलकारी।।4।।

(194)

श्री सम्भवनाथ स्तुति

ज्ञानमात्र प्रभु हूँ यह श्रद्धा, अनुभव थिरता रत्नत्रय।
से पर्यय में प्रगटी प्रभुता, हुआ सकल कर्मों का क्षय।। 1।।
तीन लोक में परमपूज्य, देवाधिदेव फिर कहलाये।
निरबाधित आनन्द सहज ही, प्रतिक्षण अनुभव में आये।। 2।।
सम्यक् हुआ परिणमन प्रभुवर, वन्दनीय हे सम्भवजिन।
मुक्ति-मार्ग निज में ही सम्भव, मोह-द्वेष-रागादिक बिन।। 3।।
आत्मविमुख रह कोटि उपायों, से भी शान्ति न पाई है।
मैं करूँ वन्दना सम्भवजिन, निज में ही शान्ति दिखाई है।।4।।

(195)

श्री अभिनंदननाथ स्तुति

अभिनन्दन स्वामी, यही भावना सार।
पर से अति निरपेक्ष निराकुल, हो परिणति अविकार।।टेक।।
पुण्योदय की लख सम्पत्ति, हो नहिं हर्ष लगार।
पापोदय की देख विपत्ति, हो न खेद दुखकार।। 1।।
भेदज्ञान की धारा वर्ते, शिवस्वरूप शिवकार।
ज्ञाता-दृष्टा रहूँ सहज ही, निज में तृप्ति अपार।। 2।।
पर का कुछ स्वामित्व न भासे, कर्तृत्व हो न लगार।
इष्ट-अनिष्ट कल्पना नाशे, हो समता सुखकार।। 3।।
धैर्य विघ्न बाधाओं में धर, करूँ सु तत्त्व-विचार।
दोष नहीं पर का कुछ देखूँ, द्रव्यदृष्टि अवधार।। 4।।
असफलता में नहिं अकुलाऊँ, पूरव कर्म निहार।
धर्मध्यान में चित्त लगाऊँ, ध्याऊँ निजपद सार।। 5।।
संयम प्रति हों प्राण निछावर, लगें नहीं अतिचार।
हो निर्ग्रन्थ समाधि सु पाऊँ, सर्व प्रपंच विडार।। 6।।
महाभाग्य से प्रभु को पाया, मन में हर्ष अपार।
चरण-शरण में जीवन बीते, अभिनंदन शत बार।। 7।।

(196)

श्री सुमतिनाथ स्तुति

जिस मति का विषय स्व-तत्त्व अहो, वही सुमति कहलाती है।
हे सुमतिनाथ तव द्रव्यदृष्टि, अंतर में सुमति जगाती है।।1।।

तव वीतराग सर्वज्ञ दशा, लख राग शून्य और ज्ञान पूर्ण।
निज भाव दृष्टि में आता है, आकुलता नहीं दिखाती है।।2।।
हो नमन कोटिशः प्रभो आपको, अंतर निधि दर्शाते हो।
निधि पाने का भी अंतर में ही, सहज उपाय सुझाते हो।।3।।
ज्यों मिश्री स्वयं मिठास पूर्ण, मैं भी स्वभावतः त्यों सुखमय।
सुख हेतु नहीं, कुछ भी करना, मंगल ध्वनि हृदय गुंजाती है।।4।।
जितने भी करने के विकल्प, वे सब ही दुख उपजाते हैं।
निज पर स्वभाव को भूल, मूढ़ कर्तृत्व धार अकुलाते हैं।।5।।
हे नाथ! आपका दर्शन कर, सम्यक् प्रतीति जागी उर में।
कर्त्तापन तज निज भाव लखा, आकुलता नहीं दिखाती है।।6।।
अब यही भावना है जिनवर, उपयोग नहीं बाहर जावे।
बस परम पूज्य जिनवर तुम सम, ही निज स्वभाव में रम जावे।।7।।
सर्वोत्कृष्ट मम परम भाव, चेतन वैभव परमाभिराम।
लखकर निरपेक्ष सहज सुखमय, आह्लाद लहर उमड़ती है।।8।।

(197)

श्री पद्मप्रभनाथ स्तुति

(तर्जः तुम्हारे दर्श बिन स्वामी)

अहो प्रभु पद्म की मूरति, परम आनन्द दाता है।
ध्येय ध्रुवरूप शुद्धातम, सहज अनुभव में आता है।।टेक।।
नशे अविवेक दुःखकारी, भगे दुर्मोह-तम तत्क्षण।
सर्व दुर्वासना मिटती, ज्ञान सूरज उगाता है।।1।।
ज्यों दृष्टा-ज्ञाता हैं जिनवर, त्यों मैं भी दृष्टा-ज्ञाता हूँ।
सर्व दोषों से नित न्यारा, शुद्ध चिन्मय दिखाता है।।2।।

मिली सुख शान्ति निज में ही, अपरिमित प्रभुता निज में ही।
तृप्त निज में रहूँ स्वामिन्, न बाहर कुछ सुहाता है।।3।।
नहीं अब भय रहा कुछ भी, प्रलोभन भी न कुछ प्रभुवर।
स्वयं सिद्ध सहज परमातम पूर्ण शाश्वत सुहाता है।।4।।
सहज भाऊँ सहज ध्याऊँ, सहज रम जाऊँ निज में ही।
सहज कट जावें भव बन्धन, मुक्ति पद सहज आता है।।5।।

(198)

जय-जय पद्मप्रभ भगवान, पाया अक्षय पद निर्वाण।
हम भी पावें सम्यक् ज्ञान, होवे सहज स्व-पर कल्याण।।टेक।।
धन्य आपकी वीतरागता, अहो जिनेश्वर अद्भुत प्रभुता।
हो प्रभु अनंत चतुष्टयवान, जय-जय पद्मप्रभ भगवान।।1।।
आप आप में लीन हुए हैं, सहजपने स्वाधीन हुए हैं।
करें इन्द्रादिक भी गुणगान, जय-जय पद्मप्रभ भगवान।।2।।
जग प्रपंच से हैं घबराएँ, हम भी स्वामी शरण में आए।
पावें मुक्तिमार्ग अम्लान, जय-जय पद्मप्रभ भगवान।।3।।
अपना सुख अपने में जाना, ज्ञायक भाव सहज पहिचाना।
ध्यावें अकृत्रिम भगवान, जय-जय पद्मप्रभ भगवान।।4।।
मन में कोई नहीं कामना, सहज भक्ति से करें वंदना।
निश्चय ही हों आप समान, जय-जय पद्मप्रभ भगवान।।5।।

(199)

(तर्ज : पंचकल्याणक आ गया)

पद्म प्रभो का मंगल विहार, सबके मन में हर्ष अपार।
सब मिल करते जय-जयकार, धर्म महोत्सव हो सुखकार।।टेक।।

दर्श करेंगे भक्तिभाव से, भक्ति करेंगे भक्ति भाव से।
प्रभु का नाम सदा सुखकारी, शरण जिनेश्वर सब दुःखहारी।।
गूँजे प्रभु की जय-जयकार।। धर्म.।। 1।।
जिनवर की अद्‌भुत छवि निरखें, हेयादेय तत्त्व को परखें।
पर भावों से उदासीन हो, निज में निज से निजासीन हो।।
भोगें ज्ञानानन्द अपार।। धर्म.।। 2।।
धन्य घड़ी है धन्य दिवस है, चित्त हमारा हुआ अवश है।
स्वामिन्! यही भावना भावें, निश्चय रत्नत्रय प्रगटायें।।
निर्मल सम्यक् हो व्यवहार।। धर्म.।। 3।।
सत्य-अहिंसा को अपनावें, धर्म ध्वजा जग में फहरावें।
वात्सल्य हो मंगलकारी, हो प्रभावना आनन्दकारी।।
विस्मय से देखे संसार।। धर्म.।। 4।।
जिनवाणी का मर्म सु जानें, देहालय का देव पिछानें।
परमभाव को हम भी ध्यावें, कर्म-कलंक समूल नशावें।।
पावें प्रभु सम गति अविकार।। धर्म.।। 5।।

(200)

जय-जय पद्मप्रभ जिनराज, तुम्हारे द्वारे आए।
जागे भाग्य हमारे, जिनवर द्वारे आए।। टेक।।
परिग्रह दुःख का मूल है, जिन प्रतिमा दरशाय।
आप-आप में देख लो, स्वयं सुख प्रगटाय।। 1।।
मिथ्या कर्त्तृत्व धारि कै, भव-भव में भटकाय।
निर्ग्रन्थ पद आनंदमय, सहज शरण सुखदाय।। 2।।

निज की निधि निज मांहि है, किंचित् प्रत्यक्ष जनाय।
क्यों भटके संसार में, अपनी सुधि विसराय।। 3।।
जिन भक्ति में चित्त दे, आकुलता मिट जाए।
रोग-शोक संकट मिटे, निज प्रभुता विलसाय।। 4।।
वन्दूँ श्री जिनराज को, धर उर सम्यक् भाव।
प्रभु सम ही गुण प्रकट हों, नाशें सर्व विभाव।। 5।।

(201)
श्री सुपार्श्वनाथ स्तुति

भगवन सुपार्श्व प्रभुता स्व पार्श्व, मुझको प्रतीति अब आई है।
है व्यर्थ भटकना बाहर में, प्रभु झूठी भ्रान्ति पलाई है।। 1।।
प्रभुता आत्मा में नहिं होती, तो कैसे प्रगट हुई स्वामी।
पर प्रगट हुई साक्षात् दिखे, तव परिणति में अन्तरयामी।। 2।।
मैं भी अन्तर्बल द्वारा प्रभु, निज की महिमा प्रगटाऊँगा।
रागादि स्वयं उत्पन्न न हों, जब निज में ही रम जाऊँगा।। 3।।
कर्मादिक भी खुद भग जावें, परमात्म दशा हो जायेगी।
मैं सविनय शीश झुकाता हूँ, कब धन्य घड़ी वह आयेगी।।4।।

(202)
श्री चन्द्रप्रभ स्तुति

अमृत झरे चन्द्र से त्यों ही, दिव्यध्वनि प्रभु बरसाई।
सुनकर भव्यजनों की जिनवर, मिथ्यादृष्टि विनसाई।।1।।
शुद्धातम अमृतचन्द्र अहो, रत्नत्रय ही परमामृत।
आधि-व्याधि-उपाधिरहित, आराध्य जगत में है निजपद।।2।।

निजस्वभाव ही एकमात्र, साधन है शिवपद पाने का।
सच पूछो तो निजपद ही, शिवपद है साध्य जमाने का।।3।।
तब दर्शन पाकर चन्द्र प्रभो, आनन्द हृदय में छाया है।
तुम सम ही निज में रम जाऊँ, प्रभु सविनय शीश नवाया है।।4।।

(203)

अशरण जग में चन्द्रनाथ जिन, साँचे शरण तुम्हीं हो।
भव सागर से पार लगाओ, तारण-तरण तुम्हीं हो।। टेक।।
दर्शन पाकर अहो जिनेश्वर, मन में अति उल्लास हुआ।
देहादिक से भिन्न आत्मा, अन्तर में प्रत्यक्ष हुआ।।
आराधन की लगी लगन प्रभु, परमादर्श तुम्हीं हो।
भवसागर से पार लगाओ, तारण-तरण तुम्हीं हो।। 1।।
अद्भुत प्रभुता झलक रही है, निरखत हुआ निहाल मैं।
रत्नत्रय की निधियाँ बरसें, हुआ सु मालामाल मैं।।
समतामय ही जीवन होवे, प्रभु अवलम्ब तुम्हीं हो।
भवसागर से पार लगाओ, तारण-तरण तुम्हीं हो।। 2।।
मोह न आवे क्षोभ न आवे, ज्ञाता मात्र रहूँ मैं।
अविरल ध्याऊँ चित्स्वरूप मैं, अक्षय सौख्य लहूँ मैं।।
हो निष्काम वन्दना स्वामी, मेरे साध्य तुम्हीं हो।
भवसागर से पार लगाओ, तारण-तरण तुम्हीं हो।। 3।।

(204)

(तर्जः मेरे मन मंदिर में)

नमूँ श्री चन्द्रप्रभ भगवान, पाया वीतराग विज्ञान।। टेक।।
महाभाग्य प्रभु दर्शन पाया, मुक्तिमार्ग प्रत्यक्ष दिखाया।

नाशा भव-भव का अज्ञान।। पाया...।। 1।।
प्रभु समीप मन थिरता पावे, परिणति अन्तर्मुख हो जावे।
दिखता शाश्वत प्रभु अम्लान।। पाया...।। 2।।
देहादिक अति भिन्न दिखावें, भोग विभव किंचित् न सुहावें।
जिनवर भायें आतम-ध्यान।। पाया...।। 3।।
हो पुरुषार्थ सुमंगलकारी, मिटें कषायें अति दुःखकारी।
अक्षय शिवपद लहूँ महान।। पाया...।। 4।।

(205)

नमों-नमों आनंद सहित श्री चन्द प्रभु।
नमों-नमों उल्लास सहित श्री चन्द्र प्रभु।। टेक।।
चन्द्र कलंकित प्रभो निकलंक, चित्स्वरूप जानो निशंक।
परम वीतरागी अविकार, सकल विश्व के जाननहार।।1।
चन्द्रादिक शीतल सुखकार, भव आताप विनाशनहार।
बिन श्रृंगार सहज मन सोहे, परम सौम्य मुद्रा अति सोहे।।2।।
रत्नत्रयधारी निर्ग्रन्थ, बिना राग दर्शायों पंथ।
द्वेष बिना सब कर्म नशाये, लहो सिद्ध पद शीश नवाय।।3।।
कर्त्ता-हर्त्ता प्रभुवर नांहि, भक्ति से भव दुख विनसांही।
अक्षय विभव मिले जगतेश, निमित्त नैमित्तिक सहज जिनेश।।4।।
जग से उदासीन जगनाथ, दर्शन पाकर हुआ सनाथ।
आराधूँ निज आतमराम, निज में ही पाऊँ विश्राम।।5।।

(206)

श्री पुष्पदंत स्तुति

हे पुष्पदन्त भगवन्त दर्श शुभ पाया।
परमानन्द मेरे उर में नहीं समाया।। टेक।।
मैं भूल स्वयं को भटक रहा था स्वामी,
आ गया भाग्य से चरण-शरण में नामी।
सम्यक् मुक्ति का मार्ग प्रभो दर्शाया।। हे. ।।1।।
संसार क्लेशमय अरे सर्वथा जाना,
सर्वस्व सारमय निज आतम पहिचाना।
निज ज्ञानमात्र ज्ञायक अनुभव में आया।। हे. ।।2।।
दुर्मोह नशे दुर्भाव सहज ही छूटें,
अब कर्मबन्ध की कड़ियाँ सहजहिं टूटें।
प्रभु शिवपद पाना सहज समझ में आया।। हे. ।।3।।
आदर्श रहो जिनवर पुरुषार्थ जगाऊँ,
दुर्लभ है बोधि समाधि स्वयं में पाऊँ।
निश्चिंत हुआ प्रभु सविनय शीश नवाया।।हे. ।।4।।
गुणगान करूँ हे गुण अनंतमय कैसे ?
देवाधिदेव हो आप आप ही जैसे।
पंचमगति पाऊँ पंचम भाव सु पाया।। हे. ।।5।।

(207)

मुक्ति की युक्ति निज में ही, हे सुविधिनाथ दर्शायी है।
निज पूर्ण स्वभाव निरख प्रभुवर, कर्त्तृत्व बुद्धि विनशाई है।। 1।।

सम्यक्-प्रतीति अनुभव-थिरता, निज परमभाव में हो जावे।
परभावों से निर्वृत्ति हो, अरु निज में ही थिरता आवे।।2।।
परमातम खुद ही कहलाये, अरु अनन्त चतुष्टय प्रगटावे।
तब अल्पकाल में कर्म रहित, अविनाशी शिवपद को पावे।।3।।
हे शिवस्वरूप शिवकार अहो! निजज्ञायकतत्त्व दिखाया है।
वन्दन है पुष्पदन्तस्वामी, अनुपम आनन्द सु-पाया है।।4।।

(208)

श्री शीतलनाथ स्तुति

शीतलता का स्रोत आत्मा, आज दृष्टि में आया है।
मिथ्या तपन मिटी सब प्रभुवर, मुक्ति मार्ग प्रगटाया है।।1।।
शीतलनाथ जिनेन्द्र आपको, शत-शत बार नमन हो।
अब पुरुषार्थ आप-सा प्रगटे, भव में नहीं भ्रमण हो।।2।।
सर्व समागम मिला आज प्रभु, नहीं बहाने का कुछ काम।
तोड़ सकल जग द्वन्द फन्द, मैं निज में ही पाऊँ विश्राम।।3।।
परम प्रतीति सु उर में जागी, हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम।
निज महिमा में मग्न होय प्रभु, पाऊँ शिवपद परम ललाम।।4।।

(209)

भक्तिभाव से शीतल जिन को, नमन करूँ मैं नमन करूँ।
प्रभु समान ही शीतलता, अपने अंतर में प्रगट करूँ।। टेक।।
पाया दर्शन महाभाग्य से, अब रत्नत्रय प्राप्त करूँ।
रहें सहज स्वाधीन निराकुल,जिनवर नरभव सफल करूँ।।1।।
इन्द्रादिक प्रभु सेवा करते, मैं भी प्रभु की सेव करूँ।

होय विरागी सब परिग्रह तज,निश्चय आतम ध्यान धरूँ।। 2।।
कषायों में नहीं फूलूँ, दुःख में भी नहीं खेद करूँ।
भाऊँ नित वैराग्य भावना, समता रस का पान करूँ।। 3।।
जो कुछ होना हो सो होवे, दृष्टा-ज्ञाता सहज रहूँ।
उदासीन हो परभावों से, निज में ही संतुष्ट रहूँ।। 4।।
यही भावना हो प्रभावना, सहज अकर्ता सदा रहूँ।
मुक्तिमार्ग में बढ़ता जाऊँ, आवागमन विनष्ट करूँ।। 5।।

(210)

श्री श्रेयांसनाथ स्तुति

यह श्रेय आपको ही स्वामी, मम परम श्रेय दर्शाया है।
अश्रेय रूप रागादि विकारों का, भ्रम-जाल नशाया है।। 1।।
मंगलमय-मंगलकरन प्रभो, बस वीतराग-विज्ञान कहा।
जिसका आश्रय रागादि शून्य, चिन्मात्र एक शुद्धात्म अहा।। 2।।
जग में वे सभी महान हुए, जिन वीतराग-विज्ञान गहा।
अज्ञान राग-द्वेषादि विकारों से, चहुँगति में दुःख लहा।।3।।
हो गया आज निश्चय प्रभुवर, मुझमें रागादि क्लेश नहीं।
कल्याण धाम परमाभिराम, पाई मैं निर्मल दृष्टि यहीं।।4।।
अब यावत रागादि आवें, मैं निज में नहीं मिलाऊँगा।
नव-तत्त्वों से अति भिन्न एक, चिन्मात्र रूप निज ध्याऊँगा।।5।।
मैं करूँ वन्दना यही भावना, निज में ही थिरता पाऊँ।
संकल्प-विकल्प मिटें झूठे, तुम सम ही प्रभुता प्रगटाऊँ।।6।।

(211)

श्री वासुपूज्यनाथ स्तुति

हे बाल ब्रह्मचारी इन्द्रादिक, पूजित वासुपूज्य स्वामी।
निज महिमा दर्शायी जग में, सर्वोत्कृष्ट त्रिभुवन नामी।। 1।।
जाना मैंने निज का निज से, बढ़कर जग में आराध्य नहीं।
मैं व्यर्थ भटकता मूढ़ बना, निज से बाहर सुख साध्य नहीं।।2।।
मैं स्वयं पूर्ण हूँ अपने में, अब अन्य नहीं कुछ भी चाहूँ।
अन्तर में सुख प्रत्यक्ष लखा, निज अन्तर में ही रम जाऊँ।।3।।
मम ज्ञान मात्र चैतन्य भाव में, शक्ति अनन्त उछलती हैं।
प्रभु स्वयं शीश झुक जाता है, पाई निज में ही तृप्ति है।।4।।

(212)

श्री विमलनाथ स्तुति

(लावनी)

हे विमलनाथ लख विमल स्वरूप तुम्हारा।
स्वयमेव दिखावे चित्स्वरूप अविकारा।।टेक।।
है सहज चतुष्टयमय शाश्वत परमातम।
है नित्य-निरंजन शुद्ध-बुद्ध शुद्धातम।।
ध्रुव अचल अनुपम ध्येय रूप है आतम।
मंगल स्वरूप है स्वयं सिद्ध शुद्धातम।।
अद्‌भुत महिमा मंडित है जाननहारा।। 1।।
एकत्व-विभक्त सहज स्वाभाविक सोहे।
है वचनातीत अचिन्त्य सहज मन मोहे।।

पक्षातिक्रांत अनुभूति रूप सुखकारी।
बस चित्स्वरूप तो चित्स्वरूप अविकारी।।
होकर अन्तर्मुख नाथ प्रत्यक्ष निहारा।। 2।।
धनि घड़ी दिवस–धनि सहज प्रभु को पाया।
जिनवर दर्शन कर, फूला नहीं समाया।।
प्रभुवर तुम ही हो साँचे मम उपकारी।
हो भाव–नमन चरणों में प्रभु बलिहारी।।
होवे तुम सम निर्मल पुरुषार्थ हमारा।। 3।।
हे नाथ जगत के स्वाँग दिखें सब फीके।
अभिलाष नहीं कुछ शेष पूर्णता दीखे।।
निर्ग्रन्थ रहूँ निर्ग्रन्थ रूप निज भाऊँ।
स्वामिन्! अविरल निज में ही मग्न रहाऊँ।।
मुक्ति प्रगटे स्वयमेव स्वरूप सम्हारा।। 4।।

(213)

श्री अनंतनाथ स्तुति

महाभाग्य से दर्शन पाया, प्रभु अनंत अम्लान।
तुम्हें देखते दीखे अपना, आतम देव महान।। 1।।
अमृतमय है परम अलौकिक, परमानन्द की खान।
परम पारिणामिक ध्रुव ज्ञायक, है शाश्वत भगवान।। 2।।
ज्ञायक आश्रय से ही प्रगटे, रत्नत्रय अम्लान।
अकृत्रिम परमातम ज्ञायक, अक्षय प्रभुतावान।। 3।।
अपने धर्मों में व्यापक विभु, अद्भुत वैभववान।

है समर्थ निज की रचना में, निज से वीरज वान।।4।।
ध्रुव मंगल है लोकोत्तम है, अनन्य शरण गुण खान।
सन्मुख आते अहो जिनेश्वर, हुआ सहज श्रद्धान।।5।।
अमृतमय है रूप आपका, अमृतमय परिणाम।
अमृतमय मुद्रा है जिनवर, वचनामृत सुखखान।।6।।
साँचे देव दिया है प्रभुवर, मुक्तिमार्ग का दान।
हम सम्यक् अनुगामी होकर, करें स्व-पर कल्याण।।7।।

(214)

श्री धर्मनाथ स्तुति

हे धर्मनाथ! महिमा महान, शब्दों से कही न जाती है।
धर्मी शुद्धातम की अनुभूति में प्रत्यक्ष दिखाती है।। 1।।
है स्वानुभूति ही धर्म अहो, जो कर्म-बंध विनशाता है।
दुखमय भवसागर में गिरते, जीवों को शिवसुख दाता है।।2।।
धर्म-धर्म सब कहें परन्तु, धर्म न सच्चा पहिचानें।
ज्ञायक स्वभाव के भान बिना, रागादि भाव में अटकाने।।3।।
हे जिनवर तुमने एकमात्र, वीतराग-भाव को धर्म कहा।
जो परम-अहिंसामय रत्नत्रय, अरु दशलक्षण रूप अहा।।4।।
यह पावन धर्म ही मंगलमय, अरु उत्तम शरणभूत स्वामी।
धर्मी है परम पारिणामिक, ध्रुव चिन्मय ज्ञायक अभिरामी।।5।।
निज धर्मी की दृष्टि वर्ते, उपयोग स्वयं में थिर होवे।
निष्काम वन्दना धर्मनाथ, मम धर्मरूप परिणति होवे।।6।।

(215)

श्री शान्तिनाथ स्तुति

(तर्ज: निज आत्मा में देखो भगवान)

प्रभु शान्त छवि तेरी, अन्तर में है समाई।
प्रत्यक्ष देख मूरति, शान्ति हृदय में छाई।। टेक।।
शुभ ज्ञानज्योति जागी, आतमस्वरूप जाना।
प्रत्यक्ष आज देखा, चैतन्य का खजाना।।
जो दृष्टि पर में भ्रमती, वह लौट निज में आई।
प्रत्यक्ष देख मूरति, शान्ति हृदय में छाई।। 1।।
अक्षय निधि को पाने, चरणों में प्रभु के आया।
पर प्रभु ने मूक रहकर, मुझको भी प्रभु बताया।।
अन्तर में प्रभुता मेरे, निश्चय प्रतीति आई।
प्रत्यक्ष देख मूरति, शान्ति हृदय में छाई।। 2।।
हे देव! आपको लख, खुद ही हुआ अकामी।
है आश पर की झूठी, मैं पूर्ण निधि का स्वामी।।
पर्याय हीनता से, मुझमें कमी न आई।
प्रत्यक्ष देख मूरति, शान्ति हृदय में छाई।। 3।।
मम भाव-अभाव शक्ति, पामरता मेट देगी।
अभाव-भाव शक्ति, प्रभुता विकास देगी।।
निश्चिन्त होय दृष्टि, निज द्रव्य में रमाई।
प्रत्यक्ष देख मूरति, शान्ति हृदय में छाई।। 4।।
सर्वोत्कृष्ट निज प्रभु, तजकर कहीं न जाऊँ।
जिन! बहुत धक्के खाये, विश्राम निज में पाऊँ।।

हो नमन कोटिशः प्रभु, शिवसुख डगर बताई।
प्रत्यक्ष देख मूरति, शान्ति हृदय में छाई।। 5।।

(216)

(तर्ज: प्रभु शांत छवि तेरी)

हे शान्तिनाथ भगवन्, दर्शन विशुद्धि पाऊँ।
पर से उदास रहकर, शुद्धात्मा ही ध्याऊँ ।। टेक।।
परमाणु मात्र अपना, नहीं स्वप्न में भी भासे।
आराधना सहज हो, सन्तुष्ट नित रहाऊँ।। 1।।
होऊँ निशंक निर्भय, निश्चिंत अरु अकामी।
निर्मूढ़ ज्ञानमय हूँ, ज्ञाता सहज रहाऊँ।। 2।।
मैं ज्ञेय मात्र जानूँ, सारे ही जग को स्वामी।
अच्छा-बुरा समझकर, नहीं राग-द्वेष लाऊँ।। 3।।
विपरीत सोच त्यागूँ, लखकर तुम्हें जिनेश्वर।
सम्यक् विचार करके, समता सदा बढ़ाऊँ।। 4।।
अपना उदय विचारूँ, नहीं दोष दूँ किसी को।
कर्मों की निर्जरा कर, नहीं बंध को बढ़ाऊँ।। 5।।
है धन्य प्रभु की समता, है पूज्यनीय थिरता।
निष्काम भावना से, चरणों में शीश नाऊँ।। 6।।

(217)

(तर्ज: मेरे मन मंदिर में आन)

जय-जय शान्तिनाथ भगवान,मेरे हृदय विराजो आन।। टेक।।
देहादिक को अपना माने, विषय-कषायों में सुख जाने।

होता व्यर्थ अरे हैरान।। जय.।।

पुण्योदय से दर्शन पाया, दर्शन करते मोह नशाया।

जागा स्व–पर भेद विज्ञान ।। जय.।।

प्रभु की वाणी सुन हर्षाया, अपना सुख अपने में पाया ।

नाशा भव–भव का अज्ञान।। जय.।।

प्रभु चरणों में चित्त लगाऊँ, नहीं विकल्पों में भरमाऊँ।

पाऊँ मुक्तिमार्ग अम्लान।। जय.।।

प्रभु निष्पाप परिणति होवे, निज में ही संतुष्टि होवे ।

भक्ति सदा रहे भगवान।। जय.।।

(218)

(तर्जः रोम–रोम पुलकित हो जाय)

जय–जय शान्तिनाथ भगवान, परम शान्ति पावें अम्लान।। टेक।।

भेदज्ञान बिन भ्रमे अशान्त,निज में ही होवें विश्रान्त।

महाभाग्य जिनशासन पाय,आनंद मेरे उर न समाय।। 1।।

चरण–शरण में हे जिनराज,मिथ्या मोह तजूँ मैं आज।

आराधूँ निज आतम देव,सब संक्लेश नशें स्वयमेव।। 2।।

जगत प्रपंच महादुखकार,श्री जिनधर्म ही मंगलकार।

श्रद्धा सम्यक् होवे नाथ,ज्ञान प्रगट कर होंय सनाथ।। 3।।

छोड़ें हेय गहें आदेय,सम्यक् चारित्र शिव सुख देय।

इष्ट–अनिष्ट कल्पना त्याग,सुखमय समता में चित पाग।। 4।।

प्रभु के पन्थ चलें सुखकार,निश्चय ही होवें भव पार।

भक्ति भाव से करें प्रणाम,पावें शाश्वत आनंद धाम।। 5।।

(219)

(तर्जः प्रभु हम सबका एक)

शान्तिनाथ भगवान! मैं भी होऊँ आप समान।। टेक।।
चिर से भ्रमते-भ्रमते भव में, लेश नहीं सुख पाया पर में।
हुआ व्यर्थ हैरान, मैं भी होऊँ आप समान।। 1।।
महाभाग्य से प्रभु को पाया, मन में अब विश्वास जगाया।
होय अवश्य कल्याण, मैं भी होऊँ आप समान।। 2।।
प्रभु साक्षी में शिवपथ देखा, प्रभु स्वरूप अन्तर में देखा।
स्वयं सिद्ध अम्लान, मैं भी होऊँ आप समान।। 3।।
रागादिक से न्यारा जाना, चित्स्वरूप अपना पहिचाना।
गुण अनन्त की खान, मैं भी होऊँ आप समान।। 4।।
मोह भाव का नाश हुआ है, सम्यक्ज्ञान प्रकाश हुआ है।
धरूँ सु-आतम ध्यान, मैं भी होऊँ आप समान।। 5।।
निज स्वभाव में थिरता पाऊँ, कर्म कलंक समूल नशाऊँ।
प्रगटें सुगुण महान, मैं भी होऊँ आप समान।। 6।।

(220)

प्रभु शान्तिनाथ के अहो! नजदीक में आओ।
सुख शांति निज में ही अरे! बाहर न भरमाओ।। टेक।।
देखो कैसे हैं मग्न जिनवर आत्म ध्यान में,
नहीं भासता कर्त्तृत्व कुछ भी आत्मध्यान में।
परिपूर्ण चित् स्वरूप की दृष्टि तनिक लाओ।। सुख.।। 1।।
अपने को भूलकर अरे! हैरान ही हुआ,
देवों के भी पाये वैभव पर तृप्त नहीं हुआ।

प्रभुवर की नासा दृष्टि लख विवेक प्रगटाओ।। सुख.।।2।।
है सर्वथा झूठी दिखी पर से सुख की आशा,
स्वाभाविक सुख सम्पन्न शुद्ध चिद्रूप प्रकाशा।
शुद्ध चिद्रूपोऽहम् सहज ही ऐसा अनुभव लाओ।। सुख.।।3।।
निर्ग्रन्थता ही मुक्ति का परमार्थ धर्म है,
जानो-मानो अरु आचरो ये सत्यमार्ग है।
जिस पंथ से प्रभु शिव गये, अब वही अपनाओ।। सुख.।।4।।
निर्ग्रन्थता स्वरूप है स्वाधीन सुखमय है,
होती उसे ही सहज जो निशंक निर्भय है।
नमते हुए निज में प्रभु को शीश नवाओ।। सुख.।। 5।।

(221)

आओ-आओ शान्तिनाथ, मेरे हृदय में आओ[2],
तिष्ठो-तिष्ठो हे जिनेश्वर, मेरे हृदय तिष्ठाओ[2]।
मेरे भावों में जिनेश्वर एकमेक हो जाओ।। टेक।।
दर्शन बिन था तड़फता, ज्यों पानी बिन मीन।
आज प्रत्यक्ष निहारकर, आनंद भयो अक्षीण।।आओ.।।1।।
मंगलमय-मगंल करण, लोकोत्तम परधान।
दर्शाया शिवमग सहज, तुम्हीं शरण अम्लान।।आओ.।।2।।
सहज शांत शुद्धात्मा, तुम प्रसाद से देव।
पाया अंतर में अहो, नशे क्लेश स्वयमेव।। आओ.।।3।।
चाह मिटी चिंता मिटी, जागा तत्त्व विचार।
यही भावना है विभो, प्रगटे पंचाचार।। आओ.।।4।।

आज समाई चित्त में, मूरति शान्ति जिनेश।
करूँ वंदना भावमय, होंय कर्म निःशेष।। आओ.।। 5।।

(222)

परम शान्ति पाई अहो शान्ति स्वामी[2] ।। टेक।।
पर लक्ष्य से तो अशान्ति ही आई,
सहज शान्ति की युक्ति तुमसे ही पाई।
अक्षय प्रभुता पाई, अहो शान्ति स्वामी।। 1।।
इन्द्रिय सुखों की नहीं कामना है,
परम भाव की हो रही भावना है।
देखा मुक्ति मारग, अहो शान्ति स्वामी।। 2।।
पर द्रव्य तो दुःख के कारण नहीं हैं,
दुख आत्मा का स्वभाव नहीं है।
स्वयं का ही अज्ञान, दुख मूल स्वामी।। 3।।
करें स्वानुभूति मिटे दुःख सारा,
ज्ञानी जनों का सदा है सहारा।
वैराग्य सम्यक् सुखकारी, अहो शांति स्वामी।।4।।
आदर्श तेरा सदा सामने हो,
समता प्रभु सम ही मेरे हृदय हो।
भाव नमन हो, अहो शान्ति स्वामी।। 5।।

(223)

शान्ति जिनेश्वर दर्शन मंगलकारी।
शान्ति जिनेश्वर भक्ति संकटहारी।। टेक।।

परम शान्तिमय आत्मा, तब प्रसाद से देव।
अन्तर्मुख उपयोग में, प्रत्यक्ष हुआ स्वयमेव।। 1।।
सम्यक् दर्शन–ज्ञान–व्रत, तीन रतन सुखकार।
प्रगट होंय पर्याय में, अन्य न चाह लगार।। 2।।
समता या वीतरागता, प्रगटे श्री जिनराय।
ऐसा ही पुरुषार्थ हो, वन्दूँ मन–वच–काय।। 3।।
सदा निहारूँ आपको, दुर्विकल्प सब छोड़।
तुमसे गुण पाऊँ प्रभो, परिणति निज में जोड़।। 4।।

(224)

श्री कुन्थुनाथ स्तुति

मात्र पूरें ही नहीं, निर्मूल वांछाएँ करें।
कुछ नहीं देते तदपि, सुखधाम दर्शाते हमें।।टेक।।
सुखरूप निज को भूल करके, भ्रान्तिवश सुख मानते।
धनि कुन्थु जिन तुम बिन कहे, मम सुख स्वरूप दिखावते।। 1।।
आत्मा स्वयं परमात्मा, तव दिव्यध्वनि का सार है।
आराधना निज की करें, हो जायें भव से पार हैं।। 2।।
प्रभु दर्श करके तुच्छता, निज रूप में नहीं भासती।
जब दृष्टि अंतर में टिकी, प्रभुता स्वयं प्रतिभासती।। 3।।
छूटें सभी पर भाव प्रभुवर, भावना ये ही प्रबल।
विभु प्रगट होवे मुनिदशा, शुद्धात्म संवेदन सबल।। 4।।
निज में ही होवे पूर्ण थिरता, पास बैठूँ आपके।
निष्काम सविनय भाव वंदन, शीश चरणन नायके।। 5।।

(225)

श्री अरनाथ स्तुति

(तर्ज : जिसने राग-द्वेष कामादिक)

छोड़ विभूति चक्रवर्ती की, निज वैभव प्रगटाया है।
सम्यक् चारित्र चक्र धारकर, कर्मचक्र विनशाया है।।1।।
धर्मचक्र का किया प्रवर्तन, सिद्धचक्र में जाय बसे।
वस्तु तत्त्व का ज्ञान कराता, श्री जिनवर नयचक्र लसे।।2।।
धर्मचक्र की मुख्य धुरा, सार्थक अर नाम तुम्हारा है।
निज स्वभाव साधक-आराधक, सन्त जनों को प्यारा है।।3।।
दर्शन कर प्रभु भेदज्ञान, निज पर का मैंने पाया है।
निज स्वभाव में ही रम जाऊँ, सविनय शीश नवाया है।।4।।

(226)

श्री शान्तिनाथ-कुंथुनाथ-अरनाथ स्तुति

(लावनी)

हे शान्ति-कुंथु-अरनाथ चित्त हर्षाया।
प्रभु दर्शन कर निजदर्शन मैंने पाया।।टेक।।
इन्द्रिय विषयों की सर्व वासना छूटी।
मिट गयी स्वयं पर्यायदृष्टि प्रभु झूठी।।
अक्षय ज्ञानानन्द स्वाद जिनेश्वर आया।। 1।।
चक्री इन्द्रादिक पद भी हेय सु-भासे।
शाश्वत अद्भुत प्रभुता निजमाँहि प्रकाशे।।
अविकारी चेतन पद स्वामी दर्शाया।। 2।।
ऐसी प्रभुता अन्यत्र न देय दिखाई।

जिन मुद्रा ही दृष्टि में आज समाई।।
वह धन्य घड़ी जब प्रगटे भाव जगाया।।3।।
अब नहीं चाह कुछ रही नहीं कुछ चिंता।
प्रभु चरण–शरण पा हुई सहज निश्िंचता।।
निर्द्वन्द हुआ निष्काम भाव प्रगटाया।।4।।
हो प्रभु ऐसा पुरुषार्थ परम प्रभु ध्याऊँ।
तज सकल उपाधि बोधि समाधि पाऊँ।।
आनंदित हो चरणों में शीश नवाया।। 5।।

(227)

श्री मल्लिनाथ स्तुति

(गीतिका)

हे मल्लि जिनवर हो जितेन्द्रिय, आप सहज स्वभाव से।
यौवन समय जीता मदन, निज ब्रह्मचर्य प्रभाव से।। 1।।
पाकर अतीन्द्रिय परमसुख, प्रभु तृप्त निज में ही हुए।
निजभाव घातक भोग–दुःख, स्वीकार ही प्रभु नहीं किए।।2।।
हा! गर्त में गिरकर तड़पना, और पछताना अरे!
पीकर हलाहल कौन ज्ञानी, आस जीवन की करे।। 3।।
निस्सार निज के शत्रु सम, लख भोग–इन्द्रिय परिहरूँ।
अरु इन्द्रियों से ज्ञान निज, बर्बाद नहीं प्रभुवर करूँ।।4।।
आनन्द भोगों में नहीं, निश्चय परमश्रद्धान है।
आनन्द का सागर स्वयं, शुद्धात्मा भगवान है।। 5।।
बातों में जग की मैं न आऊँ, अब न धोखा खाऊँगा।

पावन परम पुरुषार्थ करके, शीघ्र निजपद पाऊँगा।। 6।।
नव-तत्त्व के भीतर निजात्मा, परम मंगल रूप है।
उपयोगरूप अमूर्त चिन्मय, त्रिजग में चिद्रूप है।। 7।।
सर्वोत्कृष्ट अमल अबाधित, परमब्रह्म स्वरूप है।
निज में ही रम जाऊँ सुपाऊँ, ब्रह्मचर्य अनूप है।।8।।
आदर्श पथ दर्शक शरण विभु, एक तुम ही हो अहा।
तव दर्श करके नाथ मुझमें, शक्ति निज जागी महा।। 9।।
अब न किंचित् भय अहो, आनन्द का नहिं पार है।
संकल्प एवंभूत हो, बस वन्दना अविकार है।। 10।।

(228)

श्री मुनिसुव्रतनाथ स्तुति

हे मुनिसुव्रत प्रभु हो सुव्रत, अब यही भावना जागी है।
अविरति लगती है दुखदाई, मिथ्यामति मेरी भागी है।। 1।।
परिग्रह बोझा सम लगता है, और भोग-भुजंग समान लगें।
आनन्द-कन्द अभिराम परम, ज्ञायक में ही उपयोग पगे।।2।।
है धन्य-धन्य निर्ग्रन्थ दशा, आनन्दमय प्रचुर स्वसंवेदन।
विषयों की आशा भी न रही, आरम्भ-परिग्रह बिन जीवन।।3।।
प्रभु सम निज में तृप्त रहूँ, रागादि भाव पर जय पाऊँ।
हे निज प्रभुता दर्शक प्रभुवर, चरणों में बलिहारी जाऊँ।।4।।

(सोरठा)

मुनिसुव्रत जिनराज, मुनिव्रत धारूँ चाव सों।
अपने हित के काज, धन्य घड़ी कब आयेगी।।5।।

(229)

श्री नमिनाथ स्तुति

(तर्ज: हे दीन बन्धु श्री पति)

जय स्याद्वाद के नायक हो, जिन मुक्तिमार्ग विधायक हो।
नमिनाथ प्रभो मैं नमन करूँ, शुद्धात्म तत्त्व दर्शायक हो।। टेक।।
सकल द्रव्य के गुण अनन्त, पर्याय अनन्त सुजानत हो।
प्रभु धन्य-धन्य निज में तन्मय, वहाँ इष्ट-अनिष्ट न ठानत हो।। 1।।
तुम सम ही निज में रम जाऊँ, बस यही भावना होती है।
समतामय शान्तिमयी जीवन प्रति, परम प्रतीति जगती है।। 2।।
मैं स्वयं पूर्ण हूँ हे जिनवर, पर की न रही अब अभिलाषा।
चरणों में शत-शत वंदन है, मेरा प्रभु मुझमें ही भासा।। 3।।

(230)

श्री नेमिनाथ स्तुति

(तर्ज: भाव वैराग्य दर्शाये)

परम प्रभुता निहारी, नेमिप्रभु की आज मंगलमय।
शान्त मूरति निहारी, नेमिप्रभु की आज मंगलमय।। टेक।।
निराभूषण-जगतभूषण, दिगम्बर रूप है देखा।
हुआ निशंक और निर्भय, जिनेश्वर आज आनन्दमय।। 1।।
आस पर की सहज टूटी, लखी नासाग्र दृष्टि जब।
मिटी भ्रान्ति हुई शांति, नेमि जिनराज मंगलमय।। 2।।
भ्रमण का भाव ही छूटा, निहारी जब अचल मुद्रा।
दिखा सर्वस्व अपने में, नेमि जिनराज मंगलमय।। 3।।
हाथ पै हाथ जिनवर के, कहें कर्त्तृत्व सब झूठा।

जीव ज्ञाता सदा ज्ञाता, नेमि जिनराज मंगलमय।। 4।।
भावना एक ही स्वामिन्, शुद्ध चिद्रूप निज ध्याऊँ।
रहे निष्काम उर भक्ति, नेमि जिनराज मंगलमय।। 5।।
नहीं दुर्वासना उर में, भोग सब क्लेशमय जाने।
बसी उर शान्ति छवि तेरी, नेमि जिनराज मंगलमय।।6।।

(231)

हे नेमिनाथ जिनराज वंदना तेरी।
हो अंतर्मुख वैरागी परिणति मेरी।। टेक।।
उपयोग व्यर्थ ही बाहर में भरमाया,
हे प्रभो ज्ञान-सुख अंतर में ही पाया।
अब दिखा देखने योग्य मात्र शुद्धातम,
मोहादिक से न्यारा कारण परमातम।।
मिट गयी सहज आकुलतामय भव फेरी।। 1।।
अब सफल हो गया जीवन प्रभु दर्शन से,
अद्भुत तृप्ति हो नाथ चरण परसन से।
हे वीतराग सर्वज्ञ स्वरूप तुम्हारा,
परभावों से है शून्य स्वरूप हमारा।।
हो ध्येयमयी ध्रुव ध्यान परिणति मेरी।। 2।।
उत्पाद रहित व्यय अरे भव दुख का,
व्यय रहित हुआ उत्पाद देव शिवसुख का।
सत्रूप प्रवाह रहे फिर भी अविकारी,
परमानन्दमय अद्भुत है तत्त्व तुम्हारा।।

है स्याद्वादमय मंगल वाणी तेरी।। 3।।
उपकार आपका कैसे प्रभु हम गावें,
है यही भावना निज में तृप्त रहावें।
भक्ति करते इन्द्रादिक पार न पावें,
अशरण जग में प्रभु आपहि शरण दिखावें।।
है भाव विशुद्धि हेतु भक्ति प्रभु तेरी।। 4।।

(232)

(तर्ज : रोम रोम पुलकित हो जाय)

नेमिनाथ के दर्शन पाय, निजानन्द निज में छलकाय।
ब्रह्मचर्य की महिमा आय, परमानन्द निज में विलसाय।।टेक।।
सब संसार–असार दिखाय, अध्रुव अशरण और दुःखदाय।
अन्तर में वैराग्य जगाय, मुनिदीक्षा को मन हुलसाय।।1।।
प्रभु तुम महिमा अगम अपार, वीतराग परिणति अविकार।
इन्द्रादिक भी पार न पाय, हर्ष सहित प्रभु के गुण गाय।। 2।।
प्रभु के गुण चिन्तन में आय,सम्यक् भेदज्ञान प्रगटाय।
सारभूत निजपद दर्शाय, अक्षय प्रभुता रही विलसाय।। 3।।
दिखलाया शिवपद सुखकार, भव्यों के तुम ही आधार।
यही परम उपकार निहार, भक्ति उमगी हृदय मँझार।। 4।।
हर्ष सहित करके गुणगान, रत्नत्रय पावें अम्लान।
द्रव्यदृष्टि से आप समान, दशा आप सम हो भगवान।। 5।।

(233)

ब्रह्ममय परिणति के हो धारक प्रभु, नेमि जिनवर नमन भाव से नित करूँ।
जग में वैराग्य अनुपम विभो आपका, आप–सा ही दयाभाव चित्त में धरूँ।।1।।

होके भोगों में अंधा भटकता फिरा, घात निज-पर का करता रहा हर्ष धर।
आपके दर्श कर दृष्टि सम्यक् मिली, मेरा चैतन्य-चिद्रूप आया नजर।।2।।
हे प्रभो ! भावना आपको ध्याय कर, आप ही आप-सा आत्म योगी बनूँ।
तज के किंपाक फल सम विषय भोग, मैं आत्मवैभव का स्वाधीन भोगी बनूँ।।3।।
चाहे अनुकूलता अथवा प्रतिकूलता, होवे समतामयी नाथ परिणति मेरी।
भवरहित भाव चैतन्य में लीन हो, हे प्रभो ! अब मिटे मेरी भव-भव फेरी।।4।।

(234)

अहो नेमि स्वामी त्रिभुवन नामी,
भक्ति से चरणों में वंदन करूँ मैं।
वंदन करूँ, अभिनन्दन करूँ मैं।। टेक।।
मिटे मोह स्वामी, तिहारे दरश से,
नशे क्लेशमय काम प्रभु के परस से।
निर्मोह निष्काम वंदन करूँ मैं।। वंदन.।।1।।
साक्षी में जिनवर जगे ज्ञान निर्मल,
जितेन्द्रिय हो परिणति निर्द्वन्द निर्मद।
वीतराग सर्वज्ञ वंदन करूँ मैं।। वंदन.।।2।।
दर्पण के सन्मुख जड़रूप दिखता,
प्रभुवर के सन्मुख चिद्रूप दिखता।
सहज लखते चिद्रूप वंदन करूँ मैं।। वंदन.।।3।।
जग के प्रपंचों से परिणति थकी है,
वैराग्य भावना मन में जगी है।
निर्ग्रन्थ होकर वंदन करूँ मैं।। वंदन.।।4।।

ध्याऊँ सहज प्रभु सहज ही जिनेश्वर,
चैतन्य में ही रहूँ नित महेश्वर।
परम शान्त अद्वैत वंदन करूँ मैं।। वंदन.।।5।।

(235)

श्री पार्श्वनाथ स्तुति

पारस प्रभु की भक्ति कर लो, मंगल अवसर आयो है।
भविजन भव सागर से तर लो, मंगल अवसर आयो है।।टेक।।
अश्वसेन वामा के नन्दन, इन्द्रादिक करते अभिनंदन।
परम अकर्त्ता रह कर भी, प्रभु मुक्तिमार्ग दर्शायो है।।1।।
कल्पवृक्ष माँगे से देवे, चिंतामणि चिन्ते सुख देवे।
बिन माँगे बिन चिन्ते ही, परमानंद विलसायो है।।2।।
महाभाग्य से तुमको पाया, मन मयूर प्रभुवर हर्षायो है।
करूँ साधना रत्नत्रय की, हमको यही सुहायो है।।3।।
गुण गाऊँ शीस नवाऊँ, मैं भी अपने में रम जाऊँ।
प्रभु साक्षी में यही भाव, मन में उमगायो है।। 4।।

(236)

(तर्जः शिखर पर कलश चढ़ाओ)

पारस प्रभु की छवि सुखकारी, वीतराग मूरत मनहारी।।टेक।।
पद्मासन अरु नासा दृष्टि, धर्मामृत की करती वृष्टि।
अद्भुत मुद्रा है हितकारी, पारस प्रभु की छवि सुखकारी।।1।।
निरखत परमानन्द उपजावे, भेद-ज्ञान उर में प्रगटावे।
सब संक्लेश मिटें दुखकारी, पारस प्रभु की छवि सुखकारी।।2।।

प्रभु की महिमा कैसे गावें, इन्द्रादिक भी पार न पावें।
चरित नाथ का मंगलकारी, पारस प्रभु की छवि सुखकारी।।3।।
मन में जिनवर यही भावना, करें आप सम आत्मसाधना।
साम्यभाव हो मंगलकारी, पारस प्रभु की छवि सुखकारी।।4।।
चित्त मलिन नहीं होने पावे, निरतिचार संयम प्रगटावे।
प्रभु चरणों में ढोक हमारी, पारस प्रभु की छवि सुखकारी।।5।।
ऐसा निश्चल ध्यान लगावें, कर्म-कलंक समूल नशावें।
पंचमगति पावें अविकारी, पारस-प्रभु की छवि सुखकारी।।6।।
दिव्य शान्तिमय तीर्थ आपका, परम शांत है तत्त्व आपका।
हो प्रभावना मंगलकारी, पारस प्रभु की छवि सुखकारी।।7।।

(237)

(तर्जः मैया त्रिशला तेरो लाल)

भविजन पार्श्वप्रभु की मूरति, मुक्तिमार्ग दिखाती है।
भविजन पार्श्वप्रभु की भक्ति, भाव विशुद्धि बढ़ाती है।। टेक।।
अवधिज्ञान से नाग नागिनी प्रभु लकड़ी में देखे,
दया भाव से उसे जलाते तब तपसी को रोके।
फाड़ी लकड़ी अरे तड़फते नाग-नागिनी निकले,
करूणा सहित किया सम्बोधन क्लेश भाव तब विनशे।।
पद्मावति धरणेन्द्र हुए वे शान्ति आती है।। 1।।
हो विरक्त प्रभु दीक्षा लेकर आतम ध्यान लगाया,
किया कमठ उपसर्ग भयंकर ध्यान न लेश डिगाया।
पद्मावति धरणेन्द्र सु आये, उसको दूर भगाया,

शुक्लध्यान में चढ़े आप तब केवलज्ञान उपाया।।
समवशरण में अन्तरीक्ष छवि नाथ सुहाती है।। 2।।
दिव्यध्वनि से अहो जिनेश्वर धर्मतीर्थ प्रगटाया,
भक्तिभाव से कमठ जीव ने भी था शीश नवाया।
हम भी धर्म अहिंसा धारें यही भावना स्वामी,
रत्नत्रय की होय पूर्णता तुम सम त्रिभुवन नामी।।
अक्षय आतम प्रभुता जिनवर मन को भाती है।। 3।।
कैसा सुन्दर अवसर आया मिले सभी साधर्मी,
पार्श्वप्रभु के हम अनुयायी पहिचानें स्वधर्मी।
वात्सल्य से हो प्रभावना तिहुँजग मंगलकारी,
सब में समता रमता निज में यही भाव अविकारी।।
नाम आपका जपते अद्भुत तृप्ति आती है।। 4।।

(238)

(तर्ज : रोम-रोम पुलकित हो जाय)

पार्श्वप्रभु का यह उपदेश, पहिचानो अब अपना देश।। टेक।।
जहाँ ज्ञानमय सदा प्रकाश, गुण अनन्त का जहाँ निवास।
परमानन्द सागर लहराय, प्रभुता जिसकी कही न जाय।।
शुद्धातम ही अपना देश।। पार्श्वप्रभु.।। 1।।
काय-वचन-मन नहीं हैं कर्म, नहीं रागादिक जिसका धर्म।
चिन्मूरति चिन्मूर्ति अनूप, परम पवित्र सहज चिद्रूप।।
जानो-मानो निज परिवेश।। पार्श्वप्रभु.।। 2।।
नहीं परिग्रह नहीं आरम्भ, पापों का जहँ नहीं समरम्भ।

ज्ञान-ध्यान तप में ही लीन, प्रचुर स्व-संवेदन स्वाधीन।।
सहज स्वभाव नहीं है वेश।। पार्श्वप्रभु.।।3।।
यह निर्ग्रन्थ दशा ही सार, आराधन वर्ते अविकार।
धन्य घड़ी धनि दिवस कहाय, जीवन में जब ही प्रगटाय।।
रहे नहीं कोई संक्लेश।। पार्श्वप्रभु.।।4।।
अपने में ही थिर हो जाय, दुखमय आवागमन मिटाय।
हो निर्मुक्त परमपद पाय, इन्द्रादिक भी शीश नवाय।।
परमपूज्य है यही विशेष ।। पार्श्वप्रभु.।।5।।

(239)

(तर्ज: तुम्हारे दर्श बिन स्वामी)

सहज सम्यक्त्व दरशाते, अहो! पारस प्रभो देखो।
भाव वैराग्य जगाते, अहो! पारस प्रभो देखो।। टेक।।
अनादिकाल से भ्रमता, देह को मानकर अपना।
व्यर्थ की कल्पना करके, सुख के देखता सपना।।
मोह की नींद भगाते, अहो! पारस प्रभो देखो।। भाव.।।1।।
दर्श करते अहो जिनवर, भेदविज्ञान उर जागे।
असि अरु म्यान के सम ही, देह अति भिन्न ही लागे।
ज्ञान-आनन्दमय आतम, दिखाते पार्श्वप्रभु देखो।। भाव.।।2।।
महादुर्लभ अरे जीवन, समर्पित आपको स्वामी।
करूँ आराधना क्षण-क्षण, आपके सम अहो! स्वामी।।
बनाते पतित से पावन, अहो पारस प्रभु देखो।। भाव.।।3।।
न लौकिक कामना कोई, शीश चरणों में नित नाऊँ।

अहो परिपूर्ण ध्रुव आतम, सहज निज में ही रम जाऊँ।।
सर्व दुख द्वन्द्व मिटाते,अहो ! पारस प्रभो देखो।। भाव. ।।4।।

(240)

(तर्ज : चाह जगी मुझे दर्शन की)

देखो मूरति पारस की, प्रभु पारस की, प्रभु पारस की।
सफल करो जन्म आज हो, देखो मूरति पारस की।। टेक।।
बिन शृंगार सहज ही सोहे, नाशा-दृष्टि मन को मोहे।। 1।।
कर-पर-कर कर्त्तृत्व मिटावे सहज अकर्ता भाव सिखावे।।2।।
मोह अंधेरा दूर भगाती, भेदज्ञान की ज्योति जगाती।। 3।।
विघ्न-विपत्ति सहज नशावें, जब परिणाम शांत हो जावें।।4।।
प्रभु गुण गाओ, शीश नवाओ,सम्यक् रत्नत्रय प्रगटाओ।।5।।

(241)

पारसनाथ-पारसनाथ, दर्शन करके हुए सनाथ।। टेक।।
शान्त मूर्ति अवलोकते,सब संक्लेश नशाय।
करें भक्ति जिनराज की,सहज विशुद्धि आय।। 1।।
गुण अनंत कैसे कहें,गणधर लहें न पार।
चिन्तत परमानंद हो,नमहुँ त्रियोग सम्हार।। 2।।
वीतराग सर्वज्ञ जिन, कर्त्ता-हर्त्ता नाय।
आप समीप सुभव्यजन,सहज मुक्ति पथ पाय।। 3।।
निर्मोही हो मैं लहूँ,चित्स्वरूप अविकार।
साधूँ प्रभु निर्ग्रन्थ हो,रत्नत्रय सुखकार।। 4।।

(242)

पारस नाम है मंगलकारी, पारस नाम है आनन्दकारी।
पारस नाम–पारस नाम, मुख से निकले आठों याम।। टेक।।
मोह नशावे–ज्ञान जगावे, अन्तर में वैराग्य बढ़ावे।
भक्ति हृदय में बसे हमारे, गूँजे प्रभु के जय–जयकारे।। 1।।
नाग–नागिनी संबोधन सुन, पाई देवगति उर में गुन।
प्रभुवर ने भी दीक्षा धारी, हुए सहज चैतन्य विहारी।।2।।
प्रभु विहार सबको हितकारी, दर्शन करें नगर नर–नारी।
धन्य हुए कृतकृत्य हुए हैं, सर्व मनोरथ सिद्ध हुए हैं।।3।।
प्रभु चरणों में करें नमन, निश–दिन प्रभु का करें भजन।
प्रभु की शरण सदा सुखकारी, पावें भेदज्ञान अविकारी।।4।।

(243)

(तर्ज: मेरे मन मंदिर में आन पधारो)

देखे पार्श्वनाथ जिनराज, मेरो जन्म सफल भयो आज।
भक्ति करते श्री जिनराज, मेरो जन्म सफल भयो आज।। टेक।।
सम्यग्दर्शन–ज्ञान अरु, चारित्र लियो महान।
आत्मध्यान में थिर हुए, आप स्वयं भगवान।। 1।।
बाह्य सुखों की चाह नहीं, दुख की नहिं परवाह।
उदासीन हो जगत से, पाऊँ शिव की राह।। 2।।
यही भावना हे प्रभो! पाऊँ सम्यग्ज्ञान।
करूँ साधना आप सम, बनूँ स्वयं भगवान।। 3।।
मंगल उत्तम हे प्रभो! अनन्य शरण हो आप।
चरणों में करता नमन, नाशें सब संताप।। 4।।

(244)

(तर्ज: पारस नाम, पारस नाम मेरे प्रभु का)

पार्श्व प्रभु की भक्ति करलो, मंगल अवसर आया है।
बैर विरोध विसर्जन करलो, मंगल अवसर आया है।। टेक।।
एक ओर का बैर देख लो, भव-भव में दुखदाता है।
क्षमा भाव और सहनशीलता, से ही क्लेश नशाता है।।
प्रभुवर का ही करो अनुकरण, मंगल अवसर आया है।। 1।।
प्रभुवर का मंगल चरित्र, यह उत्तम शिक्षा देता है।
सम्यक भेद-विज्ञान जगाता, मोह- तिमिर हर लेता है।
प्रभु की चरण शरण में आओ, उत्तम अवसर आया है।। 2।।
श्री जिनवर ही परम वैद्य हैं, भव का रोग मिटाने को।
रत्नत्रय ही परम औषधि, शुद्ध स्वास्थ्य प्रगटाने को।
गुरु उपदेश हृदय में लाओ, मंगल अवसर आया है।। 3।।
सब प्रकार अवसर आया है, चूक न जाना हे भाई।
आतमहित की करो प्रतिज्ञा, प्रभु साक्षी में सुखदायी।
शीश नवाओ श्रद्धा लाओ, मंगल अवसर आया है।। 4।।

(245)

परमानंदमय पारसनाथ जगत सिरताज विराजे हैं।
सांवलिया पारसनाथ शिखर पर भले विराजे हैं।।
ज्ञानानंदमय पारसनाथ शिखर पर भले विराजे हैं।। टेक।।
धन्य दिगम्बर मूरति भाये, परम जितेन्द्रिय रूप सुहाये।
शिवपथ नाशा दृष्टि सिखाये, नग्न दिगम्बर रूप सुहाये।।
अहो! महा महिमा मंडित सिरताज विराजे हैं।। परमानंदमय.।। 1।।
दिव्यध्वनि से तत्त्व बताये, देहादिक सब भिन्न दिखाये।

सब रागादिक हेय बताये, ज्ञानादिक आदेय बताये।।
अहो! अयोगी ध्यानलीन जिनराज विराजे हैं।। परमानंदमय.।। 2।।
इन्द्रादिक सब शीश नवावें, द्रव्य भावमय भक्ति रचावें।
हम भी चरण-शरण में आवें, ज्ञानमयी प्रभु भावना भावें।।
हृदयरूप सिंहासन पर जिनराज विराजे हैं।। परमानंदमय.।।3।।

(246)

(तर्ज: रंग मा रंग मा रंग मा रे)

पारस प्रभो ! हे पारस प्रभो ! कोटि-कोटि वंदन हे पारस प्रभो।। टेक।।
सारा जग स्वारथ का देखा, साथी यहाँ न कोई देखा।
भाग्य जगे मिले पारस प्रभो, पारस प्रभो हाँ पारस प्रभो।। 1।।
सहज नशाते मोह महातम, हे मंगलमय! हे लोकोत्तम।
साँचे शरण हैं पारस प्रभो, कोटि-कोटि वंदन हे पारस प्रभो।। 2।।
छह द्रव्यों का विश्व है मेला, यहाँ जीव है सदा अकेला।
निरपेक्ष उपकारी पारस प्रभो, कोटि-कोटि वंदन हे पारस प्रभो।। 3।।
प्रभु ने मुक्ति मार्ग बताया, प्रभु ने सुख का मार्ग बताया।
हम सबको भी यही सुहाया, आदर्श जग में हैं पारस प्रभु।। 4।।
निज पर भेद-विज्ञान करावें, सत्य-अहिंसा हम अपनावें।
यही भावना पारस प्रभो, कोटि-कोटि वंदन हे पारस प्रभो।।
साँचे शरण हैं पारस प्रभो, पारस प्रभो हे पारस प्रभो।। 5।।

(247)

जय-जय बोलो सब ही मिलकर, प्रभु पार्श्वनाथ की।
हर्षित होकर भक्ति करो, प्रभु पार्श्वनाथ की।। टेक।।

प्रभु का दर्शन करते–करते, निज प्रभुता दिख जाती।
गुण चिंतन करते ज्ञान कला, अन्तर में विकसाती।।
अशरण जग में साँची शरण, प्रभु पार्श्वनाथ की।।1।।
संकट सब ही हैं मिट जाते, प्रभुवर की भक्ति से।
नित नूतन मंगल प्रगटाते, अन्तर की दृष्टि से।।
अद्भुत समता अद्भुत महिमा, प्रभु पार्श्वनाथ की।।2।।
निरपेक्ष ज्ञाता ही रहें, कर्त्तृत्व नहीं आवे।
संतुष्ट निज में ही रहें, नहिं क्षोभ उपजावे।।
दुष्कर्म नाशें पायें प्रभुता, पार्श्वनाथ सी।। 3।।
वर्ते सहज ही दान–पूजा, शील और संयम।
सम्यक् दर्शन–सद्ज्ञान तप, चारित्र यम नियम।।
होवे मंगल प्रभावना, प्रभु पार्श्वनाथ की।। 4।।

(248)

हे पारस स्वामी, तुम ही शरण हमारे।। टेक।।
महाक्लेशमय भवसागर से, तुम ही तारण हारे।
रत्नत्रयमय मुक्तिमार्ग, तुम ही दर्शावन हारे।।1।।
स्वयं–स्वंय में तृप्त हुए, फिर भी जग के जाननहारे।
पूर्ण वीतरागी हो फिर भी, मोह छुड़ावन हारे।।2।।
नाथ हृदय में रूप विराजे, क्षण–क्षण नाम उच्चारें।
प्रभु गुण गावें शीश नवावें, शत–शत नमन हमारे।।3।।

(249)

(तर्जः मैया त्रिशला तेरो लाल)

देखो पारस प्रभु की महिमा, जंगल में है मंगल आज।
जागे हम सबके हैं भाग्य, दर्शन पाये हे जिनराज।। टेक।।
भक्तिभाव से भविजन आये,श्रद्धा के प्रभु सुमन चढ़ाए।
आनंद चारों ओर अपार। जंगल.।। 1।।
नग्न दिगम्बर मूरति प्यारी,नासादृष्टि लखो अविकारी।
झलके शान्ति अपरम्पार।। जंगल.।। 2।।
भव-भव में उपसर्ग हुए थे,किन्तु मुनीश्वर नहीं चिगे थे।
समता प्रभु की मंगलकार।। जंगल.।। 3।।
प्रभु चरणों में शीश नवायें, यही भावना मन में भायें।
हृदय सदा रहो जिनराज।। जंगल.।। 4।।

(250)

हे पारस स्वामी! शरण तिहारी आये।। टेक।।
महाभाग्य से दर्शन पाये, आनंद उर न समाये।
समता भाव जिनेश्वर लखकर, क्षोभ सहज मिट जाये।। 1।।
दस भव का बैरी पछताया, चरणों में था शीश नवाया।
देखो साम्यभाव की महिमा, वह भी सम्यक् पाये।। 2।।
सब संसार असार दिखाये, निज प्रभुता निज में दरशाये।
प्रभु जैसा पुरुषार्थ जगायें, मिथ्या मोह नशायें।। 3।।
अब तो जिनवर यही भावना, रत्नत्रय की करूँ साधना।
रहें सदा निरपेक्ष सहज ही, चाह-दाह विनशाये।। 4।।

(251)

(तर्ज: तीर्थ वन्दना मंगलकारी)

पार्श्वप्रभो हैं मंगलकारी, पार्श्वप्रभो हैं आनन्दकारी।।टेक।।
मंगलमय जिनदर्श है, मंगलमय हैं आप।
जिनवाणी मंगलमयी, नाशे भव संताप।। 1।।
अंतरंग अभ्यास से, भेदज्ञान प्रगटाय।
स्वानुभूति होते सहज, भव का भ्रमण नशाय।। 2।।
क्रूर पाप भी नष्ट हों, जब देखे जिनराज।
विघ्न शोक सब नष्ट हों, सम्पद सब विलसाय।। 3।।
समता देखो नाथ की, कमठ सहज झुक जाय।
बैर-विरोध विनष्ट हो, आकुलता नशि जाय।। 4।।
सात तत्त्व दर्शा दिए, दिव्यध्वनि से देव।
सुनकर भव्य सचेत हो, शिवपथ लें स्वयमेव।। 5।।
अहो-अहो दर्शा दिया, अविकारी शुद्धात्म।
ध्याते भविजन चाव से,पावें पद परमात्म।। 6।।
चरण-शरण जिनराज की, बनी रहे सुखकार।
करूँ वन्दना भाव से, पाऊँ भव से पार।। 7।।

(252)

हे पार्श्व जिनेश्वर अन्तर्दृष्टि हो।। टेक।।
देह से भिन्न आत्मा दीखे, सुख की सृष्टि हो।
अन्य न कोई सुख-दुःख दाता, नहीं कुदृष्टि हो।।1।।
द्रव्य दृष्टि से सब सम दीखें, समता वृष्टि हो।

पर्यायों का ज्ञान, नहीं पर पर्ययदृष्टि हो।। 2।।
वीतरागता प्रगट करें हम, चरणों दृष्टि हो।
यही भावना भावें स्वामी, नाशा दृष्टि हो।। 3।।
भक्ति भााव से शीश नवावें, सम्यग्दृष्टि हो।
निज सर्वस्व स्वयं में देखें, नहीं पर दृष्टि हो।।4।।
तृप्त रहें हम सदा स्वयं, नहीं बाहर दृष्टि हो।
मिटें विभाव सर्व दुखकारी, नहीं भव सृष्टि हो।।5।।

(253)

जय पारस परमात्मा, साक्षात् शुद्धात्मा।
दर्शायो परमात्मा, दर्शायो शुद्धात्मा।। टेक।।
चैतन्य ऋद्धिवान आत्मा, अद्भुत प्रभुतावान आत्मा।
अक्षय वैभववान आत्मा, अकृत्रिम भगवान आत्मा।।1।।
है शाश्वत भगवान आत्मा, आश्रय करने योग्य आत्मा।
श्रद्धा करने योग्य आत्मा, अनुभव करने योग्य आत्मा।।2।।
भाने योग्य है आत्मा, ध्याने योग्य है आत्मा।
नित्य निरंजन आत्मा, सहज शुद्ध है आत्मा।। 3।।
अहो परम उपकार है, तिहुँजग जय-जयकार है।
साँचे तारणहार हैं, केवल जाननहार हैं।। 4।।
शीश नवावें भक्ति रचावें, हम भी प्रभु पुरुषार्थ बढ़ावें।
भेदज्ञान की ज्योति जगावें, आत्म-ध्यान से कर्म जलावें।।5।।
निश्चय आवागमन मिटावें, हम भी परमातम बन जावें।
भव-वन में नहिं भ्रमण करावें, अपना नरभव सफल बनावें।।6।।

(254)

(तर्ज : आओ जिनमंदिर में आओ)

जिनमंदिर में आओ रे आओ, पार्श्व प्रभु के दर्शन पाओ।
भक्ति भाव से प्रभु गुण गाओ, अपना जीवन सफल बनाओ।।
समझो-समझो रे मारग कल्याण का।। टेक।।

दुर्लभ नरभव पाय के, मत कीजे मन खेद।
सम्यक् अनुभूति करो, समझो निज-पर भेद।।
आतम हित का लक्ष्य बनाओ,
मोह - भगाओ ज्ञान - जगाओ।
जिनवाणी नित पढ़ो-पढ़ाओ,
निर्मल तत्त्वज्ञान प्रगटाओ।।
आया-आया है अवसर आनन्द का।। 1।।

मिथ्या आलस छोड़ दो, तृष्णा भाव निवार।
आओ अति उल्लास से,सर्व विकल्प विडार।।
पर्वों के दिन मंगलकारी,
भाव क्षमादिक आनन्दकारी।
छोड़ो पाप महादुखकारी,
भजन करो जिनवर हितकारी।।
पाओ-पाओ रे प्रसाद जिनराज का।। 2।।

सुख अंतर में ही अहो, यही तत्त्व का सार ।
शरण गहो जिनदेव की, भटको नहीं संसार।।
नहिं रूढ़ि से मंदिर आना,
मंदिर से नहिं खाली जाना।

श्रद्धा भक्ति से तुम आना,
समाधान लेकर के जाना।।
देखो-देखो रे प्रसंग वैराग्य का।। 3।।

(255)

हे पार्श्वनाथ ! हे पार्श्वनाथ ! चरणों में नित धरूँ माथ।।टेक।।
दर्शन पाकर आनंद हुआ, निज-पर का भेद-विज्ञान हुआ।
यह भाव हृदय में देव हुआ, ध्याऊँ मैं भी चैतन्यनाथ।।1।।
संसार असार दिखाया है, नहीं शरण दूसरी पाया है।
अन्तर विश्वास जगाया है, अब मुक्ति मार्ग में बढ़ूँ नाथ।।2।।
प्रभु धर्म अहिंसा सिखलाया, वह ही स्वामी हमको भाया।
होवे प्रभावना मंगलमय, है यही भावना जगन्नाथ।। 3।।
जो भक्ति हृदय में लाते हैं, गुणगान सदा ही गाते हैं।
सब क्लेश सहज मिट जाते हैं, हो स्वयं सहज सन्तुष्ट नाथ।।4।।
मेरे न चाह कुछ और देव, रत्नत्रय निधि पाऊँ स्वयमेव।
रागादि विकारी भाव मिटें, हो आवागमन विमुक्त नाथ।।5।।

(256)

धन्य दिवस है पार्श्वनाथ का, हुआ आज निर्वाण।
सहज भाव से भक्ति करते, करें स्व-पर कल्याण।।टेक।।
श्रद्धा भक्ति और भावना, हो सम्यक् अविकार।
तेरे पावन चरण जिनेश्वर, वर्तें हृदय मंझार।।
शान्तमूर्ति अरु दिव्यध्वनि प्रभु, मेटें सब दुर्ध्यान।। 1।।
ज्ञान शरीरी त्रिविध कर्ममल, वर्जित जाननहार।

हो परिणमन स्वतंत्र सभी का, नहीं एक कर्तार।।
इंद्रिय सुख की मिटी वासना, प्रगटा सम्यक् ज्ञान।।2।।
झूठा जग का वैभव दीखा, चाह न रही लगार।
प्रभु सी प्रभुता अंतरमाँहि, देखी अपरम्पार।।
यही भावना अब तो स्वामी, होऊँ आप समान।।3।।
सफल जन्म है तुम्हें देखकर, दीखा निजपद सार।
अंतर्चक्षु खुली हे प्रभुवर, खुला मुक्ति का द्वार।।
भाव नमन हो प्रभु चरणों में, लगा रहे मम ध्यान।।4।।

(257)

(तर्ज : चाह जगी जिनदर्शन की)

पार्श्व प्रभु निर्वाण गये, परम निरंजन सिद्ध भये।
हम सबके आदर्श भये, मुक्तिमार्ग दर्शाय गये।। टेक।।
अहो आत्मा सिद्ध स्वरूप, गुण अनन्तमय आनंदरूप।
समझे बिन नित रहे दुःखी, आराधन से होंय सुखी।।1।।
अब अपने को पहिचानें, अनुभव करके श्रद्धानें।
भावें-ध्यावें थिर होवें, कर्म कलंक सहज धोवें।।2।।
आवागमन मिटावें हम, स्वयं सिद्ध बन जावें हम।
ये ही सच्चा स्वार्थ है, ये ही भवि परमार्थ है।।3।।
मिथ्या स्व-स्वामित्व हमारा, मिथ्या है कर्तृत्व हमारा।
मिथ्या इंद्रियज्ञान अरुसुख, सत्य अतीन्द्रिय ज्ञान अरु सुख।।4।।
वस्तु स्वभाव समझ लें हम, सहज प्रभु को भज लें हम।
भक्तिभाव से नमन करें, प्रभुवर का अनुसरण करें।।5।।

व्यर्थ न बाहर भरमावें, निज में ही तृप्ति पावें।
पार्श्व प्रभु तो नहीं आवें, प्रभु समीप हम ही जावें।।6।।

(258)

(तर्ज: छोटा सा मंदिर बनायेंगे)

मन को ही मंदिर बनायेंगे, पार्श्व प्रभु पधारायेंगे।
पार्श्व प्रभु गुण गायेंगे, चरणों में शीश नवायेंगे।।
प्रभो! पधारो मन-मंदिर में,प्रभो! विराजो मन-मंदिर में।।टेक।।
मोह तजेंगे, क्रोध तजेंगे, मान तजेंगे, माया तजेंगे।
लोभ का त्याग करायेंगे, पार्श्व प्रभु गुण गायेंगे।। 1।।
दर्शन करेंगे भक्ति करेंगे, जिनवाणी सुनेंगे, तत्त्वज्ञान करेंगे।
भेदविज्ञान प्रगटायेंगे, पार्श्व प्रभु पधरायेंगे।। 2।।
मिथ्या सर्व विकल्प तजेंगे, शाश्वत आतम प्रभु को भजेंगे।
सम्यग्दर्शन पायेंगे, पार्श्व प्रभु पधारायेंगे।। 3।।
प्रभुवर को आदर्श बनायें, भावना भायें वैराग्य बढ़ायें।
निर्ग्रंथ हो वन जायेंगे, पार्श्व प्रभु पधरायेंगे।। 4।।
समता रखेंगे, परीषह सहेंगे, हम भी आतम ध्यान धरेंगे।
परमातम पद पायेंगे, पार्श्व प्रभु पधारायेंगे।। 5।।

(259)

(तर्ज: पंचकल्याणक आ गया)

पारस प्रभु का मंगल विहार, हम सबको है आनंद अपार।
गूँजे प्रभु की जय-जयकार, हो प्रभावना आनंदकार ।।टेक।।
सबको प्रभु का दर्शन होगा, भक्ति करेंगे आनंद होगा।
गूँजे प्रभु की जय-जयकार।। 1।।

सुनें-सुनावें प्रभु संदेश, धर्मनिष्ट हों सब ही देश।
गूँजे प्रभु की जय-जयकार।। 2।।
स्याद्वादमय कथन हमारा, सर्व विकारों से है न्यारा।
गूँजे प्रभु की जय-जयकार।। 3।।
धर्म अहिंसा शिवसुखकारी, होवें हम चैतन्य विहारी।
गूँजे प्रभु की जय-जयकार।। 4।।
व्यसन मुक्त हों, मोह मुक्त हों, सर्व विभावों से विमुक्त हों।
गूँजे प्रभु की जय-जयकार।। 5।।

(260)

पारसनाथ पधारो मेरे अन्तर में।
हे जिननाथ विराजो मेरे अन्तर में।। टेक।।
भव-भोगों से थकित हुआ, मैं शरण आपकी आया,
परमानंदमय रूप निरखकर, अब विश्वास जगाया।
सहज प्राप्य है सुख शान्ति निज अन्तर में ।। 1।।
पर तो अपना हुआ न होगा, मोह व्यर्थ दुःखकारी,
इच्छाओं की पूर्ति असम्भव, ज्ञानदशा अविकारी।
इष्ट-अनिष्ट कल्पना झूठी बाहर में।। 2।।
निर्भय होकर प्रभु प्रणीत, रत्नत्रय पथ अपनाऊँ,
सत्य-अहिंसामय जीवन हो, नित निर्द्वन्द रहाऊँ।
मुक्तिपथ निर्ग्रन्थ सुपाऊँ अन्तर में।। 3।।
प्रभो आपकी समता भायी, अन्य न शरण दिखावे,
ऐसी दशा होय कब मेरी, नाथ भाव उमगावे।

पुरुषार्थी हो सहज रमूँ मैं अन्तर में।। 4।।
सहज उल्लसित हुआ प्रभु, चरणों शीश नवाऊँ,
हो निशंक निर्भय हे जिनवर, तत्त्व भावना भाऊँ।
ध्याऊँ ध्येय स्वरूप प्रभो निज अन्तर में।। 5।।

(261)

पारस प्रभुवर परम उपकारी, पारस प्रभुवर नित अविकारी।
पारस प्रभुवर सब दुखहारी, पारस प्रभुवर जग मंगलकारी।। टेक।।
कर्मरूप पर्वत के भेत्ता, पारस प्रभु शिव मग के नेता।
पारस प्रभु सब जग के ज्ञाता, पारस प्रभु अक्षय पद दाता।। 1।।
प्रभो परम निर्दोष निरामय, गुण अनंतमय परमानंदमय।
सहज ब्रह्ममय हे निष्काम, भक्तिभाव से अचल प्रणाम।। 2।।
ध्रुव अविचल पंचमगति पाई, अनुपम दशा प्रभो प्रगटाई।
इन्द्रादिक प्रभु भक्ति रचावें, गणधर भी तुम गुण गावें।। 3।।
रहो सदा आदर्श जिनेश्वर, आराधूँ निज पद परमेश्वर।
नहीं भय कोई नहीं कुछ आशा, सहज पूर्ण चेतन पद भासा।। 4।।
निर्ग्रंथ दशा सहज प्रगटावे, भाव विशुद्धि बढ़ती जावे।
दुःखमय आवागमन मिटाऊँ, अहो परम पद प्रभु सम पाऊँ।। 5।।

(262)

पार्श्व प्रभो तव दर्शन से, मम मिथ्यादृष्टि पलाई।
मेरा पार्श्व प्रभो अन्तर में, देता मुझे दिखाई।। टेक।।
तेरे जीवन की समता, आदर्श रहे नित मेरी।
तेरे सम निज में दृढ़ता ही, मेंटे भव-भव फेरी।।

संकट त्राता आनन्द दाता, ज्ञायकदृष्टि सु पाई।। 1।।
बैर-क्षोभ वश होय कमठ, उपसर्ग किया भयकारी।
नहिं अन्तर तक पहुँच सका, प्रभु अन्तर गुप्ति धारी।।
ज्ञेयमात्र ही रहा कमठ, किंचित् न शत्रुता आई।। 2।।
आ उपसर्ग धरणेन्द्र निवारा, पद्मा मंगल गाये।
धन्य-धन्य समवृत्तिधारी, किंचित् नहिं हरषाये।।
वीतराग प्रभु घातिकर्म तज, केवल-लक्ष्मी पाई।। 3।।
आत्मसाधना देख कमठ भी, प्रभु चरणों में नत था।
आत्मबोध पाकर वह भी तो, निज में हुआ विनत था।।
दूर हुए दुर्भाव विकारी, सम्यक्-निधि उपजाई।। 4।।
निज में ही एकत्व सत्य, शिव सुन्दर संकटहारी।
दिव्यतत्त्व दर्शाती प्रभुवर, मुद्रा दिव्य तुम्हारी।।
दर्पण से मुख त्यों तुमसे, निज निधि मैंने लख पाई।। 5।।
ज्ञानमात्र निज आत्मभाव, में शक्ति अनन्त उछलती।
रागादिक मल बाहर भागें, शान्ति किलोलें करती।।
शान्ति सिंधु में मगन होय मैं, नमन करूँ सुखदाई।। 6।।

(263)

जय बोलो पारसस्वामी की, जय बोलो त्रिभुवननामी की।।टेक।।
महाभाग्य प्रभु दर्शन पाया, परमशान्त जिनरूप सुहाया।
निर्मल तत्त्वज्ञान प्रगटाया, मुक्तिमार्ग प्रत्यक्ष दिखाया।।1।।
भोगों को प्रभु नहीं स्वीकारा, तजा राज्य वैभव दुःखकारा।
बालयति हो दीक्षाधारी, शोभे निर्ग्रन्थ पद अविकारी।।2।।

उपसर्गों में नहीं चिगाये,निश्चल आतम ध्यान लगाए।
निर्मद किया कमठ अज्ञानी, आप हुए प्रभु केवलज्ञानी।।3।।
दिव्यध्वनि अमृत वर्षाया, आत्मबोध भव्यों ने पाया।
प्रभु पथ के होवें अनुगामी, अक्षय निजपद पावें स्वामी।।4।।

(264)

हे पार्श्वनाथ भगवन्, चरणों में शीश नावें।
जिनवर समीप आते, अपना स्वरूप पावें।। टेक।।
निरपेक्ष बन्धु सबके, प्रभु आप ही जगत में।
अविनाशी सुख साँचा, दरशाया आप निज में।।
भवि स्वानुभूति करते, स्वतः एव तृप्ति पावें।। 1।।
है इन्द्रिय सुख दुःखमय, अज्ञान इन्द्रिय ज्ञान।
अतीन्द्रिय ज्ञान सम्यक् है, सब सुखों की खान।।
होवें जितेन्द्रिय स्वामी, अतीन्द्रिय रूप ध्यावें।। 2।।
होवे क्षमा और समता, जीवन की सहचरी मम्।
बस हो विकल्पों से अब है भावना यही मम्।।
उपयोग नहीं भ्रमित हो, निज में ही थिर रहावे।। 3।।
ज्ञाता स्वरूप अविकल, स्वाधीन सहज जीवन।
अक्षुण्य आत्म वैभव, परिपूर्ण प्रभु चिदानंद।।
निज आत्म बल प्रगट कर, अविनाशी प्रभुता पावें।। 4।।

(265)

(तर्ज : मुझे है स्वामी उस बल की)

हे पारस स्वामी! जीवन हो निर्दोष।
हे पारस स्वामी! परिणति हो निर्दोष।। टेक।।

श्रद्धा हो निर्दोष जिनेश्वर, मैं ज्ञायक हूँ देखूँ।
देह भिन्न है कर्म भिन्न, रागादि भिन्न भी देखूँ।।
ज्ञान मात्र चैतन्य गुणों से, भरा है अन्तर कोष।।1।।
नहिं परमाणु मात्र है मेरा, नहिं कुछ भी सम्बन्ध।
कर्त्ता-भोक्ता मैं नहिं पर का, मैं हूँ सहज अबन्ध।।
शाश्वत प्रभु के ज्ञान ध्यान से ,नाशे सब ही दोष।।2।।
महाभाग्य भवितव्य भला है, पाया मैं जिनशासन।
किंचित् भाव विशुद्धि भी, उपदेश मिला है पावन।।
अगणित बार नमन पाये हैं, देव परम निर्दोष।।3।।
धर्म तीर्थ की हो प्रभावना, नित जयवन्त प्रवर्ते।
रहूँ सहज निरपेक्ष सदा ही, समता परिणति वर्ते।।
ऐसा हो पुरूषार्थ मिटें सब, मोह क्षोभमय दोष।।4।।

(266)

श्री महावीर स्वामी स्तवन

गूँजे जय जयकार, वीर जयवन्त रहो।
आनन्द अपरम्पार, वीर जयवन्त रहो।।टेक।।
ज्ञान शून्य आडम्बर छाये, कोई शुष्क ज्ञान भरमाये।
हुआ जन्म सुखकार, वीर जयवन्त रहो।।1।।
इन्द्रादिक कल्याण मनाये, नर-नारी अति ही हर्षाये।
साँचे तारणहार, वीर जयवन्त रहो।।2।।
धर्म महोत्सव के आनन्द से,प्रभु के शान्त रूप दर्शन से।
जागे तत्त्व-विचार, वीर जयवन्त रहो।।3।।

धीर-वीर गम्भीर सुअनुपम, प्रभुवर का व्यक्तित्व मनोरम।
देखत हुए निहाल, वीर जयवन्त रहो।।4।।
भोगों में प्रभु नहीं फँसे थे, मुक्तिमार्ग में सहज बढ़े थे।
निर्ग्रन्थ पद अवधार, वीर जयवन्त रहो।। 5।।
आत्मसाधना करके स्वामी, अर्हत् पद पायो जगनामी।
किया तीर्थ उद्धार, वीर जयवन्त रहो।।6।।
सम्यक् वस्तु स्वरूप प्रकाशा, भविजन मोह-महातम नाशा।
जाना जाननहार, वीर जयवन्त रहो।। 7।।
हर्षित हो प्रभु के गुण गायें, अनेकान्त समझें-समझायें।
धर्म अहिंसा सार, वीर जयवन्त रहो।।8।।
मंगल-उत्तम-शरण तुम्हीं हो, धर्ममूर्ति सर्वस्व तुम्हीं हो।
करें नमन सुखकार, वीर जयवन्त रहो।।9।।

(267)

चित्स्वरूप महावीर, तुम्हीं ने दरशाया।
देखत हुआ आनन्द, दुःख सब विनसाया।। टेक।।
देव अनंत चतुष्टय रूप, गुरुवर का निर्ग्रन्थ स्वरूप।
वस्तु स्वभाव सु धर्म, तुम्हीं ने बतलाया।। 1।।
तत्त्वप्रयोजनभूत बताये,हेय और आदेय सु गाये।
स्व-पर भेदविज्ञान, तुम्हीं ने दरशाया।। 2।।
निश्चय सिद्ध समान निजातम,परम पारिणामिक परमातम।
आश्रय करने योग्य, तुम्हीं ने दरशाया।। 3।।
विषयों से निरपेक्ष सहज सुख, निज में ही हो प्राप्त परम सुख।
ध्येय रूप शुद्धात्म, तुम्हीं ने दरशाया।। 4।।

ज्ञान होय निरपेक्ष ज्ञेय से, निज प्रभुता निरपेक्ष है पर से।
सहज तत्त्व परिपूर्ण, तुम्हीं ने दरशाया।। 5।।
धन्य हुआ कृतकृत्य जिनेश्वर, तुम सम ही हूँ मैं परमेश्वर।
सम्यक् मुक्तिमार्ग, तुम्हीं ने दरशाया।। 6।।
भक्ति सहित प्रभुवर सिर नाऊँ, हर्ष विभोर हुआ गुण गाऊँ।
परम ब्रह्मचर्य नाथ, तुम्हीं ने दरशाया।। 7।।

(268)

(तर्ज : मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ)

हे वीरनाथ! हे वीरनाथ! मैं भक्तिभाव से नमन करूँ।
हूँ सहजरूप चैतन्यनाथ, अनुभवन करूँ-2 ।। टेक।।
निष्काम ब्रह्ममय बालयति, मैं भक्तिभाव से नमन करूँ।
हूँ सहज परम निष्काम ब्रह्म, अनुभवन करूँ-2।। 1।।
हे अनन्त चतुष्टय रूप देव, मैं भक्तिभाव से नमन करूँ।
हूँ सहज चतुष्टयवन्त सदा, अनुभवन करूँ-2।। 2।।
कृतकृत्य स्वयं में तृप्त प्रभो, मैं भक्तिभाव से नमन करूँ।
परिपूर्ण स्वयं में सदा प्रभो, अनुभवन करूँ-2।। 3।।
है महाभाग्य पाया जिनशासन, दुर्भावों का शमन करूँ।
ध्रुवधाम परम अभिराम अहो, चैतन्य सदन में वास करूँ।।4।।
प्रभुरूप सुहाया है मुझको, मैं भक्तिभाव से नमन करूँ।
हूँ परम पारिणामिक प्रभु मैं, अनुभवन करूँ-2।। 5।।

(269)

हे वीरनाथ! तुम दर्शन कर, निज दर्शन करने आये हैं।
हम वीरनाथ की भक्ति कर, वैराग्य बढ़ाने आये हैं।। टेक।।

तुमको बिन जाने हे स्वामी, भव-भव में व्यर्थ भ्रमाते थे।
सुख की आशा से विषयों में, फँसकर दुख ही दुख पाते थे।।
अब तुम साक्षी में हे जिनवर! शिवमारग पाने आये हैं।। 1।।
जब ही देखा जिनरूप अहो, विश्वास सहज ही जागा है।
आतम सुखमय सुख का कारण, दुर्मोह सहज ही भागा है।।
प्रभु सहज प्राप्य की प्राप्ति का, पुरुषार्थ जगाने आये हैं।। 2।।
घबराया चित्त प्रपंचों से, अब भोग-रोग सम लगते हैं।
इनमें फँसकर मोही प्राणी,नित स्वयं-स्वयं को ठगते हैं।।
निवृत्तिमय निर्ग्रन्थ दशा, तुम सम प्रगटाने आये हैं।। 3।।
निरपेक्ष रहें सब जग भर से, निर्द्वन्द स्वयं में लीन रहें।
निज वैभव में सन्तुष्ट रहें, निज प्रभुता में लवलीन रहें।।
प्रभु परमज्योतिमय परमानन्दमय, निजपद पाने आये हैं।। 4।।
अन्तर में परमातम देखा, अन्तर में मारग पाया है।
अन्तर दृष्टि अब प्रगट हुई, आनन्द न हृदय समाया है।।
मन शान्त हुआ निष्काम भाव से,शीश झुका हर्षाये हैं।। 5।।

(270)

वीर जिनेश्वर! अब तो मुझको, मुक्तिमार्ग बतलाओ।
निज को भूल बहुत दुःख पाये, अब मत देर लगाओ।।टेक।।
जाना नहीं आपको मैंने, पंच-पाप में लीन हुआ।
आतमहित में रहा आलसी, विषयन माँहि प्रवीन हुआ।।
छूटैं विषय-कषाय प्रभो, ऐसा पुरुषार्थ जगाओ।।1।।
पर में इष्ट-अनिष्ट ठानकर, हर्ष-विषाद सुमाना।
पर निरपेक्ष सहज आनन्दमय, ज्ञायकतत्त्व न जाना।।

महिमावंत परम ज्ञायक प्रभु, अब मुझको दरशाओ।।2।।
आस्रव-बंध हैं दुख के कारण,संवर-निर्जरा सुख के।
चतुर्गति दुखरूप अवस्था, सुख मुक्ति में प्रगटे।।
अब तो स्वामी शिवपथ में, मुझको भी शीघ्र लगाओ।।3।।
ऐसी स्तुति करते-करते, इक दिन मन में आई।
कैसे अन्तस्तत्त्व 'आत्मन्', बाहर देय दिखाई।।
प्रभो आपकी मुद्रा कहती, अन्तर्दृष्टि लाओ।।4।।
मुक्ति की सच्ची युक्ति पा, अपनी ओर निहारा।
प्रभु-सी प्रभुता निज में लखकर, आनन्द हुआ अपारा।।
जागी यही भावना अब तो, निज में ही रम जाओ।।5।।
दुष्टों से बच पितुगृह आकर, कन्या ज्यों हरषावे।
पितु भी उसको धूमधाम से, निज घर में पहुँचावे।।
जग से त्रसित शरण त्यों आया, प्रभु शिवपुर पहुँचाओ।।6।।

(271)

श्री वीर शासन दशक

वीरनाथ का मंगल शासन, जग में नित जयवंत रहे।
स्वानुभूतिमय श्री जिनशासन, जग में नित जयवंत रहे।।टेक।।
श्री जिनशासन के आधार, भवसागर से तारणहार।
वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर, जग में नित जयवंत रहें।।1।।
वस्तु स्वरूप दिखावन हार, हेयाहेय बतावनहार।
नित्य बोधिनी माँ जिनवाणी, जग में नित जयवंत रहे।।2।।
मुक्तिमार्ग विस्तारनहार, धर्ममूर्ति जीवन अविकार।

रत्नत्रय धारक मुनिराज, जग में नित जयवंत रहें।। 3।।
चैत्य-चैत्यालय मंगलकार,धर्म संस्कृति के आधार।
सहज शान्तिमय धर्मतीर्थ सब, जग में नित जयवंत रहें।।4।।
देव गुरु की मंगल अर्चा, आनंदमयी धर्म की चर्चा।
स्याद्वादमय ध्वजा हमारी, जग में नित जयवंत रहे।। 5।।
अष्ट अंगमय सम्यग्दर्शन, अनेकांतमय जीवन दर्शन।
सहज अहिंसामयी आचरण, जग में नित जयवंत रहे।।6।।
रहें सहज ही ज्ञातादृष्टा, हो विवेकमय निर्मल चेष्टा।
वीतराग-विज्ञान परिणति, जग में नित जयवंत रहे।। 7।।
तत्त्वज्ञान को सब ही पावें, मुक्तिमार्ग सब ही प्रगटावें।
सुखी रहें सब जीव भावना, जग में नित जयवंत रहे।।8।।
जिनशासन है प्राण हमारा, मंगलोत्तम शरण सहारा।
नमन सहज अविकारी सुखमय, जग में नित जयवंत रहे।।9।।
सेवें जिनशासन सुखकारी,शान बढ़ावें मंगलकारी।
सत्यपन्थ निर्ग्रन्थ दिगम्बर, जग में नित जयवंत रहे।। 10।।

(272)

(तर्ज : तुम्हारे दर्श बिन स्वामी)

अहिंसा धर्म सिखलाने, प्रभो महावीर आये हैं।
सहज सुख शान्ति बरसाने, प्रभो महावीर आये हैं।।टेक।।
पक्ष एकान्त का छोड़ें, सत्य अनेकान्तमय जानें।
शुद्ध स्याद्वाद को समझें, धर्म वीतरागता मानें।।
दिखाने साधना सम्यक्, प्रभो महावीर आये हैं।। 1।।

सुख जिस मार्ग से पाया, वही हमको भी दर्शाया।
देह रागादि से न्यारा, आत्मा शुद्ध बतलाया।।
लुटाते रत्नत्रय अनुपम, प्रभो महावीर आये हैं।। 2।।
मोह का चक्र जब नाशे, कर्म का चक्र रुक जावे।
मिटे भवचक्र का फेरा, जीव पंचम गति पावे।।
बनाने भक्तों को भगवान, प्रभु महावीर आये हैं।। 3।।
अहो! श्रद्धान सम्यक् हो, हमारा ज्ञान सम्यक् हो।
आचरण भी बने सम्यक्, तभी जीवन भी सुखमय हो।।
भक्ति से शीश नवाते, प्रभो! चरणों में आए हैं।। 4।।

(273)

महावीर विराजो हृदय में ।। टेक।।
अज्ञान अंधेरा दूर करो, हृदय में ज्ञान प्रकाश भरो।
हे तेजपुंज, हे ज्ञान ज्योति, महावीर विराजो... ।। 1।।
रागादि दोष अति दुखकारी, प्रभु जीत लिए मंगलकारी।
हे वीतराग हे मंगलमय, महावीर विराजो... ।। 2।।
प्रभु बाह्य रसों से रहित हुए, निज रस से ही अति सरस हुए।
हे अरस-सरस अनेकान्तमयी, महावीर विराजो... ।। 3।।
दर्शन पाकर आनंद हुआ, अति शांत हुआ निर्द्वन्द हुआ।
प्रभु सम्यक् मुक्तिमार्ग मिला, महावीर विराजो... ।।4।।
हो द्रव्य नमन हो भाव नमन, परमार्थ नमन अद्वैत नमन।
अवलम्ब रहो आदर्श रहो, महावीर विराजो... ।।5।।

(274)

महावीर की जय बोल-बोल ।। टेक।।
महावीर के दर्शन करके, घट के पट अब खोल।
अपनी भाव विशुद्धि बढ़ाओ, जिनमुद्रा अनमोल।।1।।
महावीर की वाणी सुनकर, तत्त्वारथ को तौल।
भेदज्ञान कर अन्तर्मुख हो, निज में निज रस घोल।।2।।
मोह मिटाओ ज्ञान जगाओ, अवसर है अनमोल।
क्षण-क्षण तत्त्व भावना भाओ करो न टाल मटोल।।3।।

(275)

श्री वर्द्धमान जयवंत रहो, प्रभु वर्द्धमान जयवन्त रहो।।टेक।।
वीतरागता लक्षण प्यारा, सारा लोकालोक निहारा।
अद्भुत प्रभुता जयवन्त रहो, श्री वर्द्धमान जयवंत रहो।।1।।
सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक् चारित्र रत्न महान।
रत्नत्रय जयवंत रहो, श्री वर्द्धमान जयवंत रहो।।2।।
धर्म अहिंसा सबको प्यारा, सत्य अचौर्य शील सुखकारा।
अपरिग्रह जयवंत रहो, श्री वर्द्धमान जयवंत रहो।। 3।
अनेकांतमय वस्तु स्वरूप, स्याद्वादमय वचन अनूप।
धर्म तीर्थ जयवंत रहो, श्री वर्द्धमान जयवंत रहो।।4।।
नमन पूर्वक यही भावना, जिनशासन की हो प्रभावना।
साम्यभाव जयवंत रहो, श्री वर्द्धमान जयवंत रहो।।5।।

(276)

दीपक सम्यक्ज्ञान उजारो, जिससे मिटे मोह अंधियारो।।टेक।।
जैसे वीर प्रभु ने जानो, अपनो जाननहारो,
वैसे ही हम भी पहिचानें, पर भावों से न्यारो।
सब प्रकार से अवसर आयो, ज्ञायक रूप निहारो।।
रत्नत्रयमय आराधन से, होय सहज निस्तारो।। 1।।
पर से कुछ संबंध नहीं है, निश्चय ही उर धारो,
होय विरागी सब परिग्रह तज, साम्यभाव विस्तारो।
आप आप में लीन होय, पाओ भव सिंधु किनारो।।
अन्य उपाय नहीं है भाई, शुद्धातम ही सारो।। 2।।

(277)

महावीर का मोक्ष कल्याण, सहज जगावे भेद विज्ञान।।टेक।।
देह भिन्न है कर्म भिन्न हैं, राग भिन्न है, ज्ञान भिन्न है।
ज्ञानरूप शुद्धातम जान, हुआ सहज आनन्द महान।। 1।।
पर नहीं हो सुख-दुख का कारण, मोह भाव का करो निवारण।
शाश्वत देव परम अम्लान, अन्तर्दृष्टि से पहिचान।। 2।।
अरे कषायों से दुःख होवे, ज्ञानाभ्यास राग दुख खोवे।
करो कषायों का अवसान, प्रगटाओ तुम केवलज्ञान।। 3।।
लख निज ओर तजो कर्त्तृत्व, समझो अब अपना अस्तित्व।
लीन स्वयं में हो भगवान, पावें अविचल पंचमभाव।। 4।।
प्रभुवर हैं आदर्श हमारे, सब विभाव तज मुक्ति पधारे।
करें वंदना हम अम्लान, रत्नत्रय पथ चलें महान।। 5।।

मार्ग एक है साध्य एक है, छोड़ो भव्य पुरानी टेक।
निज को निज पर को पर जान, 'आत्मन्' सहज लहो निर्वाण ।।6।।

(278)

श्री महावीर श्री महावीर, नमूँ–नमूँ मैं श्री महावीर।
मोह विजेता इन्द्रिय जेता, धर्म प्रणेता श्री महावीर।। टेक।।
साँचे स्वामी अन्तर्यामी, त्रिभुवन नामी श्री महावीर।
शासन नायक मंगलदायक, श्री महावीर श्री महावीर।। 1 ।।
विघ्न विनाशक तत्त्व प्रकाशक, निजपद भासक श्री महावीर।
प्रभु गुण गाऊँ भक्ति रचाऊँ, शीश नवाऊँ श्री महावीर।। 2 ।।
ध्रुव पद ध्याऊँ, शिवपद पाऊँ, और न कुछ चाहूँ हे वीर।
आत्माराधना, धर्म प्रभावना, बढ़ती रहे सदा ही वीर।। 3 ।।
जीवन अर्पण सर्व समर्पण, रहे सदा ही हे महावीर।
ज्ञान दीप प्रज्ज्वलित रहे प्रभु, मोह अंधेरा हो नहीं वीर।।
ऐसी दीपावली मनाऊँ, पाऊँ सहज भवोदधि तीर।। 4 ।।

(279)

(तर्ज: यह धर्म है वीर जवानों का)

श्री वीर का शासन मंगलमय, महावीर का शासन मंगलमय।। टेक।।
है ध्रुव शुद्धातम मंगलमय, है स्वानुभूति भी मंगलमय।
है परमार्थ यही जिनशासन, सदा सभी को मंगलमय।।
अब आओ समझो मंगलमय, श्री वीर का शासन मंगलमय।। 1 ।।
सभी जीव शाश्वत मंगलमय, भूल स्वयं को दुखी हुए।
पर से कुछ संबंध नहीं है, व्यर्थ मोह में पड़े हुए।।

ज्ञान जगाता मंगलमय, श्री वीर का शासन मंगलमय।। 2।।
रहें सदा भयभीत दुःखों से, दुख कारण पर को मानो।
सुख भी सदा ढूँढ़ते पर में, अपने को नहीं पहिचानो।।
पहिचान कराता मंगलमय, श्रद्धान कराता मंगलमय।।। 3।।
हो अपनी पहिचान जभी, निज अन्तर में उपयोग ढले।
सुख का झरना झरता अविरल, अक्षय प्रभुता तब सहज मिले।।
होता है जीवन सहज निर्भय, महावीर का शासन मंगलमय।। 4।।
दृष्टि में कारण परमातम, हो अनेकान्त का सहज ज्ञान।
वाणी में वर्ते स्याद्वाद, हो चर्या समतामय महान।।
हो धर्म अहिंसा आनन्दमय, महावीर का शासन मंगलमय।। 5।।
निजशासन को पकार भगवन्, हो गये आज हम सब निहाल।
प्रगटावें पावन रत्नत्रय, हों निर्वांछक होवें खुशाल।।
होवे प्रभावना मंगलमय, महावीर का शासन मंगलमय।। 6।।

(280)

ज्ञान दीप अविकारी, ज्ञानदीप अविकारी।
स्व-पर प्रकाशक परम ज्योतिमय, तिहुँजग मंगलकारी।।टेक।।
मोह नशे सब ही दुःख नाशे, ज्ञानकला विस्तारी।
जन्म-मरण का चक्र नशावे, हो ध्रुव गति सुखकारी।।1।।
वीर प्रभु निर्वाण पधारे, हर्षाये नर नारी।
गौतम स्वामी भये केवली, अनन्त चतुष्टय धारी।। 2।।
इन्द्रादिक ने किया महोत्सव, अद्भुत आनन्दकारी।
श्रुत दीपक हम भी परकाशें, हों चैतन्य विहारी।। 3।।

उदासीन हो परभावों से, होवें शिवमग चारी।
निज में ही संतुष्ट रहें हम, अक्षय प्रभुता धारी।। 4।।

(281)

वर्द्धमान जिनराज जी, आया शरण तिहारी।
आया शरण तिहारी, आया शरण तिहारी।। टेक।।
चिर से भ्रमते-भ्रमते जिनवर, भोगी विपदा भारी।
धन्य हुआ जब देखी मैंने, तेरी छवि मनहारी।।
आया शरण तिहारी, आया शरण तिहारी।। 1।।
नग्न दिगम्बर नहीं आडम्बर, समतामय अविकारी।
नाशा दृष्टि प्रभु धर्मामृत, बरसाती सुखकारी।।
आया शरण तिहारी, आया शरण तिहारी।। 2।।
सुनकर प्रभु की मंगलवाणी, ज्ञानकला विस्तारी।
ज्ञायक प्रभु प्रत्यक्ष हुआ है, मिटी मोह अंधियारी।।
आया शरण तिहारी, आया शरण तिहारी।। 3।।
प्रभु चरणों में शीश नवाऊँ, होऊँ शिवमगचारी।
हो निर्ग्रंथ निजातम ध्याऊँ, वा दिन की बलिहारी।।
आया शरण तिहारी, आया शरण तिहारी।। 4।।

(282)

(तर्ज : धन्य-धन्य आज घड़ी कैसी सुखकार है)

धन्य-धन्य वीरनाथ दर्श अविकार है, आनंद अपार है[2]।
धन्य-धन्य वीरनाथ दर्श मंगलकार है, आनंद अपार है[2]।।टेक।।
कला भेदज्ञान की जिनवर सिखाते,
सुख शांति का मार्ग प्रभुवर दिखाते।

अहो! अहो! वीतरागता ही जग में सार है।।
धन्य-धन्य वीर नाथ दर्श अविकार है।।1।।
झूठा है अभिमान पर में कर्त्तृत्व का,
मिथ्या है दुर्विकार पर में भोक्तृत्त्व का।
पर से निरपेक्ष जीव मात्र जाननहार है।।
धन्य-धन्य वीर नाथ दर्श अविकार है।।2।।
दर्शन से भोगों की वासना ही मिट गई,
सहज मुक्तिमार्ग की सत्य विधि मिल गई।
सम्यक् श्रद्धान-ज्ञान-ध्यान मुक्ति मार्ग है।।
धन्य-धन्य वीर नाथ दर्श अविकार है।।3।।
रत्नत्रय की पूर्णता ही परमार्थ मुक्ति है,
प्रभुवर को पाने की यही एक युक्ति है।
जयवंतो जिनशासन वंदना सुखकार है।।
धन्य-धन्य वीर नाथ दर्श अविकार है।।4।।

(283)

हे वीर वंदना करते हैं, हे वीर वंदना करते हैं,
सद्ज्ञान और आचरण श्रेष्ठ हो, यही प्रार्थना करते हैं।
हे ईश वंदना करते हैं, हे वीर वंदना करते हैं।। टेक।।
जाग्रत रहे विवेक सदा, गुरु अनुशासन माथे पर हों,
सत्य अहिंसा शील त्याग संतोषमयी आभूषण हों।
हम यही प्रार्थना करते हैं, हे वीर वंदना करते हैं।। 1।।
सत्कार्यों से सत्पुरुष बनें, उन्नत नित देश हमारा हो,

हो प्रेम परस्पर आनंदमय, संघर्ष बुरे कार्यों से हो।
हम यही प्रार्थना करते हैं, हे वीर वदंना करते हैं।। 2।।
हों विनयवान हो सरल चित्त, सेवा में तत्पर रहें सदा,
कर्त्तव्य करें हर्षित होकर अधिकारों का उपयोग सदा।
हम यही प्रार्थना करते हैं,हे वीर वंदना करते हैं।। 3।।
क्षणभंगुर तन–मन–धन सब ही, प्रभु देश धर्म हित अर्पित हों,
हो सफल भावना चरणों में, श्रद्धा के सुमन समर्पित हों।
हम यही प्रार्थना करते हैं, हे वीर वंदना करते हैं।। 4।।

(284)

मुक्त हुए हैं वीर जिनेश्वर, आनंद अपरम्पार हो।
सिद्ध हुए हैं वीर जिनेश्वर, मंगल जय जयकार हो।। टेक।।
दर्शन मोह मिटा था जब ही, मुक्तिमार्ग प्रारंभ हुआ।
भाते–भाते तत्त्वभावना, रागादिक भी क्षीण हुआ।।
हुआ शांतिमय अद्‌भुत जीवन, आनंद अपरम्पार हो।। 1।।
होय विरागी सब परिग्रह तज, निर्ग्रंथ पथ अपनाया था।
उदासीन हो सर्व जगत से, आतम ध्यान लगाया था।।
समतामय जिनरूप सुहाता, आनंद अपरम्पार हो।। 2।।
आत्मलीनता पूर्ण हुई थी, कर्म घातिया नष्ट हुए।
आप हुए अंतिम तीर्थंकर, भव्य जीव प्रतिबुद्ध हुए।।
अद्‌भुत रचना समवशरण की, आनंद अपरम्पार हो।। 3।।
करके योग निरोध वीर प्रभु, पावापुर में तिष्ठाये।
शेष कर्म भी नष्ट हुए थे, स्वाभाविक गुण प्रगटाये।।
सहज विराजे लोक शिखर पर, आनंद अपरम्पार हो।। 4।।

सिद्ध समान स्वरूप पिछाना, तुम प्रसाद से हे स्वामी।
हो सम्यक् पुरुषार्थ करें, आराधन हम भी हे स्वामी।।
भक्ति भाव से करें अर्चना, आनंद अपरम्पार हो।। 5।।

(285)

(तर्ज : रोम-रोम पुलकित हो जाय)

मोक्ष पधारे श्री महावीर, वर्द्धमान सन्मति अतिवीर।। टेक।।
इन्द्रादिक भी हर्ष मनावें, भाव भरी हम भावना भायें।
रत्नत्रय पावें गंभीर, मोक्ष पधारे श्री महावीर।। 1।।
मोह मिटावें ज्ञान जगावें, नित वैराग्य भावना भायें।
मम आदर्श रहें श्री वीर, मोक्ष पधारे श्री महावीर।। 2।।
धन्य घड़ी निर्ग्रंन्थ बनें हम, अविचल आतम ध्यान।
पावें निश्चय श्री महावीर, मोक्ष पधारे श्री महावीर।। 3।।
भक्तिभाव से शीश नवावें, हर्ष सहित प्रभु के गुण गावें।
हृदय विराजो श्री महावीर, मोक्ष पधारे श्री महावीर।। 4।।

(286)

श्री वीर शासन जयंती

वीर की दिव्यध्वनि सुखकर, वीर की दिव्यध्वनि सुखकर।
छियासठ दिन के बाद खिरी, सब ही को आनंदकर।। टेक।।
मोह-नशाया ज्ञान-जगाया, धर्म तीर्थ कर्त्तार।
भव दुख नाशक, धर्म प्रकाशक, शिव रमणी भरतार।।
हुए सहज प्रतिबुद्ध भव्य,प्रभु दिव्यध्वनि सुनकर।। 1।।
सूखी भूमि सरस हुई, आनंद हृदय छाया।

सहज सरल मुक्ति का मारग, जिनवर दर्शाया।।
बोया सम्यक् बीज,सब ही को आनंदकर।। 2।।
कितनों ने ही दीक्षा ली, मिथ्या प्रपंच छोड़े।
हो निर्ग्रंथ भाव अपने-अपने में ही जोड़े।।
निज स्वभाव के उत्तम साधक, दर्शन मंगलकर।। 3।।
उत्तम मध्यम श्रावक के व्रत, बहुत जीव धारे।
पहली सीढ़ी चढ़े अनेक, सु श्रद्धा उर धारे।।
भक्ति सहित अनुमोदन करते, सब हर्षित होकर।। 4।।
महाभाग्य से हम सब ने भी, वीरमार्ग पाया।
वस्तु स्वभाव सभी समझें, संकल्प हृदय आया।।
सफल करें हम अपना जीवन, धर्माराधन कर।। 5।।

(287)

रहे जयवंत मंगलमय, श्री महावीर का शासन।। टेक।।
मूल सम्यक्त्व है जिसका, ज्ञान वैराग्यमय शासन।
सहज समतामयी शासन, प्रभुतामयी शासन।। 1।।
अहो छह द्रव्य बतलाये, सभी स्वतंत्र ही गाये।
स्वयं सिद्ध द्रव्य दर्शाया, श्री महावीर का शासन।। 2।।
देव वीतराग सर्वज्ञ, गुरु निर्ग्रन्थ आराधक।
अहिंसा धर्म अविकारी, श्री महावीर का शासन।। 3।।
द्रव्य उत्पाद-व्यय-ध्रुवमय, सदा पर्याय और गुणमय।
सत् अनेकांतमय गाया, श्री महावीर का शासन।। 4।।
अहो स्याद्वादमय वाणी, सुनें समझें सभी प्राणी।

कहा अप्पा सो परमप्पा, श्री महावीर का शासन।। 5।।
अहो शुद्धात्म आराधें, भाव रत्नत्रय ही साधें।
स्वयं परमात्म पद पावें, शरण श्री वीर का शासन।। 6।।

(288)

(तर्ज : धन्य-धन्य आज घड़ी)

जय-जय महावीर दर्श मंगलकार है।
प्रभुता अपार है प्रभुता अपार है।। टेक।।
नहीं कर्त्तृत्व है नहीं रागादि हैं,
स्वर्ग मुक्ति दाता ही जग विख्यात हैं।
स्वानुभूति की निमित्त मूर्ति अविकार है,
दर्श मंगलकार है, प्रभुता अपार है।। 1।।
दुर्विकार काम सुभट निज बल से जीत लिया,
अष्टकर्म नाशकर मुक्ति साम्राज्य लिया।
मंगलमय परिणमन स्व-पर हितकार है,
प्रभुता अपार है, प्रभुता अपार है।। 2।।
पर स्वामित्व त्याग लोक स्वामी हुये,
निज में ही मग्न हुये त्रिभुवन नामी हुये।
आपके ही शासन से मिले भव पार है,
दर्श मंगलकार है, प्रभुता अपार है।। 3।।
दर्शाया आपने कारण परमात्मा,
प्रभु स्वरूप सिद्धरूप शाश्वत शुद्धात्मा।
निर्विकल्प निर्द्वन्द मुक्ति निराधार है,

प्रभुता अपार है, प्रभुता अपार है ।। 4 ।।
मोहभाव नाशकर ज्ञान परकाश कर,
ध्याऊँ शुद्धात्मा रूप निर्ग्रन्थ धर ।
भक्ति से शीश नाऊँ पाया समयसार है,
प्रभुता अपार है, प्रभुता अपार है ।। 5 ।।

(289)

(तर्ज : परम दिगम्बर मुनिवर देखे)

वीरनाथ का दर्शन करके, हृदय हर्षित होता है,
आनंद उल्लसित होता है, आतम दर्शन होता है ।
वीर चरण स्पर्शन करके, हृदय हर्षित होता है,
आनंद उल्लसित होता है, आतम दर्शन होता है ।। टेक ।।
अखिल विश्व के ज्ञाता प्रभुवर, सहज जगत के उपकारी,
मुद्रा शांत मनोहर सोहे, नासा दृष्टि अविकारी ।
परम जितेन्द्रिय रूप निरखते, हृदय हर्षित होता है,
आनंद उल्लसित होता है, आतम दर्शन होता है ।। 1 ।।
गणधर इन्द्रादिक भी तेरे, शासन का सेवन करते,
दिव्यध्वनि से तीर्थ प्रवर्ते, भव्यजीव भव से तिरते ।
त्रिभुवन स्वामी भक्ति करते, हृदय हर्षित होता है,
आनंद उल्लसित होता है, आतम दर्शन होता है ।। 2 ।।
भर यौवन में काम सुभट को, निजबल से ही जीत लिया,
सहज तृप्त निर्ग्रन्थ निरखकर, मुक्ति रमा ने वरण किया ।
बालयति जिनवर को लखते, हृदय हर्षित होता है,

आनंद उल्लसित होता है, आतम दर्शन होता है।।3।।
धर्म भावना वर्ते विभुवर, पाप वासना दूर रहे,
आप लीन होकर स्वामी, सब वैभाविक कर्म तजे।
प्रभु को नमते निज में नमते, हृदय हर्षित होता है,
आनंद उल्लसित होता है, आतम दर्शन होता है।।4।।

(290)

दर्शन वीरनाथ का पाकर, आनंद उर न समायो है।
आनंद उर न समायो है, आनंद उर न समायो है।।टेक।।
वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर, तुम ढ़िग आकर हे परमेश्वर।
भव-भव का दुर्दान्त मोह, प्रभो सहज पलायो है।। 1।।
जगा उर में भेद विज्ञान, मैं भी प्रभुवर आप समान।
अन्तर्दृष्टि से देखा प्रभु, रूप लखायो है।। 2।।
जड़-वैभव सब झूठा भासा, निज अक्षय वैभव प्रतिभासा।
निर्वांछिक हो गया सहज ही, शिव सुख प्रगटायो है।।3।।
प्रगटा अन्तर ज्ञान अतीन्द्रिय, सहज निराकुल सुख अतीन्द्रिय।
अरे! रोगमय भोगों का रस, नहीं सुहायो है।। 4।।
यही भाव निज में रम जाऊँ, निज में ही संतोष रखाऊँ।
परम ब्रह्मचर्य अहो, प्रभु शीश नवायो है।। 5।।
प्रभुवर तुम गुण कैसे गाऊँ, निरख अंतरंग में हर्षाऊँ।
प्रगटे ऐसे सुख गुणमय ही, विभु भाव जगायो है।।6।।

(291)

नाम ग्रहण भी श्री जिनवर का, दर्शन सर्व पाप हारी।
अहो प्रवर्ते धर्मतीर्थ, जिनके वचनों से हितकारी।। 1।।
ऐसे वीर जिनेश्वर का, शासन पाया आनंदकारी।
भक्तिभाव से करें वंदना, सदाकाल मंगलकारी।। 2।।
शासन नायक मुक्ति विधायक, अहो अलौकिक रूप लखा।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, लक्षण जगत प्रसिद्ध दिखा।। 3।।
दर्शन करते वर्द्धमान का, ऋद्धिमान निज पद निरखा।
हुआ भेद विज्ञान स्व-पर का, हेयादेय तत्त्व परखा।।4।।
हो विरक्त तन से भी अब तो, साधूँ सहज स्वरूप अहा।
भासा निजपद ही अंतर में, आश्रय करने योग्य दिखा।।5।।
स्वाश्रय से ही तृप्त रहूँ मैं, सहज जितेन्द्रिय नित निष्काम।
वीरमार्ग में बढ़ते-बढ़ते पाऊँ मैं अविचल शिवधाम।।6।।

(292)

सिद्धालय में वीर विराजे, बोलो जय जयकार जी।
आनन्द अपरम्पार जिनेश्वर, आनन्द अपरम्पार जी।।टेक।।
निर्मल ध्यान लगाय कर, कर्म कलंक जलाय।
भये सिद्ध परमात्मा, वन्दूँ मन-वच-काय।।1।।
ध्याने योग्य स्वरूप निज, दर्शायो अविकार।
निज स्वरूप की दृष्टि धर, नमन करें अविकार।।2।।
स्वयं सिद्ध परमात्मा, परम ज्योति अम्लान।
जिनशासन जयवन्त हो, जयवन्तो भगवान।।3।।

सफल हुआ पुरुषार्थ प्रभु, पायो पद निर्वाण।
यही भावना भावते, नित प्रति करें प्रणाम।।4।।

(293)

प्रभुवर का निर्वाण दिवस, हो मेरा कल्याण दिवस।। टेक।।
यही भावना अन्तर में, मुक्ति साधूँ अन्तर में।
महाभाग्य पाये परमातम, अनंत चतुष्टय मय शुद्धातम।।
धन्य घड़ी है धन्य दिवस, प्रभुवर का निर्वाण दिवस।। 1।।
जग प्रपंच से चित घबड़ाया, शरण जिनेश्वर की हूँ आया।
ज्ञान ध्यानमय मार्ग सुहाया, ध्रुव परमेश्वर निज में पाया।।
है मंगलमय धन्य दिवस, प्रभुवर का निर्वाण दिवस।। 2।।
भोगों के प्रति ग्लानि आई, परिग्रह से परिणति घबड़ाई।
सम्यक् तत्त्व भावना भाऊँ, अहो! प्रगट निर्ग्रन्थ हो जाऊँ।।
दीक्षा का हो जाए दिवस, प्रभुवर का निर्वाण दिवस।। 3।।
प्रभु पथ का अनुगामी हो, सहजपने शिवगामी हो।
निज में ही रम जाऊँगा, घाति कर्म नशाऊँगा।।
होगा केवलज्ञान दिवस, प्रभुवर का निर्वाण दिवस।। 4।।
जग में धर्म प्रवर्तन हो, मुक्तिमार्ग में वर्तन हो।
सम्यक् रत्नत्रय पावें, मंगलमय सब हो जावें।।
ज्ञान विरागमयी हो दिवस, प्रभुवर का निर्वाण दिवस।। 5।।
शेष अघाति कर्म नशाय, अशरीरी ध्रुव पद प्रगटाय।
दुखमय आवागमन हरूँ, लोक शिखर पर वास करूँ।।
मेरा भी निर्वाण दिवस, प्रभुवर का निर्वाण दिवस।। 6।।

(294)

श्री गौतम गणधर स्तुति

गौतमगणधर केवलज्ञान, पाया आनंदमय अम्लान।
हम सबको है हर्ष महान, करते भक्ति सहित गुणगान।। टेक।।
बाह्य ज्ञान तो था बहुतेरा, अनुयायी शिष्यों का घेरा।
जग प्रसिद्धि बहु पाई थी, लेश न शान्ति मन आई थी।।
आत्मज्ञान बिन इन्द्रियज्ञान, हमने भी समझा अज्ञान।। 1।।
वीर प्रभु ने केवल पाया, समवशरण सुरपति रचवाया।
भव्यजनों की सभा भरी थी, दिव्यध्वनि पर नहीं खिरी थी।।
इन्द्र इन्द्रभूति ढिंग आन, गूढ़ प्रश्न था किया महान।। 2।।
महावीर ढ़िंग चलो कहा था, काललब्धि का स्वर्णिम क्षण था।
समवशरण में ज्यों ही आये, वीरनाथ के दर्शन पाये।।
प्रगटाज्ञान विराग महान, गणधर पद पाया सुखखान।। 3।।
धर्मतीर्थ जग में वर्ताया, भव्यों ने शिव मारग पाया।
वही तीर्थ हमको भी भाया, पाने को पुरुषार्थ जगाया।।
पावें निश्चय आतमज्ञान, हो निर्ग्रन्थ धरें निज ध्यान।। 4।।
वीरनाथ जब मुक्ति पधारे, जगत आपकी ओर निहारे।
आप आप में लीन हुए थे, घाति कर्म प्रक्षीण हुए थे।।
हुए अनंत चतुष्टयवान, गुरुवर आप स्वयं भगवान।। 5।।
हम भी अन्तर्दीप जलावें, मोह अंधेरा दूर भगावें।
सम्यक् भाव विशुद्धि बढ़ावें, धर्म महोत्सव सहज मनावें।।
फैले घर-घर सम्यग्ज्ञान, मंगलमय जिनधर्म महान।। 6।।

(295)

गौतम स्वामी मैं नमन करूँ, भक्ति से प्रभु स्तवन करूँ।। टेक।।
मानस्तम्भ देखकर स्वामी, प्रभु चरणों में विनत हुए।
दीक्षा ली गणधर पद पाया, हर्षित भक्त समस्त हुए।।
दिव्यध्वनि हुई वीर प्रभु की, सुनूँ सहज कल्याण करूँ।।1।।
योग निरोध किया प्रभुवर ने, महावीर तो मुक्त हुए।
ध्यान किया ऐसा गुरुवर ने, केवलज्ञानी आप हुए।।
विरह भुलाया तीर्थंकर का, तत्त्वों का मैं ज्ञान करूँ।।2।।
हुआ प्रमोद सु देवों को भी, दीपावली प्रसिद्ध हुई।
हेयादेय समझकर स्वामी, भव्यजनों को तृप्ति हुई।।
यही भावना अब तो जिनवर, सम्यक् संयम अम्लान धरूँ।।3।।
बाहर मुझको कुछ न सुहावे, अंतरंग में लीन रहूँ।
वैभाविक परिणति मिट जावे, सहज पूर्ण स्वाधीन रहूँ।।
नहीं कामना भोगों की प्रभु, शाश्वत पद निर्वाण लहूँ।।4।।

(296)

पुरुषार्थ हो गौतम स्वामी सा,
श्रद्धान हो गौतम स्वामी सा।
सद्ज्ञान हो गौतम स्वामी सा,
आचरण हो गौतम स्वामी सा ।। टेक।।
मानस्तंभ निहारते, मान अनंत नशाय।
अंतर्मुख उपयोग कर,सम्यक् दर्शन पाय।।
पुरुषार्थ हो गौतम स्वामी सा।। 1।।

हो विरक्त सब जगत से, निर्ग्रन्थ पथ अपनाय।
जिनवर के गणधर हुए, खिरी ध्वनि सुखदाय।।
पुरुषार्थ हो गौतम स्वामी सा।। 2।।
धर्मतीर्थ प्रगटा प्रभो, छाया हर्ष अपार।
भक्ति सहित वंदूँ चरण, यह उपकार विचार।।
पुरुषार्थ हो गौतम स्वामी सा।। 3।।
वीर पधारे मुक्ति में, निज में थिर हो आप।
केवलज्ञान प्रकट किया सांयकाल निष्पाप।।
पुरुषार्थ हो गौतम स्वामी सा।। 4।।
विरह भुलाया वीर का, दे मंगल उपदेश।
यह आदर्श सु आपका, सन्मुख रहे जिनेश।।
पुरुषार्थ हो गौतम स्वामी सा।। 5।।

(297)

गौतम स्वामी की जय बोलें, अपने मन की ग्रंथि खोलें।। टेक।।
तत्त्वज्ञान का कर अभ्यास, छोड़ें दुखमय पर की आश।
स्वानुभूत कर शिवपट खोलें, गौतम स्वामी की जय बोलें।। 1।।
भक्ति भाव से प्रभु गुण गावें, अपनी भाव विशुद्धि बढ़ावें।
नहीं संसार विषै भव डोलें, गौतम स्वामी की जय बोलें।। 2।।
प्रभु ने केवल लक्ष्मी पाई, ऐसी दशा हमें भी भाई।
भोगों में परिणाम न डोले, गौतम स्वामी की जय बोलें।। 3।।
हो निर्ग्रंथ निजातम ध्यावें, कर्म कालिमा सहज नशावें।
प्रभु समान ही हम भी होवें, गौतम स्वामी की जय बोलें।। 4।।

(298)
श्री बीस तीर्थंकर स्तुति

शुभ दर्शन पाया, अहो विदेही नाथ।
आनंद मेरे उर न समाया, अहो विदेही नाथ।। टेक।।
वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर, जगत हितंकर नाथ।
अद्भुत प्रभुता अद्भुत महिमा, अहो विदेही नाथ।।1।।
देहादिक से न्यारा देखा, अपना चैतन्य नाथ।
ज्ञानानंदमय परमानंदमय, अहो विदेही नाथ।।2।।
रागादिक से न्यारा देखा, ज्ञानमात्र निजनाथ।
अनेकान्तमय ध्रुव प्रभुतामय, अहो विदेही नाथ।।3।।
हुई प्रतीति सु प्रभु दर्शन से, मैं भी नहीं अनाथ।
वैभव गुण अनन्तमय मेरा, अहो विदेही नाथ।।4।।
सम्यक् भक्ति भाव से वन्दूँ,अहो–अहो जिननाथ।
हो निर्ग्रन्थ निजातम ध्याऊँ, अहो विदेही नाथ।।5।।

(299)
श्री सीमंधर स्वामी स्तुति

सीमंधर स्वामी निज सीमा में आऊँ।। टेक।।
प्रभो! आपको निज में रमते,देख महा सुख पाऊँ।
यही कामना तुम समान ही,मैं भी निज पद ध्याऊँ।।1।।
रहो देह में फिर भी न्यारे,सार्थक नाम विदेही।
देह रहित निज आतम भाऊँ, विभो! भावना ये ही।।2।।
जग प्रपंच सब मिथ्या भासे,चेतन पद ही साँचा।

हुई उदासी भव-भोगों से,अनुभव में मन राँचा।। 3।।
ज्ञानमात्र ही निज की सीमा,ज्ञाता सहज रहाऊँ।
अधि व्याधि उपाधि रहित हो,चरणों शीश नवाऊँ।।4।।

(300)

सीमंधर स्वामी हो आदर्श हमारे।। टेक।।
महाक्लेशमय भवसागर से तुम ही तारणहारे।
रागादि निःशेष हुए हैं, सब जग जाननहारे।। 1।।
भटके नहीं उपयोग जिनेश्वर, वस्तु स्वरूप विचारें।
अपना शाश्वत रूप निहारें, मिथ्या मोह निवारें।।2।।
मिथ्या कर्त्ताबुद्धि छूटे, दुर्विकल्प परिहारें।
स्वयं स्वयं की करें साधना, ये ही भाव हमारे।।3।।
जिनशासन की हो प्रभावना, जीव सुखी हों सारे।
भक्ति भाव से करें वंदना, फलैं मनोरथ सारे।।4।।

(301)

सीमंधर स्वामी अद्भुत छवि निहारी।
शान्ति सुधा बरसाती अविरल मूरत प्रभु मनहारी।।टेक।।
जग के सुख निस्सार दिखाती, मुक्तिमार्ग सुखकारी।
मिथ्या-मोह विनाशन हारी, ज्ञान कला विस्तारी।।
सीमंधर स्वामी अद्भुत छवि निहारी।। 1।।
प्रभु साक्षी में निश-दिन भाऊँ, भेदज्ञान हितकारी।
अर्न्तमुख हो सहज निहारूँ, ज्ञायक प्रभु अविकारी।।
सीमंधर स्वामी अद्भुत छवि निहारी।। 2।।

ज्ञानमात्र निज सीमा में ही, रहूँ सदा सुखकारी।
कर्म नशावें आत्मध्यान से, आवागमन निवारी।।
सीमंधर स्वामी अद्भुत छवि निहारी।। 3।।
प्रभु गुण गाऊँ निजपद ध्याऊँ, चरणों में बलिहारी।
यही भावना हो प्रभावना, निश-दिन मंगलकारी।।
सीमंधर स्वामी अद्भुत छवि निहारी।। 4।।

(302)

निज सीमा में रहते प्रभु तुम, वस्तु सीमा दर्शाते हो।
हे सीमन्धर! निज सीमा में, थिरता का भाव जगाते हो।।1।।
'आत्मा हूँ' संवेदन करते, पर परमात्मा कहलाते हो।
परमातम पद आधारभूत, आतम स्वरूप दर्शाते हो।।2।।
निज आत्मबोध पाकर स्वामी, निज आत्मा में ही रम जाऊँ।
आंशिक शुद्धि जिससे प्रगटी, अब पूर्ण शुद्धि उससे पाऊँ।।3।।
मैं ज्ञानानन्द स्वभावी हूँ, आनन्दित जीवन प्रगटाऊँ।
मैं करूँ वन्दना हे भगवन्! तुम सम शाश्वत निजप्रभु ध्याऊँ।।4।।

(303)

(लावनी)

हे! सीमन्धर भगवान शरण ली तेरी।
बस ज्ञाता-दृष्टा रहे परिणति मेरी।।टेक।।
निज को बिन जाने नाथ फिरा भव वन में,
सुख की आशा से झपटा उन विषयन में।
ज्यों कफ में मक्खी बैठ पंख लिपटावे,

तब तड़फ-तड़फ दुख में ही प्राण गमावे।।
त्यों इन विषयन में मिली, दुखद भवफेरी।।1।।
मिथ्यात्व रागवश दुखित रहा प्रतिपल ही,
अरु कर्मबन्ध भी रुक न सका पल भर भी।
सौभाग्य आज हे प्रभो! तुम्हें लख पाया,
दुख से मुक्ति का मार्ग आज मैं पाया।।
हो गई प्रतीति न रही मुक्ति में देरी।।2।।
सार्थक सीमन्धर नाम आपका स्वामी,
सीमित निज में हो गये आप विश्रामी।
करते दर्शन कर भव सीमित भवि प्राणी,
फिर आवागमन विमुक्त बने शिवगामी।।
चिरतृप्ति प्रदायक शान्ति छवि प्रभु तेरी।।3।।
आत्माश्रय का फल आज प्रभो लख पाया,
निज में रमने का भाव मुझे उमगाया।
निज वैभव सन्मुख तुच्छ सभी कुछ भासा,
दर्शन से पलट गया परिणति का पासा।।
चैतन्य छवि अन्तर में आज उकेरी।।4।।
हे ज्ञायक के ज्ञायक चैतन्य विहारी,
मैं भाव वन्दना करूँ परम उपकारी।
अपनी सीमा में रहूँ यही वर पाऊँ,
प्रभु भेद भक्ति तज निज अभेद को ध्याऊँ।।
अब अन्तर में ही दिखे मुझे सुख ढेरी।।5।।

(304)

अहो विदेहीनाथ! दर्श कर, आनंद उर छाया।
चिर से बिन पहिचाना, प्रभु अन्तर में दर्शाया।।1।।
देखत हुआ निहाल, मुक्ति का मारग मैं पाया।
सहज उछलता ज्ञान सिन्धु, अन्तर में दिखलाया।।2।।
स्वाश्रय से ही दुःख मिटे, विश्वास प्रभो! आया।
पर से भिन्न सहज आनंदमय, ज्ञायक प्रभु भाया।।3।।
हुई विरक्ति विषयों से, निर्ग्रन्थ रूप भाया।
सहजपने निज में रमने का, भाव सु उमगाया।।4।।
जगे परम पुरुषार्थ प्रभो! चरणों में शिर नाया।
प्रभु प्रसाद सर्वस्व सु-अपना, अपने में पाया।।5।।

(305)

सीमंधर स्वामी, आए शरण तुम्हारी।।टेक।।
महाभाग्य से देखी प्रभु की, शान्तमूर्ति अविकारी।
मोह महातम नष्ट हुआ है, ज्ञानकला विस्तारी।।1।।
अशरण जग में भ्रमते-भ्रमते, दुःख सहे हम भारी।
पंच परावर्तन करते भी, हुए न शिवमगचारी।।2।।
नाथ जगा है भाव हृदय में, तज प्रपंच दुःखकारी।
दीक्षित हो निर्ग्रन्थमार्ग में, हो चैतन्य विहारी।।3।।
रहें परम निरपेक्ष निजातम, ध्यावें मंगलकारी।
अहो! आप सम प्रभुता पावें, चरणों धोक हमारी।।4।।

(306)

(तर्ज: तिहारे ध्यान की मूरत)

वैदेहीनाथ सीमंधर, विराजो मेरे अन्तर में।
अहो तुम ही शरण स्वामी, भटकना व्यर्थ बाहर में।।टेक।।
निरखते नाथ की मुद्रा, मुक्तिपथ सहज दिख जाता।
भेदविज्ञान जगता है, दिखे सुख-शांति अंतर में।।1।।
करें जिनरूप का चिंतन, जगे चिद्रूप की महिमा।
विरक्ति हो सहज जग से, परम तृप्ति हो अंतर में।।2।।
ज्ञान-वैराग्य बढ़ता है, आत्म-प्रभुता विलसती है।
स्वयं पुरुषार्थ भी बढ़ता, ढले उपयोग अंतर में।।3।।
भावना सहज ही होती, दशा निर्ग्रन्थ कब होवे।
सुधारस ज्ञानमय पीते, प्रभो! रम जाऊँ अंतर में।।4।।
प्रगट हो आप सम समता, प्रगट हो आप सम प्रभुता।
नवावें शीश चरणों में, दिखे सर्वस्व अन्तर में।।5।।

(307)

श्री बाहुबली स्तुति

प्रभु बाहुबली ऐसा बल हो।।टेक।।
जीतूँ मैं मोह महाभट को, श्रद्धान सहज ही सम्यक् हो।
निज-पर का भेद-विज्ञान रहे, अन्तर शुद्धातम अनुभव हो।।1।।
जड़रूप सदा आकुलतामय, भोगों का नहिं आकर्षण हो।
अध्रुव अशरण अरु दुःखरूप, परिग्रह प्रति नहिं समर्पण हो।।2।।
हो ज्ञान सहज वैराग्यमयी, वैराग्य ज्ञानमय जिनवर हो।
संकल्प सहित निर्ग्रन्थ मार्ग में, विचरण स्वामी सत्वर हो।।3।।

उपसर्ग परीषह चाहे हों, परिणाम सदा समतामय हों।
दशलक्षण प्रगट सदा वर्तें, आराधन नित मंगलमय हो।।4।।
हो ऐसा निश्चल आत्मध्यान,कर्मों का कर्मों में लय हो।
चैतन्य विभूति ध्रुव अनुपम, प्रगटे भक्ति का प्रभु फल हो।।5।।
प्रभु का स्वरूप मन को भाया, ऐसी ही परिणति मेरी हो।
पुरुषार्थ जगे हो सफल भावना, विभुवर सम्यक् वंदन हो।।6।।

(308)

(तर्ज–रोम–रोम पुलकित हो जाय)

बाहुबली के दर्शन पाय, आनन्द मेरे उर न समाय।
अक्षय निज प्रभुता दरशाय, आनन्द मेरे उर न समाय।।टेक।।
कामदेव पदवी के धारक, धन्य प्रभो दुष्काम निवारक।
निजानन्द निज में विलसाय, आनन्द मेरे उर न समाय।।1।।
तुमने जगत असार विचारा, सारभूत शुद्धात्म चितारा।
पद निर्ग्रन्थ लिया अपनाय, आनन्द मेरे उर न समाय।।2।।
लिपट गई थीं तन से बेलें, नाग बनाकर वामी खेलें।
निश्चल आतम ध्यान लगाय, आनन्द मेरे उर न समाय।।3।।
चक्री ने आ शीश नवाया, कर्म कलंक सभी विनशाया।
अनन्त चतुष्टय प्रभु प्रगटाय, आनन्द मेरे उर न समाय।।4।।
ऋषभदेव से पहले स्वामी, आप हुए सिद्धालयगामी।
भक्तिभाव से शीश नवाय, आनन्द मेरे उर न समाय।।5।।
ऐसा ही बल पाऊँ जिनवर, साधूँ शुद्ध रत्नत्रय सत्वर।
प्रभु साक्षी में निजपद पाय, आनन्द मेरे उर न समाय।।6।।

(309)

बाहुबली के दर्शन करके, दर्शन करके भक्ति करके।
निजानंद निज में पाया, सहजानंद निज में पाया।
परमानंद निज में पाया।। टेक।।
ध्यान दशा शोभे अविकारी,भाव कलंक विनाशनहारी।
अद्भुत कायोत्सर्ग निरखते,निजानंद निज में पाया।। 1।।
ऐसे निश्चल लीन हुये प्रभु,निज में ही स्वाधीन हुये प्रभु।
भक्ति कर चरणों में नमते,निजानंद निज में पाया।। 2।।
कामदेव होकर भी स्वामी,कामजयी होकर अभिरामी।
हुए मुक्त स्वरूप निरखते,निजानंद निज में पाया।। 3।।
जिनवर तुम गुण कैसे गाएँ,भाव भरी हम भावना भाएँ।
प्रभु को नमते निज में नमते,निजानंद निज में पाया।। 4।।

(310)

धन्य-धन्य बाहुबली स्वामी,आत्मबली जय-जय-जय।
जय-जय-जय प्रभु जय-जय-जय ।। टेक।।
कैसे अलौकिक भाव झलकते,
निज महिमा में ही प्रभु रमते।
बाहर आने की फुरसत नहीं है।। आत्मबली.।। 1।।
हार कर वैभव अनेकों ने छोड़ा,
पर प्रभु विजयी हो मुख मोड़ा।
आतम में परिणति को जोड़ा।। आत्मबली.।। 2।।
धन्य भाग्य मैं दर्शन पाया,

उर में फूला नहीं समाया।
मेरा रोम-रोम पुलकाया।। आत्मबली.।। 3।।
अचिन्त्य शक्तिमयी आतम देव,
चिन्मात्र चिन्तामणि रत्न एव।
अंतर में प्रत्यक्ष दिखाय।। आत्मबली.।। 4।।
आज अलौकिक प्रकाश हुआ है,
चैतन्य प्रभु प्रत्यक्ष हुआ है।
आनंद रह्यो छलकाय ।। आत्मबली.।। 5।।
तृप्त हुआ अति तृप्त-तृप्त मैं,
पायो सुखमय सहज तत्त्व मैं।
सहज विनय प्रगटाय ।। आत्मबली.।। 6।।

(311)

बाहुबलि स्वामी, महिमा अपरम्पार।
बाहुबलि स्वामी, प्रभुता अपरम्पार।। टेक।।
दर्शन-ज्ञान-सुख-वीरज सा, दीखे नहिं प्रभु पार।
वीतराग होकर भी प्रभु, करते भव सागर पार।। 1।।
अरे! विराधक दुख पावें, आराधक सुख अपार।
परिणामों का लहें जीव फल, आप रहें अविकार।।2।।
जैन तपस्या दर्शायी प्रभु, चाह न रही लगार।
अहो! आप सम आप जिनेश्वर, वंदन हो अविकार।।3।।

(312)

भरतक्षेत्र के भावि तीर्थंकरों की स्तुति

महापद्मादि भावि तीर्थंकर, कैसे भक्ति करूँ?
भावी दशा लक्ष्य में लेकर, चरणों शीश धरूँ।।टेक।।
जब निज शुद्धातम पहिचाने, निज में तृप्ति लहें।
ऐसे भाव होंय उर में, सब ऐसा सुख लहें।।
जिनवर सम्यक्दर्श विशुद्धि, मैं भी प्रगट करूँ।।भावी.।।1।।
होंय भावना सोलह कारण, तीर्थंकर पद की।
होंगे शुभ कल्याणक भावना सफल होय जग की।।
मैं भी आत्म-साधना का, अनुमोदन नाथ करूँ।।भावी.।।2।।
धन्य घड़ी जब आप धरेंगे, अन्तिम मुनि दीक्षा।
होकर भवि प्रतिबुद्ध, साथ में ही लेंगे दीक्षा।।
यही भावना मैं भी स्वामी, निर्ग्रन्थ रूप धरूँ।।भावी.।।3।।
आत्मलीन हो प्रगटायेंगे, अनंत चतुष्टय नाथ।
मंगल धर्म तीर्थ वर्तेगा, भविजन होंय सनाथ।।
भावी नैगमनय से जिनवर, स्तुति अभी करूँ।।भावी.।।4।।

(313)

धन्य-धन्य जिनधर्म हमारो, भव-सागर से तारण हारो।। टेक।।
धन्य जिनेश्वर धन्य जिनागम, धन्य-धन्य ध्रुव धाम हमारो।।1।।
देव-शास्त्र-गुरु तीन रतन पा, धन्य बनो नर जन्म हमारो।।2।।
वीतराग सर्वज्ञ देव लख, सम्यक् दर्शन उर में धारो।। 3।।

द्वादशांग जिनवाणी हृदय धरि, भेद–विज्ञान कला विस्तारो।।4।।
परम दिगम्बर मुनिवर वन्दूँ, सम्यक् चारित्र रत्न हमारो।।5।।

(314)

आज का दिवस है मंगलकारी, मंगलकारी आनंदकारी।
वीतराग प्रभु मंगलकारी, जिनवाणी है मंगलकारी।।
निर्ग्रंथ गुरुवर मंगलकारी, जिनशासन है मंगलकारी।। टेक।।
सम्यक् दर्शन मंगलकारी, सम्यक् ज्ञान है मंगलकारी।
सम्यक् चारित्र मंगलकारी, धर्म अहिंसा मंगलकारी।। 1।।
जिनमूरति है मंगलकारी, जिनमंदिर है मंगलकारी।
शुद्धातम है मंगलकारी, आराधन है मंगलकारी।। 2।।
सिद्धचक्र का पाठ रचाया, सबके मन में आनंद छाया।
हरषि–हरषि प्रभु के गुण गायें, प्रभु भक्ति हो आनंदकारी।।3।।
सुखी रहें सब जीव जगत में, धर्म प्रेम वृद्धिगंत हो।
नित–नित धर्म महोत्सव होवे, धर्म प्रभावना हो अविकारी।।4।।

(315)

जिनशासनाष्टक

रत्नत्रयमय जिनशासन ही, महावीर का शासन है।
क्या चिंता अध्रुव की तुझको, ध्रुव तेरा सिंहासन है।। टेक।।
द्रव्यदृष्टि से निज को देखे, स्वयं–स्वयं में तृप्ति हो।
भेद–विज्ञान सहज ही वर्ते, किंचित् नहीं आसक्ति हो।।
अद्‌भुत समता हो जीवन में, तत्त्वों का प्रतिभासन है।। 1।।
आर्विभूत सामान्य हुआ है, तिरोभूत हैं सर्व विशेष।

सम्यक् हो परिणमन सहज ही, राग-द्वेष हुए निःशेष।
शासक कोई अन्य नहीं है, सहज रूप अनुशासन है।। 2।।
परम अहिंसा सहज प्रवर्ते, हिंसा का नहीं कोई काम।
निवृत्तिमय परिणति शोभे, पर वृत्ति का नहीं कुछ नाम।।
अहो अलौकिक प्रभुता विलसे, हो विभाव का नाशन है।। 3।।
सम्यक् दर्शन मूल अहो, चारित्र वृक्ष पल्लवित हुआ।
ज्ञान ज्ञान में भासे क्षण-क्षण, दशलक्षण से फलित हुआ।।
है निश्चिंत द्रौपदी सुखमय, नहीं कोई दुःशासन है।। 4।।
सत्य अहिंसा प्राण हमारे, तत्त्वज्ञान का ध्रुव आधार।
जिनभक्ति हो सदा हृदय में, मुक्तिमार्ग का हो विस्तार।।
सहज निशंक सहज निर्भय हैं, मिला हमें जिनशासन है।। 5।।
ध्रुव दृष्टि प्रगटी अंतर में, मोह महातम नाशा है।
ज्ञेय मूढ़ता मिटी सहज ही, ज्ञायक ही प्रतिभासा है।।
भक्ति भाव से होय वंदना, व्यक्त नमोऽस्तु शासन है।। 6।।
सपने में भी नहिं विराधना, और मलिनता हो पावे।
घोर परीषह उपसर्गों में, चित्त नहीं चिगने पावे।।
सावधान होवें अपने में, अप्रमत्त यह शासन है।। 7।।
इष्ट-अनिष्ट न कुछ भी भासे, किंचित् नहीं विषमता हो।
ज्ञायक में संतुष्टि होवे, ज्ञेयों में नहीं ममता हो।।
ज्ञानमयी वैराग्यमयी, आनंदमयी ये शासन है।। 8।।

श्री वर्द्धमान न्यास, अमायन (भिण्ड, म.प्र.) द्वारा प्रकाशित, उपलब्ध सत्साहित्य–

(श्री ब्र. रवीन्द्र जी 'आत्मन्' विरचित)

क्र.	नाम	न्योछावर राशि
1.	अमृत वचन	50/–
2.	स्वानुभव पत्रावलि	50/–
3.	जीवन पथ दर्शन	30/–
4.	जीवन पथ दर्शन (संक्षिप्त)	20/–
5.	लधु बोध कथाएँ	30/–
6.	जिनवर स्तवन	30/–
7.	रत्नत्रय विधान	10/–
8.	चौसठ ऋद्धि विधान	10/–
9.	रत्नत्रय–चौसठ ऋद्धि विधान	10/–
10.	नीति वचन	20/–
11.	उन्नति	25/–
12.	बाल भावना	05/–
13.	वैराग्य पाठ संग्रह	30/–
14.	वैराग्य पाठ संग्रह (सजिल्द)	40/–
	(श्रीमती रूपवती 'किरण' विरचित)	
15.	अनुबंध	20/–
16.	पावन मन	15/–
17.	जैन सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य	30/–
18.	बसंततिलका	25/–
	(श्री भगवत् जैन विरचित)	
19.	पूर्णिमा	22/–

विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से सत्साहित्य आप घर–घर पहुँचाकर नैतिकता के प्रसार में अपना योगदान दें।

सम्पर्क : प्रवीण भैया, अमायन, मोबा. 9926316216